ततः शरैर्महाराज रुक्मपुङ्खैः शिलाशितैः।
भीमं विव्याध संक्रुद्धस्त्रासयानो वरूथिनीम्॥ २२॥

महाराज! तदनन्तर पत्थरपर रगड़कर तेज किये हुए स्वर्णपंखयुक्त बाणोंद्वारा क्रोधमें भरे हुए दुर्योधनने भीमसेनको बींध डाला और पाण्डवसेनाको भयभीत करने लगा॥ २२॥

तौ युध्यमानौ समरे भृशमन्योन्यविक्षतौ।
पुत्रौ ते देवसंकाशौ व्यरोचेतां महाबलौ॥ २३॥

उस समरांगणमें परस्पर युद्ध करके अत्यन्त क्षत-विक्षत हुए आपके दोनों महाबली पुत्र दुर्योधन और भीमसेन देवताओंके समान शोभा पाने लगे॥ २३॥

चित्रसेनं नरव्याघ्रं सौभद्रः परवीरहा।
अविध्यद् दशभिर्बाणैः पुरुमित्रं च सप्तभिः॥ २४॥

शत्रुवीरोंका नाश करनेवाले सुभद्राकुमार अभिमन्युने नरश्रेष्ठ चित्रसेनको दस और पुरुमित्रको सात बाणोंसे बींध डाला॥ २४॥

सत्यव्रतं च सप्तत्या विद्ध्वा शक्रसमो युधि।
नृत्यन्निव रणे वीर आर्तिं नः समजीजनत्॥ २५॥

युद्धमें इन्द्रके समान पराक्रमी वीर अभिमन्युने सत्यव्रतको सत्तर बाणोंसे घायल करके रणांगणमें नृत्य-सा करते हुए हम सब लोगोंको अत्यन्त पीड़ित कर दिया॥ २५॥

तं प्रत्यविध्यद् दशभिश्चित्रसेनः शिलीमुखैः।
सत्यव्रतश्च नवभिः पुरुमित्रश्च सप्तभिः॥ २६॥

तब चित्रसेनने दस, सत्यव्रतने नौ और पुरुमित्रने सात बाणोंसे मारकर अभिमन्युको घायल कर दिया॥ २६॥

स विद्धो विक्षरन् रक्तं शत्रुसंवारणं महत्।
चिच्छेद चित्रसेनस्य चित्रं कार्मुकमार्जुनिः॥ २७॥

उन दोनोंके द्वारा घायल होकर अपने शरीरसे रक्त बहाते हुए अभिमन्युने चित्रसेनके शत्रुनिवारक महान् एवं विचित्र धनुषको काट डाला॥ २७॥

भित्त्वा चास्य तनुत्राणं शरेणोरस्यताडयत्।
ततस्ते तावका वीरा राजपुत्रा महारथाः॥ २८॥
समेत्य युधि संरब्धा विव्यधुर्निशितैः शरैः।
तांश्च सर्वान् शरैस्तीक्ष्णैर्जघान परमास्त्रवित्॥ २९॥

साथ ही चित्रसेनके कवचको विदीर्ण करके उसकी छातीमें भी एक बाण मारा। तदनन्तर आपके वीर एवं महारथी राजकुमार युद्धमें एकत्र हो क्रोधमें भरकर अभिमन्युको तीखे बाणोंसे बेधने लगे; परंतु उत्तम अस्त्रोंके ज्ञाता अभिमन्युने अपने पैने बाणोंद्वारा उन सबको घायल कर दिया॥ २८-२९॥

तस्य दृष्ट्वा तु तत् कर्म परिवव्रुः सुतास्तव।
दहन्तं समरे सैन्यं वने कक्षं यथोल्बणम्॥ ३०॥

जैसे वनमें लगी हुई प्रचण्ड आग तृणसमूहको अनायास ही जलाकर भस्म कर डालती है, उसी प्रकार अभिमन्यु उस समरांगणमें कौरवसेनाको दग्ध कर रहा था। उसके इस महान् कर्मको देखकर आपके पुत्रोंने उसे सब ओरसे घेर लिया॥ ३०॥

अपेतशिशिरे काले समिद्धमिव पावकम्।
अत्यरोचत सौभद्रस्तव सैन्यानि नाशयन्॥ ३१॥

महाराज! आपकी सेनाका संहार करता हुआ सुभद्राकुमार अभिमन्यु ग्रीष्म-ऋतुमें प्रज्वलित हुई प्रचण्ड अग्निसे भी बढ़कर शोभा पा रहा था॥ ३१॥

तत् तस्य चरितं दृष्ट्वा पौत्रस्तव विशाम्पते।
लक्ष्मणोऽभ्यपतत् तूर्णं सात्वतीपुत्रमाहवे॥ ३२॥

प्रजानाथ! उसका वह पराक्रम देखकर आपका पौत्र लक्ष्मण तुरंत ही युद्धमें सुभद्राकुमारका सामना करनेके लिये आ पहुँचा॥ ३२॥

अभिमन्युस्तु संक्रुद्धो लक्ष्मणं शुभलक्षणम्।
विव्याध निशितैः षड्भिः सारथिं च त्रिभिः शरैः॥ ३३॥

तब क्रोधमें भरे हुए अभिमन्युने उत्तम लक्षणोंसे युक्त लक्ष्मणको छः और उसके सारथिको तीन तीखे बाणोंसे बींध डाला॥ ३३॥

तथैव लक्ष्मणो राजन् सौभद्रं निशितैः शरैः।
अविध्यत महाराज तदद्भुतमिवाभवत्॥ ३४॥

राजन्! इसी प्रकार लक्ष्मणने भी सुभद्राकुमारको अपने तीखे बाणोंसे घायल कर दिया। महाराज! वह अद्भुत-सी बात हुई॥ ३४॥

तस्याश्वांश्चतुरो हत्वा सारथिं च महाबलः।
अभ्यद्रवत सौभद्रो लक्ष्मणं निशितैः शरैः॥ ३५॥

यह देख महाबली सुभद्राकुमारने लक्ष्मणके चारों घोड़ों और सारथिको मारकर तीखे बाणोंद्वारा उसपर भी आक्रमण किया॥ ३५॥

हताश्वे तु रथे तिष्ठँल्लक्ष्मणः परवीरहा।
शक्तिं चिक्षेप संक्रुद्धः सौभद्रस्य रथं प्रति॥ ३६॥

शत्रुवीरोंका नाश करनेवाले लक्ष्मणने उस अश्वहीन रथपर खड़े-खड़े ही क्रोधमें भरकर अभिमन्युके रथकी ओर एक शक्ति चलायी॥ ३६॥

तामापतन्तीं सहसा घोररूपां दुरासदाम्।
अभिमन्युः शरैस्तीक्ष्णैश्चिच्छेद भुजगोपमाम्॥ ३७॥

उस भयंकर एवं दुर्जय सर्पिणीके समान शक्तिको सहसा अपनी ओर आते देख अभिमन्युने तीखे बाणोंद्वारा

उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले॥ ३७॥

ततः स्वरथमारोप्य लक्ष्मणं गौतमस्तदा।
अपोवाह रथेनाजौ सर्वसैन्यस्य पश्यतः॥ ३८॥

तब कृपाचार्य सब सैनिकोंके देखते-देखते लक्ष्मणको अपने रथपर बिठाकर युद्धभूमिमें वहाँसे अन्यत्र हटा ले गये॥

ततः समाकुले तस्मिन् वर्तमाने महाभये।
अभ्यद्रवञ्जिघांसन्तः परस्परवधैषिणः॥ ३९॥

तदनन्तर उस महाभयंकर संघर्षमें सब योद्धा विपक्षीको मारनेकी इच्छा रखकर एक-दूसरेका वध करनेके लिये परस्पर टूट पड़े॥ ३९॥

तावकाश्च महेष्वासाः पाण्डवाश्च महारथाः।
जुह्वन्तः समरे प्राणान् निजघ्नुरितरेतरम्॥ ४०॥

आपके और पाण्डवपक्षके महाधनुर्धर महारथी वीर समरांगणमें प्राणोंकी आहुति देते हुए एक-दूसरेको मार रहे थे॥ ४०॥

मुक्तकेशा विकवचा विरथाश्छिन्नकार्मुकाः।
बाहुभिः समयुध्यन्त सृंजयाः कुरुभिः सह॥ ४१॥

कवच और रथसे रहित हो धनुष कट जानेपर अपने बाल खोले हुए कितने ही सृंजय वीर कौरवोंके साथ केवल भुजाओंद्वारा मल्लयुद्ध कर रहे थे॥ ४१॥

ततो भीष्मो महाबाहुः पाण्डवानां महात्मनाम्।
सेनां जघान संक्रुद्धो दिव्यैरस्त्रैर्महाबलः॥ ४२॥

तब महाबली महाबाहु भीष्म अत्यन्त कुपित हो अपने दिव्यास्त्रोंद्वारा महामना पाण्डवोंकी सेनाका संहार करने लगे॥ ४२॥

हतैरश्वैर्गजैस्तत्र नरैरश्वैश्च पातितैः।
रथिभिः सादिभिश्चैव समास्तीर्यत मेदिनी॥ ४३॥

उस समय वहाँ मारे और गिराये गये हाथी, घोड़े, मनुष्य, रथी और सवारोंद्वारा सारी पृथ्वी आच्छादित हो गयी थी॥ ४३॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि द्वन्द्वयुद्धे त्रिसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७३॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें द्वन्द्वयुद्धविषयक तिहत्तरवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ७३॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका १ श्लोक मिलाकर कुल ४४ श्लोक हैं।]

चतुःसप्ततितमोऽध्यायः

सात्यकि और भूरिश्रवाका युद्ध, भूरिश्रवाद्वारा सात्यकिके दस पुत्रोंका वध, अर्जुनका पराक्रम तथा पाँचवें दिनके युद्धका उपसंहार

संजय उवाच

अथ राजन् महाबाहुः सात्यकिर्युद्धदुर्मदः।
विकृष्य चापं समरे भारसाहमनुत्तमम्॥ १॥
प्रामुञ्चत् पुङ्खसंयुक्तान् शरानाशीविषोपमान्।

संजय कहते हैं—राजन्! महाबाहु सात्यकि युद्धमें उन्मत्त होकर लड़नेवाले थे। उन्होंने युद्धमें भार सहन करनेमें समर्थ और परम उत्तम धनुषको बलपूर्वक खींचकर विषधर सर्पके समान भयानक पंखयुक्त बाण छोड़े॥ १½॥

प्रगाढं लघु चित्रं च दर्शयन् हस्तलाघवम्॥ २॥
(यत् तत् सख्युस्तु पूर्वेण अर्जुनादुपशिक्षितम्।)

बाणोंको छोड़ते समय सात्यकिने अपने उस प्रगाढ़, शीघ्रकारी और विचित्र हस्तलाघवका परिचय दिया, जिसे उन्होंने पूर्वकालमें अपने सखा अर्जुनसे सीखा था॥ २॥

तस्य विक्षिपतश्चापं शरानन्यांश्च मुञ्चतः।
आददानस्य भूयश्च संदधानस्य चापरान्॥ ३॥
क्षिपतश्च परांस्तस्य रणे शत्रून् विनिघ्नतः।
ददृशे रूपमत्यर्थं मेघस्येव प्रवर्षतः॥ ४॥

जब वे धनुषको खींचते, दूसरे-दूसरे बाण छोड़ते, फिर नये-नये बाण हाथमें लेते, धनुषपर रखते, उन्हें शत्रुओंपर चलाते और उनका संहार करते थे, उस समय वर्षा करनेवाले मेघके समान उनका स्वरूप अत्यन्त अद्भुत दिखायी देता था॥ ३-४॥

तमुदीर्यन्तमालोक्य राजा दुर्योधनस्ततः।
रथानामयुतं तस्य प्रेषयामास भारत॥ ५॥

भारत! उस समय उन्हें युद्धमें बढ़ते देख राजा दुर्योधनने उनका सामना करनेके लिये दस हजार रथियोंकी सेना भेजी॥ ५॥

तांस्तु सर्वान् महेष्वासान् सात्यकिः सत्यविक्रमः।
जघान परमेष्वासो दिव्येनास्त्रेण वीर्यवान्॥ ६॥

परंतु श्रेष्ठ धनुर्धर सत्यपराक्रमी शक्तिशाली सात्यकिने उन समस्त धनुर्धर योद्धाओंको अपने दिव्यास्त्रके द्वारा मार डाला॥ ६॥

स कृत्वा दारुणं कर्म प्रगृहीतशरासनः।
आससाद ततो वीरो भूरिश्रवसमाहवे॥ ७॥

यह भयंकर कर्म करके फिर धनुष लिये वीर सात्यकिने युद्धस्थलमें भूरिश्रवापर आक्रमण किया॥ ७॥

स हि संदृश्य सेनां ते युयुधानेन पातिताम्।
अभ्यधावत संक्रुद्धः कुरूणां कीर्तिवर्धनः॥ ८॥

सात्यकिने आपकी सेनाको मार गिराया है, यह देखकर कुरुकुलकी कीर्ति बढ़ानेवाला भूरिश्रवा अत्यन्त कुपित हो उनकी ओर दौड़ा॥ ८॥

इन्द्रायुधसवर्णं तु विस्फार्य सुमहद् धनुः।
सृष्टवान् वज्रसंकाशान् शरानाशीविषोपमान्॥ ९॥
सहस्त्रशो महाराज दर्शयन् पाणिलाघवम्।

उसका विशाल धनुष इन्द्रधनुषके समान बहुरंगा था। महाराज! उसे खींचकर भूरिश्रवाने अपने हस्त-लाघवका परिचय देते हुए वज्रके समान दुःसह और विषैले सर्पोंके तुल्य भयंकर सहस्रों बाण छोड़े॥ ९ १/२॥

शरांस्तान् मृत्युसंस्पर्शान् सात्यकेश्च पदानुगाः॥ १०॥
न विषेहुस्तदा राजन् दुद्रुवुस्ते समन्ततः।
विहाय सात्यकिं राजन् समरे युद्धदुर्मदम्॥ ११॥

उन बाणोंका स्पर्श मृत्युके तुल्य था। राजन्! उस समय सात्यकिके साथ आये हुए सैनिक उन सायकोंका वेग न सह सके। नरेश्वर! युद्धभूमिमें वे रण-दुर्मद सात्यकिको वहीं छोड़कर सब ओर भाग निकले॥

तं दृष्ट्वा युयुधानस्य सुता दश महाबलाः।
महारथाः समाख्याताश्चित्रवर्मायुधध्वजाः॥ १२॥
समासाद्य महेष्वासं भूरिश्रवसमाहवे।
ऊचुः सर्वे सुसंरब्धा यूपकेतुं महारणे॥ १३॥

सात्यकिके दस महाबलवान् पुत्र थे। उनके कवच, आयुध और ध्वज सभी विचित्र थे। वे सब-के-सब महारथी कहे जाते थे। वे युद्धस्थलमें यूपचिह्नित ध्वजवाले महारथी भूरिश्रवाको देखकर उसके पास आये और अत्यन्त क्रोधपूर्वक उससे इस प्रकार बोले—॥ १२-१३॥

भो भोः कौरवदायाद सहास्माभिर्महाबल।
एहि युध्यस्व संग्रामे समस्तैः पृथगेव वा॥ १४॥

'महाबली कौरवपुत्र! आओ, इस संग्रामभूमिमें हम सब लोगोंके साथ अथवा पृथक्-पृथक् एक-एकके साथ युद्ध करो॥ १४॥

अस्मान् वा त्वं पराजित्य यशः प्राप्नुहि संयुगे।
वयं वा त्वां पराजित्य प्रीतिं धास्यामहे पितुः॥ १५॥

'या तो तुम युद्धमें हमें पराजित करके यश प्राप्त करो अथवा हम तुम्हें परास्त करके पिताकी प्रसन्नता बढ़ायेंगे'॥ १५॥

एवमुक्तस्तदा शूरैस्तानुवाच महाबलः।
वीर्यश्लाघी नरश्रेष्ठस्तान् दृष्ट्वा समवस्थितान्॥ १६॥

तब उन शूरवीरोंके ऐसा कहनेपर अपने पराक्रमकी श्लाघा करनेवाला महाबली नरश्रेष्ठ भूरिश्रवा उन्हें युद्धके लिये उपस्थित देख उनसे इस प्रकार बोला—॥ १६॥

साध्विदं कथ्यते वीरा यद्येवं मतिरद्य वः।
युध्यध्वं सहिता यत्ता निहनिष्यामि वो रणे॥ १७॥

'वीरो! यदि तुम्हारा ऐसा विचार है तो तुमलोगोंने यह बड़ी अच्छी बात कही है। तुम सब लोग एक साथ सावधान होकर यत्नपूर्वक युद्ध करो। मैं इस रणभूमिमें तुम सब लोगोंको मार गिराऊँगा'॥ १७॥

एवमुक्ता महेष्वासास्ते वीराः क्षिप्रकारिणः।
महता शरवर्षेण अभ्यधावन्नरिंदमम्॥ १८॥

भूरिश्रवाके ऐसा कहनेपर शीघ्रता करनेवाले उन महाधनुर्धर वीरोंने बड़ी भारी बाण-वर्षा करते हुए शत्रुदमन भूरिश्रवापर आक्रमण किया॥ १८॥

सोऽपराह्णे महाराज संग्रामस्तुमुलोऽभवत्।
एकस्य च बहूनां च समेतानां रणाजिरे॥ १९॥

महाराज! अपराह्णकालमें उस समरांगणमें एकत्र हुए बहुत-से वीरोंके साथ एक वीरका भयंकर युद्ध प्रारम्भ हुआ॥ १९॥

तमेकं रथिनां श्रेष्ठं शरैस्ते समवाकिरन्।
प्रावृषीव यथा मेरुं सिषिचुर्जलदा नृप॥ २०॥

नरेश्वर! जैसे मेघ वर्षाकालमें मेरुपर्वतपर जलकी बूँदें बरसाते हैं, उसी प्रकार उन सबने मिलकर रथियोंमें श्रेष्ठ एकमात्र भूरिश्रवापर बाणोंकी वर्षा आरम्भ की॥ २०॥

तैस्तु मुक्तान् शरान् घोरान् यमदण्डाशनिप्रभान्।
असम्प्राप्तानसम्भ्रान्तश्चिच्छेदाशु महारथः॥ २१॥

उनके छोड़े हुए यमदण्ड और वज्रके समान प्रकाशित होनेवाले भयंकर बाणोंको अपने पास पहुँचनेसे पहले ही महारथी भूरिश्रवाने बिना किसी घबराहटके शीघ्रतापूर्वक काट गिराया॥ २१॥

तत्राद्भुतमपश्याम सौमदत्तेः पराक्रमम्।
यदेको बहुभिर्युद्धे समसज्जदभीतवत्॥ २२॥

वहाँ हम सबने सोमदत्तपुत्र भूरिश्रवाका अद्भुत पराक्रम देखा। वह अकेला होनेपर भी बहुत-से वीरोंके साथ निर्भीक-सा युद्ध करता रहा॥ २२॥

विसृज्य शरवृष्टिं तां दश राजन् महारथाः।
परिवार्य महाबाहुं निहन्तुमुपचक्रमुः॥ २३॥

राजन्! उन दस महारथियोंने वहाँ बाणोंकी वर्षा करके महाबाहु भूरिश्रवाको चारों ओरसे घेरकर उसे मार डालनेकी तैयारी की॥ २३॥

सौमदत्तिस्ततः क्रुद्धस्तेषां चापानि भारत।
चिच्छेद समरे राजन् युध्यमानो महारथैः॥ २४॥

भरतवंशीनरेश! उस समय क्रोधमें भरे हुए भूरिश्रवाने उन महारथियोंके साथ युद्ध करते हुए ही समरभूमिमें उनके धनुष काट डाले॥ २४॥

अथैषां छिन्नधनुषां शरैः संनतपर्वभिः।
चिच्छेद समरे राजन् शिरांसि भरतर्षभ॥ २५॥

भरतश्रेष्ठ! इनके धनुष कट जानेपर झुकी हुई गाँठवाले बाणोंसे भूरिश्रवाने उनके मस्तक भी समर-भूमिमें काट गिराये॥ २५॥

ते हता न्यपतन् राजन् वज्रभग्ना इव द्रुमाः।
तान् दृष्ट्वा निहतान् वीरो रणे पुत्रान् महाबलान्॥ २६॥
वार्ष्णेयो विनदन् राजन् भूरिश्रवसमभ्ययात्।

राजन्! वे दसों वीर वज्रके मारे हुए वृक्षोंकी भाँति रणभूमिमें मरकर गिर पड़े। उन महाबली पुत्रोंको संग्राममें मारा गया देख वीरवर सात्यकिने गर्जना करते हुए वहाँ भूरिश्रवापर आक्रमण किया॥ २६½॥

रथं रथेन समरे पीडयित्वा महाबलौ॥ २७॥
तावन्योन्यं हि समरे निहत्य रथवाजिनः।
विरथावभिवल्गन्तौ समेयातां महारथौ॥ २८॥

वे दोनों महाबली समरांगणमें अपने रथके द्वारा दूसरेके रथको पीड़ा देने लगे। उन्होंने आपसमें एक-दूसरेके रथ और घोड़ोंको नष्ट कर दिया। इस प्रकार रथहीन हुए वे दोनों महारथी उछलते-कूदते हुए एक-दूसरेका सामना करने लगे॥ २७-२८॥

प्रगृहीतमहाखड्गौ तौ चर्मवरधारिणौ।
शुशुभाते नरव्याघ्रौ युद्धाय समवस्थितौ॥ २९॥

वे दोनों पुरुषसिंह हाथमें बड़ी-बड़ी तलवारें और सुन्दर ढालें लिये युद्धके लिये उद्यत होकर बड़ी शोभा पा रहे थे॥ २९॥

(खड्गप्रहारैः सुभृशं जघ्नतुश्च परस्परम्।
पीडितौ खड्गघाताभ्यां स्रवद् रक्तौ क्षितौ भृशम्॥
शुशुभाते महावीर्यावुभौ समरदुर्जयौ।
असृगुक्षितसर्वाङ्गौ पुष्पिताविव किंशुकौ॥)

वे तलवारोंकी मारसे एक-दूसरेको अत्यन्त घायल करने लगे। खड्गके आघातसे पीड़ित हो दोनों ही पृथ्वीपर रक्त बहाने लगे। उनके सारे अंग रक्तरंजित हो रहे थे। अतः वे रणदुर्जय महापराक्रमी वीर खिले हुए दो पलाश-वृक्षोंकी भाँति अत्यन्त सुशोभित होने लगे।

ततः सात्यकिमभ्येत्य निस्त्रिंशवरधारिणम्।
भीमसेनस्त्वरन् राजन् रथमारोपयत् तदा॥ ३०॥

राजन्! तदनन्तर उत्तम खड्ग धारण करनेवाले सात्यकिके पास पहुँचकर भीमसेनने उस समय तुरंत उन्हें अपने रथपर बिठा लिया॥ ३०॥

तवापि तनयो राजन् भूरिश्रवसमाहवे।
आरोपयद् रथं तूर्णं पश्यतां सर्वधन्विनाम्॥ ३१॥

महाराज! इसी प्रकार आपके पुत्र दुर्योधनने भी युद्धस्थलमें समस्त धनुर्धरोंके देखते-देखते भूरिश्रवाको तुरंत अपने रथपर चढ़ा लिया॥ ३१॥

तस्मिंस्तथा वर्तमाने रणे भीष्मं महारथम्।
अयोधयन्त संरब्धाः पाण्डवा भरतर्षभ॥ ३२॥

भरतश्रेष्ठ! उस समय क्रोधमें भरे हुए पाण्डव उस युद्धमें महारथी भीष्मके साथ युद्ध करने लगे॥ ३२॥

लोहितायति चादित्ये त्वरमाणो धनंजयः।
पञ्चविंशतिसाहस्रान् निजघान महारथान्॥ ३३॥

जब सूर्य अस्ताचलके पास पहुँचकर लाल होने लगे, उस समय अर्जुनने बड़ी उतावलीके साथ बाण-वर्षा करके पचीस हजार महारथियोंको मार डाला॥

ते हि दुर्योधनादिष्टास्तदा पार्थनिबर्हणे।
सम्प्राप्यैव गता नाशं शलभा इव पावकम्॥ ३४॥

वे सब-के-सब दुर्योधनकी आज्ञासे अर्जुनका संहार करनेके लिये आये थे। परंतु वे उस समय आगमें गिरे हुए पतंगोंकी भाँति उनके पास आते ही नष्ट हो गये॥

ततो मत्स्याः केकयाश्च धनुर्वेदविशारदाः।
परिवव्रुस्तदा पार्थं सहपुत्रं महारथम्॥ ३५॥

तदनन्तर धनुर्विद्यामें प्रवीण मत्स्य और केकयदेशके वीर अभिमन्यु आदि पुत्रोंसे युक्त महारथी अर्जुनको घेरकर कौरवोंसे युद्धके लिये खड़े हो गये॥ ३५॥

एतस्मिन्नेव काले तु सूर्येऽस्तमुपगच्छति।
सर्वेषां चैव सैन्यानां प्रमोहः समजायत॥ ३६॥

इसी समय सूर्य अस्ताचलको चले गये। तब आपके समस्त सैनिकोंपर मोह छा गया॥ ३६॥

अवहारं ततश्चक्रे पिता देवव्रतस्तव।
संध्याकाले महाराज सैन्यानां श्रान्तवाहनः॥ ३७॥

महाराज! तब आपके ताऊ देवव्रतने संध्याके समय अपनी सेनाको पीछे हटा लिया। उनके वाहन बहुत थक गये थे॥ ३७॥

पाण्डवानां कुरूणां च परस्परसमागमे।
ते सेने भृशसंविग्ने ययतुः स्वं निवेशनम्॥ ३८॥

पाण्डवों और कौरवोंके पारस्परिक संघर्षमें दोनों ही सेनाएँ अत्यन्त उद्विग्न हो उठी थीं। अतः वे अपनी-अपनी छावनीको चली गयीं॥ ३८॥

ततः स्वशिबिरं गत्वा न्यविशंस्तत्र भारत।
पाण्डवाः सृंजयैः सार्धं कुरवश्च यथाविधि॥ ३९॥

भारत! तदनन्तर सृंजयोंसहित पाण्डव और कौरव अपने शिविरमें जाकर वहाँ विधिपूर्वक विश्राम करने लगे॥ ३९॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि पञ्चमदिवसावहारे चतुःसप्ततितमोध्यायः॥ ७४॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें पाँचवें दिवसके युद्धकी समाप्तिविषयक चौहत्तरवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ७४॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठके २½ श्लोक मिलाकर कुल ४१½ श्लोक हैं।]

पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः

छठे दिनके युद्धका आरम्भ, पाण्डव तथा कौरव-सेनाका क्रमशः मकरव्यूह एवं क्रौंचव्यूह बनाकर युद्धमें प्रवृत्त होना

संजय उवाच

ते विश्रम्य ततो राजन् सहिताः कुरुपाण्डवाः।
व्यतीतायां तु शर्वर्यां पुनर्युद्धाय निर्ययुः॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! रातको विश्राम करनेके अनन्तर जब वह रात बीत गयी, तब कौरव और पाण्डव पुनः युद्धके लिये साथ-साथ निकले॥ १॥

तत्र शब्दो महानासीत् तव तेषां च भारत।
युज्यतां रथमुख्यानां कल्प्यतां चैव दन्तिनाम्॥ २॥
संनह्यतां पदातीनां हयानां चैव भारत।
शङ्खदुन्दुभिनादश्च तुमुलः सर्वतोऽभवत्॥ ३॥

भारत! उस समय वहाँ आपके और पाण्डव-पक्षके सैनिकोंमें बड़ा कोलाहल मचा। कुछ लोग श्रेष्ठ रथोंको जोत रहे थे, कुछ लोग हाथियोंको सुसज्जित करते थे, कहीं पैदल सैनिक और घोड़े कवच बाँधकर साज-बाज धारण कर तैयार किये जा रहे थे। शंखों और दुन्दुभियोंकी ध्वनि बड़े जोर-जोरसे हो रही थी। इन सबका सम्मिलित शब्द सब ओर गूँज उठा था। २-३॥

ततो युधिष्ठिरो राजा धृष्टद्युम्नमभाषत।
व्यूहं व्यूह महाबाहो मकरं शत्रुनाशनम्॥ ४॥

तदनन्तर राजा युधिष्ठिरने धृष्टद्युम्नसे कहा—'महाबाहो! तुम शत्रुनाशक मकरव्यूहकी रचना करो'॥ ४॥

एवमुक्तस्तु पार्थेन धृष्टद्युम्नो महारथः।
व्यादिदेश महाराज रथिनो रथिनां वरः॥ ५॥

महाराज! कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरके ऐसा कहनेपर रथियोंमें श्रेष्ठ महारथी धृष्टद्युम्नने अपने समस्त रथियोंको मकरव्यूह बनानेके लिये आज्ञा दे दी॥ ५॥

शिरोऽभूद् द्रुपदस्तस्य पाण्डवश्च धनंजयः।
चक्षुषी सहदेवश्च नकुलश्च महारथः॥ ६॥

उसके मस्तकके स्थानपर राजा द्रुपद तथा पाण्डुपुत्र अर्जुन खड़े हुए। महारथी नकुल और सहदेव नेत्रोंके स्थानमें स्थित हुए॥ ६॥

तुण्डमासीन्महाराज भीमसेनो महाबलः।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च राक्षसश्च घटोत्कचः॥ ७॥
सात्यकिर्धर्मराजश्च व्यूहग्रीवां समास्थिताः।

महाराज! महाबली भीमसेन उसके मुखकी जगह खड़े हुए। सुभद्राकुमार अभिमन्यु, द्रौपदीके पाँच पुत्र, राक्षस घटोत्कच, सात्यकि और धर्मराज युधिष्ठिर—ये उस मकरव्यूहके ग्रीवाभागमें स्थित हुए॥ ७½॥

पृष्ठमासीन्महाराज विराटो वाहिनीपतिः॥ ८॥
धृष्टद्युम्नेन सहितो महत्या सेनयावृतः।

नरेश्वर! सेनापति विराट विशाल सेनासे घिरकर धृष्टद्युम्नके साथ उस व्यूहके पृष्ठ भागमें खड़े हुए॥

केकया भ्रातरः पञ्च वामपार्श्वं समाश्रिताः॥ ९॥
धृष्टकेतुर्नरव्याघ्रश्चेकितानश्च वीर्यवान्।
दक्षिणं पक्षमाश्रित्य स्थितौ व्यूहस्य रक्षणे॥ १०॥

पाँच भाई केकयराजकुमार उनके वामपार्श्वमें खड़े थे। नरश्रेष्ठ धृष्टकेतु और पराक्रमी चेकितान—ये व्यूहके दाहिने भागमें स्थित होकर उसकी रक्षा करते थे॥ ९-१०॥

पादयोस्तु महाराज स्थितः श्रीमान् महारथः।
कुन्तिभोजः शतानीको महत्या सेनयावृतः॥ ११॥

महाराज! उसके दोनों पैरोंकी जगह महारथी

श्रीमान् कुन्तिभोज और विशाल सेनासहित शतानीक खड़े थे॥ ११॥

शिखण्डी तु महेष्वासः सोमकैः संवृतो बली।
इरावांश्च ततः पुच्छे मकरस्य व्यवस्थितौ॥ १२॥

सोमकोंसे घिरा हुआ महाधनुर्धर शिखण्डी और बलवान् इरावान्—ये दोनों उस मकरव्यूहके पुच्छ-भागमें खड़े थे॥ १२॥

एवमेतं महाव्यूहं व्यूह्य भारत पाण्डवाः।
सूर्योदये महाराज पुनर्युद्धाय दंशिताः॥ १३॥

महाराज! भरतनन्दन! इस प्रकार उस महान् मकरव्यूहकी रचना करके पाण्डव कवच बाँधकर सूर्योदयके समय पुनः युद्धके लिये तैयार हो गये॥ १३॥

कौरवानभ्ययुस्तूर्णं हस्त्यश्वरथपत्तिभिः।
समुच्छ्रितैर्ध्वजैश्छत्रैः शस्त्रैश्च विमलैः शितैः॥ १४॥

ऊँची-ऊँची ध्वजाओं, छत्रों तथा चमकीले और तीखे अस्त्र-शस्त्रोंसे युक्त हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिकोंकी चतुरंगिणी सेनाके साथ पाण्डवोंने कौरवोंपर शीघ्रतापूर्वक आक्रमण किया॥ १४॥

व्यूढं दृष्ट्वा तु तत् सैन्यं पिता देवव्रतस्तव।
क्रौञ्चेन महता राजन् प्रत्यव्यूहत वाहिनीम्॥ १५॥

राजन्! तब आपके ताऊ देवव्रतने पाण्डवोंका वह व्यूह देखकर उसके मुकाबिलेमें अपनी सेनाको महान् क्रौंचव्यूहके रूपमें संगठित किया॥ १५॥

तस्य तुण्डे महेष्वासो भारद्वाजो व्यरोचत।
अश्वत्थामा कृपश्चैव चक्षुरासीन्नरेश्वर॥ १६॥

उसकी चोंचके स्थानमें महाधनुर्धर द्रोणाचार्य सुशोभित हुए। नरेश्वर! अश्वत्थामा और कृपाचार्य नेत्रोंके स्थानमें खड़े हुए॥ १६॥

कृतवर्मा तु सहितः काम्बोजवरबाह्लिकैः।
शिरस्यासीन्नरश्रेष्ठः श्रेष्ठः सर्वधनुष्मताम्॥ १७॥

काम्बोज और बाह्लिकदेशके उत्तम सैनिकोंके साथ समस्त धनुर्धरोंमें श्रेष्ठ नरप्रवर कृतवर्मा व्यूहके शिरोभागमें स्थित हुए॥ १७॥

ग्रीवायां शूरसेनश्च तव पुत्रश्च मारिष।
दुर्योधनो महाराज राजभिर्बहुभिर्वृतः॥ १८॥

आर्य! महाराज! राजा शूरसेन तथा आपका पुत्र दुर्योधन—ये दोनों बहुत-से राजाओंके साथ क्रौंचव्यूहके ग्रीवाभागमें स्थित हुए॥ १८॥

प्राग्ज्योतिषस्तु सहितो मद्रसौवीरकेकयैः।
उरस्यभून्नरश्रेष्ठ महत्या सेनयावृतः॥ १९॥

नरश्रेष्ठ! मद्र, सौवीर और केकय योद्धाओंके साथ विशाल सेनासे घिरे हुए प्राग्ज्योतिषपुरके राजा भगदत्त उस व्यूहके वक्षःस्थलमें स्थित हुए॥ १९॥

स्वसेनया च सहितः सुशर्मा प्रस्थलाधिपः।
वामपक्षं समाश्रित्य दंशितः समवस्थितः॥ २०॥

प्रस्थलाधिपति (त्रिगर्तराज) सुशर्मा कवच धारण करके अपनी सेनाके साथ व्यूहके वामपक्षका आश्रय लेकर खड़े थे॥ २०॥

तुषारा यवनाश्चैव शकाश्च सह चूचुपैः।
दक्षिणं पक्षमाश्रित्य स्थिता व्यूहस्य भारत॥ २१॥

भारत! तुषार, यवन, शक और चूचुपदेशके सैनिक व्यूहके दाहिने पक्षका आश्रय लेकर स्थित हुए॥

श्रुतायुश्च शतायुश्च सौमदत्तिश्च मारिष।
व्यूहस्य जघने तस्थू रक्षमाणाः परस्परम्॥ २२॥

मारिष! श्रुतायु, शतायु तथा सोमदत्तकुमार भूरिश्रवा—ये परस्पर एक-दूसरेकी रक्षा करते हुए व्यूहके जघनप्रदेशमें स्थित हुए॥ २२॥

ततो युद्धाय संजग्मुः पाण्डवाः कौरवैः सह।
सूर्योदये महाराज ततो युद्धमभून्महत्॥ २३॥

महाराज! तत्पश्चात् सूर्योदयकालमें पाण्डवोंने कौरवोंके साथ युद्धके लिये उनकी सेनापर आक्रमण किया; फिर तो बड़ा भयंकर युद्ध प्रारम्भ हुआ॥ २३॥

प्रतीयू रथिनो नागा नागांश्च रथिनो ययुः।
हयारोहान् रथारोहा रथिनश्चापि सादिनः॥ २४॥

रथियोंको ओर हाथी और हाथियोंकी ओर रथी बढ़े। घुड़सवारोंपर रथारोही तथा रथारोहियोंपर घुड़-सवार चढ़ आये॥ २४॥

सादिनश्च हयान् राजन् रथिनश्च महारणे।
हस्त्यारोहान् हयारोहा रथिनः सादिनस्तथा॥ २५॥

राजन्! उस महायुद्धमें घुड़सवार योद्धा घुड़सवारों तथा रथियोंपर भी चढ़ दौड़े। इसी प्रकार अश्वारोही हाथीसवारों तथा रथियोंपर भी टूट पड़े॥ २५॥

रथिनः पत्तिभिः सार्धं सादिनश्चापि पत्तिभिः।
अन्योन्यं समरे राजन् प्रत्यधावन्नमर्षिताः॥ २६॥

रथी और घुड़सवार दोनों ही पैदल सेनाओंपर आक्रमण करने लगे। राजन्! इस प्रकार अमर्षमें भरे हुए ये समस्त सैनिक एक-दूसरेपर धावा करने लगे॥

भीमसेनार्जुनयमैर्गुप्ता चान्यैर्महारथैः।
शुशुभे पाण्डवी सेना नक्षत्रैरिव शर्वरी॥ २७॥

भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा अन्य महारथियोंसे सुरक्षित हुई पाण्डवसेना नक्षत्रोंसे रात्रिकी भाँति सुशोभित हो रही थी॥ २७॥

तथा भीष्मकृपद्रोणशल्यदुर्योधनादिभिः।
तवापि च बभौ सेना ग्रहैर्द्यौरिव संवृता॥ २८॥

इसी प्रकार भीष्म, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, शल्य और दुर्योधन आदिसे घिरी हुई आपकी सेना ग्रहोंसे आकाशकी भाँति शोभा पा रही थी॥ २८॥

भीमसेनस्तु कौन्तेयो द्रोणं दृष्ट्वा पराक्रमी।
अभ्ययाज्जवनैरश्वैर्भारद्वाजस्य वाहिनीम्॥ २९॥

पराक्रमी कुन्तीकुमार भीमसेनने द्रोणाचार्यको देखकर वेगशाली अश्वोंद्वारा द्रोणकी सेनापर धावा किया॥ २९॥

द्रोणस्तु समरे क्रुद्धो भीमं नवभिरायसैः।
विव्याध समरश्लाघी मर्माण्युद्दिश्य वीर्यवान्॥ ३०॥

युद्धकी स्पृहा रखनेवाले पराक्रमी द्रोणाचार्यने रणभूमिमें कुपित हो भीमके मर्मस्थानोंको लोहेके नौ बाणोंसे घायल कर दिया॥ ३०॥

दृढाहतस्ततो भीमो भारद्वाजस्य संयुगे।
सारथिं प्रेषयामास यमस्य सदनं प्रति॥ ३१॥

तब युद्धमें द्रोणाचार्यके द्वारा अत्यन्त आहत होकर भीमसेनने उनके सारथिको यमलोक भेज दिया॥ ३१॥

स संगृह्य स्वयं वाहान् भारद्वाजः प्रतापवान्।
व्यधमत् पाण्डवीं सेनां तूलराशिमिवानलः॥ ३२॥

तब प्रतापी द्रोणाचार्य स्वयं ही घोड़ोंकी बागडोर सँभालते हुए पाण्डवसेनाका उसी प्रकार संहार करने लगे, जैसे आग रुईके ढेरको भस्म कर डालती है॥ ३२॥

ते वध्यमाना द्रोणेन भीष्मेण च नरोत्तमाः।
सृञ्जयाः केकयैः सार्धं पलायनपराऽभवन्॥ ३३॥

वे नरश्रेष्ठ सृंजय और केकय द्रोणाचार्य तथा भीष्मकी मार खाकर रणभूमिसे भागने लगे॥ ३३॥

तथैव तावकं सैन्यं भीमार्जुनपरिक्षतम्।
मुह्यते तत्र तत्रैव समदेव वराङ्गना॥ ३४॥

इसी प्रकार भीम और अर्जुनके बाणोंसे क्षत-विक्षत हुई आपकी सेना मतवाली स्त्रीकी भाँति जहाँ-तहाँ मूर्च्छित होने लगी॥ ३४॥

अभिद्येतां ततो व्यूहौ तस्मिन् वीरवरक्षये।
आसीद् व्यतिकरो घोरस्तव तेषां च भारत॥ ३५॥

भारत! बड़े-बड़े वीरोंका संहार करनेवाले उस युद्धमें दोनों सेनाओंके व्यूह टूट गये और आपके तथा पाण्डवोंके सैनिकोंका भयंकर सम्मिश्रण हो गया॥ ३५॥

तदद्भुतमपश्याम तावकानां परैः सह।
एकायनगताः सर्वे यदयुध्यन्त भारत॥ ३६॥

भरतनन्दन! हमने आपके पुत्रोंका शत्रुओंके साथ अद्भुत पराक्रम देखा था। वे सब-के-सब एक पंक्तिमें खड़े होकर युद्ध कर रहे थे॥ ३६॥

प्रतिसंवार्य चास्त्राणि तेऽन्योन्यस्य विशाम्पते।
युयुधुः पाण्डवाश्चैव कौरवाश्च महाबलाः॥ ३७॥

प्रजानाथ! महाबली कौरव तथा पाण्डव एक-दूसरेके अस्त्र-शस्त्रोंका निवारण करते हुए जूझ रहे थे॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि षष्ठदिवसयुद्धारम्भे पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७५॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें छठे दिनके युद्धका आरम्भविषयक पचहत्तरवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ७५॥

षट्सप्ततितमोऽध्यायः

धृतराष्ट्रकी चिन्ता

धृतराष्ट्र उवाच

एवं बहुगुणं सैन्यमेवं बहुविधं पुरा।
व्यूढमेवं यथाशास्त्रममोघं चैव संजय॥ १॥

धृतराष्ट्र बोले—संजय! इस प्रकार हमारी सेना अनेक गुणोंसे सम्पन्न है। अनेक अंगोंसे युक्त और अनेक प्रकारसे संगठित है तथा शास्त्रीय विधिसे उसकी व्यूहरचना की गयी है। अतः वह अमोघ (विजय पानेमें विफल न होनेवाली) है॥ १॥

हृष्टमस्माकमत्यन्तमभिकामं च नः सदा।
प्रह्वमव्यसनोपेतं पुरस्ताद् दृष्टविक्रमम्॥ २॥

हमारी यह सेना हमलोगोंपर सदा प्रसन्न और अनुरक्त रहनेवाली है। हमारे प्रति सर्वदा विनीतभाव रखती आयी है। यह किसी भी व्यसनमें नहीं फँसी है। पूर्वकालमें इसका पराक्रम देखा जा चुका है॥ २॥

नातिवृद्धमबालं च न कृशं न च पीवरम्।
लघुवृत्तायतप्रायं सारयोधमनामयम्॥ ३॥

इसमें न कोई अत्यन्त बूढ़ा है, न बालक है, न अत्यन्त दुबला है और न अत्यन्त मोटा ही है। इसमें शीघ्र कार्य करनेवाले, प्रायः ऊँचे कदके लोग हैं। इस सेनाका प्रत्येक सैनिक सारवान् योद्धा और नीरोग है॥

आत्तसंनाहशस्त्रं च बहुशस्त्रपरिग्रहम्।
असियुद्धे नियुद्धे च गदायुद्धे च कोविदम्॥ ४॥

यहाँ सबने कवच एवं अस्त्र-शस्त्र धारण कर रखा है। अनेक प्रकारके बहुसंख्यक शस्त्रोंका संग्रह किया गया है। यहाँका एक-एक योद्धा खड्गयुद्ध, मल्लयुद्ध और गदायुद्धमें कुशल है॥ ४॥

प्रासर्ष्टितोमरेष्वाजौ परिघेष्वायसेषु च।
भिन्दिपालेषु शक्तीषु मुसलेषु च सर्वशः॥ ५॥
कम्पनेषु च चापेषु कणपेषु च सर्वशः।
क्षेपणीयेषु चित्रेषु मुष्टियुद्धेषु च क्षमम्॥ ६॥

ये सैनिक प्रास, ऋष्टि, तोमर, लोहमय परिघ, भिन्दिपाल, शक्ति, मुसल, कम्पन, चाप तथा कणप आदि दूसरोंपर चलानेयोग्य विचित्र अस्त्रोंका युद्धमें प्रयोग करनेकी कलामें कुशल तथा मुष्टियुद्धमें भी सब प्रकारसे समर्थ हैं॥ ५-६॥

अपरोक्षं च विद्यासु व्यायामे च कृतश्रमम्।
शस्त्रग्रहणविद्यासु सर्वासु परिनिष्ठितम्॥ ७॥

हमारी इस सेनाको धनुर्वेदका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त है। इसके सैनिकोंने व्यायाम (अस्त्र-शस्त्रोंके अभ्यास)-में भी अधिक परिश्रम किया है। ये शस्त्रग्रहणसे सम्बन्ध रखनेवाली सभी विद्याओंमें पारंगत हैं॥ ७॥

आरोहे पर्यवस्कन्दे सरणे सान्तरप्लुते।
सम्यक् प्रहरणे याने व्यपयाने च कोविदम्॥ ८॥

ये हाथी, घोड़े आदि सवारियोंपर चढ़ने, उतरने, आगे बढ़ने, बीचमें ही कूद पड़ने, अच्छी तरह प्रहार करने, चढ़ाई करने और पीछे हटनेमें भी प्रवीण हैं॥

नागाश्वरथयानेषु बहुशः सुपरीक्षितम्।
परीक्ष्य च यथान्यायं वेतनेनोपपादितम्॥ ९॥

हाथी, घोड़े, रथ आदिकी सवारियोंद्वारा रणयात्रा करनेमें इस सेनाकी अनेक प्रकार परीक्षा की जा चुकी है। परीक्षा करके प्रत्येक सैनिकको उसकी योग्यताके अनुकूल यथोचित वेतन दे दिया गया है॥ ९॥

न गोष्ठ्या नोपकारेण न च बन्धुनिमित्ततः।
न सौहृदबलैर्वापि नाकुलीनपरिग्रहैः॥ १०॥

इनमेंसे किसीको मित्रोंकी गोष्ठीसे लाकर, सामान्य उपकार करके, भाई-बन्धु होनेके कारण, सौहार्दवश अथवा बलप्रयोग करके सेनामें सम्मिलित नहीं किया गया है। जो कुलीन नहीं हैं, ऐसे लोगोंका भी इस सेनामें संग्रह नहीं हुआ है॥ १०॥

समृद्धजनमार्यं च तुष्टसम्बन्धिबान्धवम्।
कृतोपकारभूयिष्ठं यशस्वि च मनस्वि च॥ ११॥

हमारी सेनामें जो लोग हैं, वे सब समृद्धिशाली और श्रेष्ठ हैं। उनके सगे-सम्बन्धी, भाई-बन्धु भी संतुष्ट हैं। इन सबपर हमारी ओरसे विशेष उपकार किया गया है। ये सभी यशस्वी और मनस्वी हैं॥ ११॥

स्वजनैस्तु नरैर्मुख्यैर्बहुशो दृष्टकर्मभिः।
लोकपालोपमैस्तात पालितं लोकविश्रुतम्॥ १२॥

तात! जिनके कार्य और व्यवहारको कई बार देखा गया है, ऐसे मुख्य-मुख्य स्वजनोंद्वारा, जो लोकपालके समान पराक्रमी हैं, इस सेनाका पालन-पोषण होता है। यह सम्पूर्ण जगत्में विख्यात है॥ १२॥

बहुभिः क्षत्रियैर्गुप्तं पृथिव्यां लोकसम्मतैः।
अस्मानभिगतैः कामात् सबलैः सपदानुगैः॥ १३॥

जो अपने वीरताके लिये भूमण्डलमें विख्यात तथा लोकमें सम्मानित हैं, ऐसे बहुत-से क्षत्रिय अपनी इच्छासे ही सेना और सेवकोंके साथ हमारे पास आये हैं, उनके द्वारा यह कौरव-सेना सुरक्षित है॥ १३॥

महोदधिमिवापूर्णमापगाभिः समन्ततः।
अपक्षैः पक्षिसंकाशै रथैर्नागैश्च संवृतम्॥ १४॥

हमारी यह सेना महासागरके समान सब ओरसे परिपूर्ण है। इसमें बिना पंखके ही पक्षियोंके समान तीव्र गतिसे चलनेवाले रथ और हाथी इस प्रकार आकर मिलते हैं, जैसे समुद्रमें सब ओरसे नदियाँ आकर गिरती हैं॥

नानायोधजलं भीमं वाहनोर्मितरङ्गिणम्।
क्षेपण्यसिगदाशक्तिशरप्राससमाकुलम् ॥ १५॥

नाना प्रकारके योद्धा ही इस सैन्यसागरके जल हैं, वाहन ही उसमें उठती हुई छोटी-बड़ी तरंगें हैं। इसमें क्षेपणी, खड्ग, गदा, शक्ति, बाण और प्रास आदि अस्त्र-शस्त्र जल-जन्तुओंके समान भरे पड़े हैं॥ १५॥

ध्वजभूषणसम्बाधं रत्नपट्टसुसंचितम्।
परिधावद्भिरश्वैश्च वायुवेगविकम्पितम्॥ १६॥
अपारमिव गर्जन्तं सागरप्रतिमं महत्।

ध्वज और आभूषणोंसे भरी हुई यह सेना रत्नजटित पताकाओंसे व्याप्त है। दौड़ते हुए घोड़ोंसे जो इस सेनाका चंचल होना है, वही वायुवेगसे इस समुद्रका कम्पन है। सागरसदृश यह विशाल सेना देखनेमें अपार है और निरन्तर गर्जन करती रहती है॥ १६½॥

द्रोणभीष्माभिसंगुप्तं गुप्तं च कृतवर्मणा॥ १७॥
कृपदुःशासनाभ्यां च जयद्रथमुखैस्तथा।
भगदत्तविकर्णाभ्यां द्रौणिसौबलबाह्लिकैः॥ १८॥
गुप्तं प्रवीरैर्लोकैश्च सारवद्भिर्महात्मभिः।
यदहन्यत संग्रामे दैवमत्र पुरातनम्॥ १९॥

द्रोणाचार्य, भीष्म, कृतवर्मा, कृपाचार्य, दुःशासन, जयद्रथ, भगदत्त, विकर्ण, अश्वत्थामा, शकुनि तथा बाह्लिक आदि प्रमुख वीरों तथा अन्य शक्तिशाली महामनस्वी लोगोंद्वारा मेरी सेना सदा सुरक्षित रहती है। ऐसी सेना भी यदि संग्राममें मारी गयी तो इसमें हमलोगोंका पुरातन प्रारब्ध ही कारण है॥ १७—१९॥

नैतादृशं समुद्योगं दृष्टवन्तो हि मानुषाः।
ऋषयो वा महाभागाः पुराणा भुवि संजय॥ २०॥

संजय! इस भूतलपर इतनी बड़ी सेनाका जमाव मनुष्योंने कभी नहीं देखा होगा अथवा प्राचीन महाभाग ऋषियोंने भी नहीं देखा होगा॥ २०॥

ईदृशोऽपि बलौघस्तु संयुक्तः शस्त्रसम्पदा।
वध्यते यत्र संग्रामे किमन्यद् भागधेयतः॥ २१॥

इतना बड़ा सैन्यसमुदाय शस्त्रसम्पत्तिसे संयुक्त होनेपर भी यदि संग्राममें विनष्ट हो रहा है, तो इसमें भाग्यके सिवा और क्या कारण हो सकता है?॥ २१॥

विपरीतमिदं सर्वं प्रतिभाति हि संजय।
यत्रेदृशं बलं घोरं पाण्डवान्नातरद् रणे॥ २२॥

संजय! यह सब कुछ मुझे विपरीत जान पड़ता है कि ऐसा भयंकर सैन्यसमूह भी वहाँ युद्धमें पाण्डवोंसे पार नहीं पा सका॥ २२॥

पाण्डवार्थाय नियतं देवास्तत्र समागताः।
युध्यन्ते मामकं सैन्यं यथावध्यत संजय॥ २३॥

संजय! निश्चय ही पाण्डवोंके लिये देवता आकर मेरी सेनाके साथ युद्ध करते हैं, तभी तो वह प्रतिदिन मारी जा रही है॥ २३॥

उक्तो हि विदुरेणाहं हितं पथ्यं च नित्यशः।
न च जग्राह तन्मन्दः पुत्रो दुर्योधनो मम॥ २४॥
तस्य मन्ये मतिः पूर्वं सर्वज्ञस्य महात्मनः।
आसीद् यथागतं तात येन दृष्टमिदं पुरा॥ २५॥

विदुरने नित्य ही हित और लाभकी बातें बतायीं; परंतु मेरे मूर्ख पुत्र दुर्योधनने नहीं माना। तात! मैं समझता हूँ, महात्मा विदुर सर्वज्ञ हैं। इसीलिये पहले ही उनकी बुद्धिमें ये सब बातें आ गयी थीं। आज जो कुछ प्राप्त हुआ है, यह पहले ही उनकी दृष्टिमें आ गया था॥ २४-२५॥

अथवा भाव्यमेवं हि संजयैतेन सर्वथा।
पुरा धात्रा यथा सृष्टं तत् तथा नैतदन्यथा॥ २६॥

संजय! अथवा यह सब प्रकारसे ऐसा ही होनेवाला था। विधाताने जो पहलेसे रच रखा है, वह उसी रूपमें होता है, उसे कोई बदल नहीं सकता॥ २६॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि धृतराष्ट्रचिन्तायां षट्सप्ततितमोऽध्यायः॥ ७६॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें धृतराष्ट्रकी चिन्ताविषयक छिहत्तरवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ७६॥

सप्तसप्ततितमोऽध्यायः

भीमसेन, धृष्टद्युम्न तथा द्रोणाचार्यका पराक्रम

संजय उवाच

आत्मदोषात् त्वया राजन् प्राप्तं व्यसनमीदृशम्।
न हि दुर्योधनस्तानि पश्यते भरतर्षभ॥ १॥
यानि त्वं दृष्टवान् राजन् धर्मसंकरकारिते।
तव दोषात् पुरा वृत्तं द्यूतमेव विशाम्पते॥ २॥

संजय कहते हैं—राजन्! आपने अपने ही दोषसे यह संकट प्राप्त किया है। भरतश्रेष्ठ! जिन धर्म और अधर्मके सम्मिश्रणसे उत्पन्न दोषोंको आप देखते थे, उन्हें दुर्योधन नहीं देख सका था। प्रजानाथ! आपके अपराधसे ही पहले द्यूतक्रीड़ाकी घटना घटी थी॥

तव दोषेण युद्धं च प्रवृत्तं सह पाण्डवैः।
त्वमेवाद्य फलं भुङ्क्षे कृत्वा किल्बिषमात्मना॥ ३॥

तथा आपके ही दोषसे आज पाण्डवोंके साथ युद्ध आरम्भ हुआ। आपने स्वयं ही जो पाप किया है, उसका फल आज आप ही भोग रहे हैं॥ ३॥

आत्मनैव कृतं कर्म आत्मनैवोपभुज्यते।
इह च प्रेत्य वा राजंस्त्वया प्राप्तं यथातथम्॥ ४॥

राजन्! इहलोक अथवा परलोकमें अपने किये हुए कर्मका फल अपने-आपको ही भोगना पड़ता है; अतः आपको जैसेका तैसा प्राप्त हुआ है॥ ४॥

तस्माद् राजन् स्थिरो भूत्वा प्राप्येदं व्यसनं महत्।
शृणु युद्धं यथावृत्तं शंसतो मे नराधिप॥ ५॥

राजन्! नरेश्वर! इस महान् संकटको पाकर भी स्थिरतापूर्वक युद्धका यथावत् वृतान्त जैसा मैं बता रहा हूँ सुनिये॥

भीमसेनः सुनिशितैर्बाणैर्भित्त्वा महाचमूम्।
आससाद ततो वीरः सर्वान् दुर्योधनानुजान्॥ ६॥

वीर भीमसेनने तीखे बाणोंसे आपकी विशाल सेनाको विदीर्ण करके दुर्योधनके सभी भाइयोंपर आक्रमण किया॥ ६॥

दुःशासनं दुर्विषहं दुःसहं दुर्मदं जयम्।
जयत्सेनं विकर्णं च चित्रसेनं सुदर्शनम्॥ ७॥
चारुचित्रं सुवर्माणं दुष्कर्णं कर्णमेव च।
एतांश्चान्यांश्च सुबहून् समीपस्थान् महारथान्॥ ८॥
धार्तराष्ट्रान् सुसंक्रुद्धान् दृष्ट्वा भीमो महारथः।
भीष्मेण समरे गुप्तां प्रविवेश महाचमूम्॥ ९॥

दुःशासन, दुर्विषह, दुःसह, दुर्मद, जय, जयत्सेन, विकर्ण, चित्रसेन, सुदर्शन, चारुचित्र, सुवर्मा, दुष्कर्ण तथा कर्ण—ये तथा और भी बहुत-से आपके जो महारथी पुत्र समीप खड़े थे, उन्हें कुपित देखकर महारथी भीमसेनने समरभूमिमें भीष्मके द्वारा सुरक्षित विशाल कौरवसेनामें प्रवेश किया॥ ७—९॥

अथालोक्य प्रविष्टं तमूचुस्ते सर्व एव तु।
जीवग्राहं निगृह्णीमो वयमेनं नराधिपाः॥ १०॥

भीमसेनको सेनाके भीतर प्रविष्ट हुआ देख उन सब नरेशोंने आपसमें कहा कि हमलोग इन्हें जीवित ही पकड़ कर बंदी बना लें॥ १०॥

स तैः परिवृतः पार्थो भ्रातृभिः कृतनिश्चयैः।
प्रजासंहरणे सूर्यः क्रूरैरिव महाग्रहैः॥ ११॥

ऐसा निश्चय करके उन सब भाइयोंने कुन्ती-कुमार भीमसेनको घेर लिया, मानो प्रजाके संहारकालमें सूर्यदेवको बड़े-बड़े क्रूर ग्रहोंने घेर रखा हो॥ ११॥

सम्प्राप्य मध्यं सैन्यस्य न भीः पाण्डवमाविशत्।
यथा देवासुरे युद्धे महेन्द्रं प्राप्य दानवान्॥ १२॥

कौरवसेनाके भीतर पहुँच जानेपर भी पाण्डुनन्दन भीमसेनको तनिक भी भय नहीं हुआ, जैसे देवासुर-संग्राममें दानवोंकी सेनामें घुसनेपर देवराज इन्द्रको भयका स्पर्श नहीं होता है॥ १२॥

ततः शतसहस्राणि रथिनां सर्वशः प्रभो।
उद्यतानि शरैस्तीव्रैस्तमेकं परिवव्रिरे॥ १३॥

प्रभो! तदनन्तर एकमात्र भीमसेनको उनपर तीव्र बाणोंकी वर्षा करते हुए सैकड़ों-हजारों रथियोंने युद्धके लिये उद्यत होकर सब ओरसे घेर लिया॥ १३॥

स तेषां प्रवरान् योधान् हस्त्यश्वरथसादिनः।
जघान समरे शूरो धार्तराष्ट्रानचिन्तयन्॥ १४॥

शूरवीर भीमसेन आपके पुत्रोंकी तनिक भी परवा न करते हुए हाथी, घोड़े एवं रथपर बैठकर युद्ध करनेवाले कौरवोंके मुख्य-मुख्य योद्धाओंको समर-भूमिमें मारने लगे॥ १४॥

तेषां व्यवसितं ज्ञात्वा भीमसेनो जिघृक्षताम्।
समस्तानां वधे राजन् मतिं चक्रे महामनाः॥ १५॥

राजन्! उन्हें कैद करनेकी इच्छावाले क्षत्रियोंके उस निश्चयको जानकर महामना भीमसेनने उन सबके वधका विचार कर लिया॥ १५॥

ततो रथं समुत्सृज्य गदामादाय पाण्डवः।
जघान धार्तराष्ट्राणां तं बलौघं महार्णवम्॥ १६॥

तदनन्तर पाण्डुनन्दन भीमसेन हाथमें गदा ले रथको त्यागकर उस विशाल सेनामें घुसकर उस महासागरतुल्य सैन्यसमुदायका विनाश करने लगे॥ १६॥

(गदया भीमसेनेन ताडिता वारणोत्तमाः।
भिन्नकुम्भा महाकाया भिन्नपृष्ठास्तथैव च॥
भिन्नगात्राः सहारोहाः शेरते पर्वता इव।

भीमसेनकी गदाके आघातसे बड़े-बड़े विशालकाय गजराजोंके कुम्भस्थल फट गये, पृष्ठभाग विदीर्ण हो गये तथा उनका एक-एक अंग छिन्न-भिन्न हो गया और उसी अवस्थामें वे सवारोंसहित धराशायी हो गये, मानो पर्वत ढह गये हों।

रथाश्च भग्नास्तिलशः सयोधाः शतशो रणे॥
अश्वाश्च सादिनश्चैव पदातैः सह भारत।

भारत! उन्होंने उस रणक्षेत्रमें सैकड़ों रथोंको उनके सवारोंसहित तिल-तिल करके तोड़ डाला। घोड़ों, घुड़सवारों तथा पैदलोंकी भी धज्जियाँ उड़ा दीं।

तत्राद्भुतमपश्याम भीमसेनस्य विक्रमम्॥
यदेकः समरे राजन् बहुभिः समयोधयत्।
अन्तकाले प्रजाः सर्वा दण्डपाणिरिवान्तकः॥)

राजन्! उस युद्धमें हमलोगोंने भीमसेनका अद्भुत पराक्रम देखा, जैसे प्रलयकालमें यमराज हाथमें दण्ड लिये समस्त प्रजाका संहार करते हैं, उसी प्रकार वे अकेले आपके बहुसंख्यक योद्धाओंके साथ युद्ध कर रहे थे।

भीमसेने प्रविष्टे तु धृष्टद्युम्नोऽपि पार्षतः।
द्रोणमुत्सृज्य तरसा प्रययौ यत्र सौबलः॥ १७॥

भीमसेनके कौरवसेनामें प्रवेश करनेपर द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न भी द्रोणाचार्यको छोड़कर बड़े वेगसे उस स्थानपर गये, जहाँ शकुनि युद्ध कर रहा था॥ १७॥

निवार्य महतीं सेनां तावकानां नरर्षभः।
आससाद रथं शून्यं भीमसेनस्य संयुगे॥ १८॥

वहाँ आपकी विशाल सेनाको आगे बढ़नेसे रोककर नरश्रेष्ठ धृष्टद्युम्न युद्धस्थलमें भीमसेनके सूने रथके पास जा पहुँचे॥ १८॥

दृष्ट्वा विशोकं समरे भीमसेनस्य सारथिम्।
धृष्टद्युम्नो महाराज दुर्मना गतचेतनः॥ १९॥

महाराज! भीमसेनके सारथि विशोकको समर-भूमिमें अकेला खड़ा देख धृष्टद्युम्न मन-ही-मन बहुत दुःखी और अचेत हो गये॥ १९॥

अपृच्छद् वाष्पसंरुद्धो निःश्वसन् वाचमीरयन्।
मम प्राणैः प्रियतमः क्व भीम इति दुःखितः॥ २०॥

वे लंबी साँस खींचते और आँसू बहाते हुए गद्गदकण्ठसे पूछने लगे—'विशोक! मेरे प्राणोंसे भी अधिक प्यारे भीमसेन कहाँ हैं?' इतना कहते-कहते वे बहुत दुःखी हो गये॥ २०॥

विशोकस्तमुवाचेदं धृष्टद्युम्नं कृताञ्जलिः।
संस्थाप्य मामिह बली पाण्डवेयः पराक्रमी॥ २१॥
प्रविष्टो धार्तराष्ट्राणामेतद् बलमहार्णवम्।

तब विशोकने हाथ जोड़कर धृष्टद्युम्नसे कहा—'प्रभो! पराक्रमी और बलवान् पाण्डुनन्दन मुझे यहीं खड़ा करके कौरवोंके इस सैन्यसागरमें घुस गये हैं॥

मामुक्त्वा पुरुषव्याघ्रः प्रीतियुक्तमिदं वचः॥ २२॥
प्रतिपालय मां सूत नियम्याश्वान् मुहूर्तकम्।
यावदेतान् निहन्म्यद्य य इमे मद्वधोद्यताः॥ २३॥

'जाते समय पुरुषसिंह भीमसेनने मुझसे प्रेमपूर्वक यह बात कही कि सूत! तुम दो घड़ीतक इन घोड़ोंको रोककर यहीं मेरी प्रतीक्षा करो। जबतक कि ये जो लोग मेरा वध करनेके लिये उद्यत हैं, इन्हें अभी मार न डालूँ॥ २२-२३॥

ततो दृष्ट्वा प्रधावन्तं गदाहस्तं महाबलम्।
सर्वेषामेव सैन्यानां संहर्षः समजायत॥ २४॥

'तदनन्तर गदा हाथमें लिये महाबली भीमसेनको धावा करते देख समस्त सैनिकोंके रोंगटे खड़े हो गये॥

तस्मिन् सुतुमुले युद्धे वर्तमाने भयानके।
भित्त्वा राजन् महाव्यूहं प्रविवेश वृकोदरः॥ २५॥

'राजन्! उस भयंकर एवं तुमुल युद्धमें भीमसेनने इस महाव्यूहका भेदन करके इसके भीतर प्रवेश किया था'॥

विशोकस्य वचः श्रुत्वा धृष्टद्युम्नोऽथ पार्षतः।
प्रत्युवाच ततः सूतं रणमध्ये महाबलः॥ २६॥

विशोककी यह बात सुनकर महाबली द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्नने उस समरांगणमें उनके सारथिसे इस प्रकार कहा—॥ २६॥

न हि मे जीवितेनापि विद्यतेऽद्य प्रयोजनम्।
भीमसेनं रणे हित्वा स्नेहमुत्सृज्य पाण्डवैः॥ २७॥

'सारथे! युद्धस्थलमें भीमसेनको छोड़कर और पाण्डवोंसे स्नेह तोड़कर अब मेरे जीवनसे कोई प्रयोजन नहीं है॥ २७॥

यदि यामि विना भीमं किं मां क्षत्रं वदिष्यति।
एकायनगते भीमे मयि चावस्थिते युधि॥ २८॥

'भीम एकमात्र युद्धके पथपर गये हैं और मैं भी युद्धस्थलमें उपस्थित हूँ। ऐसी दशामें यदि भीमसेनके बिना ही लौट जाऊँ तो क्षत्रियसमाज मुझे क्या कहेगा?॥ २८॥

अस्वस्ति तस्य कुर्वन्ति देवाः शक्रपुरोगमाः।
यः सहायान् परित्यज्य स्वस्तिमानाव्रजेद् गृहम्॥ २९॥

'जो अपने सहायकोंको छोड़कर स्वयं कुशल-पूर्वक घरको लौट आता है, उसका इन्द्र आदि देवता अनिष्ट करते हैं॥ २९॥

मम भीमः सखा चैव सम्बन्धी च महाबलः।
भक्तोऽस्मान् भक्तिमांश्चाहं तमप्यरिनिषूदनम्॥ ३०॥

'महाबली भीम मेरे सखा और सम्बन्धी हैं। वे हम लोगोंके भक्त हैं और मैं भी उन शत्रुसूदन भीमका भक्त हूँ॥

सोऽहं तत्र गमिष्यामि यत्र यातो वृकोदरः।
निघ्नन्तं मां रिपून् पश्य दानवानिव वासवम्॥ ३१॥

'अतः मैं भी वहीं जाऊँगा जहाँ भीमसेन गये हैं। देखो जैसे इन्द्र दानवोंका संहार करते हैं, उसी प्रकार मैं भी शत्रुसेनाका विनाश कर रहा हूँ'॥ ३१॥

एवमुक्त्वा ततो वीरो ययौ मध्येन भारत।
भीमसेनस्य मार्गेषु गदाप्रमथितैर्गजैः॥ ३२॥

भारत! ऐसा कहकर वीरवर धृष्टद्युम्न भीमसेनके बनाये हुए मार्गोंसे कौरव-सेनाके भीतर गये। उन मार्गोंपर गदाके मारे हुए हाथी पड़े थे॥ ३२॥

स ददर्श तदा भीमं दहन्तं रिपुवाहिनीम्।
वातो वृक्षानिव बलात् प्रभञ्जन्तं रणे रिपून्॥ ३३॥

उस समय कुछ दूर जाकर धृष्टद्युम्नने शत्रुसेनाको दग्ध करते हुए भीमसेनको देखा। जैसे आँधी वृक्षोंको बलपूर्वक तोड़ देती या उखाड़ डालती है, उसी प्रकार भीमसेन भी रणभूमिमें शत्रुओंका संहार कर रहे थे॥

ते वध्यमानाः समरे रथिनः सादिनस्तथा।
पादाता दन्तिनश्चैव चक्रुरार्तस्वरं महत्॥ ३४॥

समरांगणमें भीमसेनके मारे हुए रथी, घुड़सवार, पैदल और सवारोंसहित हाथी बड़े जोरसे आर्तनाद कर रहे थे॥ ३४॥

हाहाकारश्च संजज्ञे तव सैन्यस्य मारिष।
वध्यतो भीमसेनेन कृतिना चित्रयोधिना॥ ३५॥

आर्य! विचित्र रीतिसे युद्ध करनेवाले विद्वान् भीमसेनके द्वारा मारी जाती हुई आपकी सेनामें हाहाकार मच गया॥ ३५॥

ततः कृतास्त्रास्ते सर्वे परिवार्य वृकोदरम्।
अभीताः समवर्तन्त शस्त्रवृष्ट्या परंतप॥ ३६॥

शत्रुओंको संताप देनेवाले नरेश! तदनन्तर अस्त्रोंके ज्ञाता समस्त कौरव-सैनिक भीमसेनको सब ओरसे घेरकर अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा करते हुए बिना किसी भयके उनपर चढ़ आये॥ ३६॥

अभिद्रुतं शस्त्रभृतां वरिष्ठं
समन्ततः पाण्डवं लोकवीरः।
सैन्येन घोरेण सुसंहितेन
दृष्ट्वा बली पार्षतो भीमसेनम्॥ ३७॥
अथोपगच्छच्छरविक्षताङ्गं
पदातिनं क्रोधविषं वमन्तम्।
आश्वासयन् पार्षतो भीमसेनं
गदाहस्तं कालमिवान्तकाले॥ ३८॥

विश्वके विख्यात वीर बलवान् द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्नने देखा—शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ पाण्डुनन्दन भीमसेनपर सब ओरसे धावा हो रहा है। अत्यन्त संगठित हुई भयंकर सेनाने उनपर आक्रमण किया है। यह देखकर धृष्टद्युम्न भीमसेनको आश्वासन देते हुए उनके पास गये। उनका प्रत्येक अंग बाणोंसे क्षत-विक्षत हो रहा था। वे पैदल ही क्रोधरूपी विष उगल रहे थे और गदा हाथमें लिये प्रलयकालके यमराजके समान जान पड़ते थे॥

विशल्यमेनं च चकार तूर्ण-
मारोपयच्चात्मरथे महात्मा।
भृशं परिष्वज्य च भीमसेन-
माश्वासयामास स शत्रुमध्ये॥ ३९॥

महामना धृष्टद्युम्नने तुरंत ही उन्हें अपने रथपर बिठा लिया और उनके शरीरमें धँसे हुए बाणोंको निकाल दिया। शत्रुओंके बीचमें ही भीमसेनको हृदयसे लगाकर उन्हें पूर्णतः सान्त्वना दी॥ ३९॥

भ्रातॄनथोपेत्य तवापि पुत्र-
स्तस्मिन् विमर्दे महति प्रवृत्ते।
अयं दुरात्मा द्रुपदस्य पुत्रः
समागतो भीमसेनेन सार्धम्॥ ४०॥
तं याम सर्वे महता बलेन
मा वो रिपुः प्रार्थयतामनीकम्।

वह महान् संघर्ष आरम्भ होनेपर आपका पुत्र दुर्योधन भाइयोंके पास आकर बोला—'यह दुरात्मा द्रुपदपुत्र आकर भीमसेनसे मिल गया है। हम सब लोग बहुत बड़ी सेनाके साथ इसपर आक्रमण करें, जिससे हमारा और तुम्हारा यह शत्रु हमलोगोंकी इस सेनाको हानि पहुँचानेका विचार न कर सके'॥ ४०½॥

श्रुत्वा तु वाक्यं तममृष्यमाणा
ज्येष्ठाज्ञया नोदिता धार्तराष्ट्राः॥ ४१॥
वधाय निष्पेतुरुदायुधास्ते
युगक्षये केतवो यद्वदुग्राः।
प्रगृह्य चास्त्राणि धनूंषि वीरा
ज्यां नेमिघोषैः प्रविकम्पयन्तः॥ ४२॥

दुर्योधनका यह कथन सुनकर आपके सभी वीर पुत्र, जो धृष्टद्युम्नका आगमन नहीं सह सके थे, बड़े भाईकी आज्ञासे प्रेरित हो प्रलयकालके भयंकर केतुओंकी भाँति हाथमें आयुध लिये धृष्टद्युम्नके वधके लिये उनपर टूट पड़े। उन्होंने अपने हाथोंमें धनुष-बाण ले रखे थे और वे रथके पहियोंकी घरघराहटके साथ-साथ धनुषकी प्रत्यंचाको भी कँपाते हुए उसकी टंकार फैला रहे थे॥ ४१-४२॥

शरैरवर्षन् द्रुपदस्य पुत्रं
यथाम्बुदा भूधरं वारिजालैः।
निहत्य तांश्चापि शरैः सुतीक्ष्णै-
र्न विव्यथे समरे चित्रयोधी॥ ४३॥

जैसे मेघ पर्वतपर जलकी बूँदें बरसाते हैं, उसी प्रकार वे द्रुपदपुत्रपर बाणोंकी वृष्टि करने लगे। परंतु विचित्र युद्ध करनेवाले धृष्टद्युम्न उस समरांगणमें अपने पैने बाणोंद्वारा उन सबको अत्यन्त घायल करके स्वयं तनिक भी व्यथित नहीं हुए॥ ४३॥

समभ्युदीर्णांश्च तवात्मजांस्तथा
निशम्य वीरानभितः स्थितान् रणे।
जिघांसुरुग्रं द्रुपदात्मजो युवा
प्रमोहनास्त्रं युयुजे महारथः॥ ४४॥

युद्धमें सामने खड़े हुए आपके वीर पुत्रोंको आगे बढ़ते और प्रचण्ड होते देख नवयुवक महारथी द्रुपदकुमारने उनके वधके लिये भयंकर प्रमोहनास्त्रका प्रयोग किया॥ ४४॥

क्रुद्धो भृशं तव पुत्रेषु राजन्
दैत्येषु यद्वत् समरे महेन्द्रः।
ततो व्यमुह्यन्त रणे नृवीराः
प्रमोहनास्त्राहतबुद्धिसत्त्वाः॥ ४५॥

राजन्! जैसे युद्धमें देवराज इन्द्र दैत्योंपर कुपित होते हैं, उसी प्रकार आपके पुत्रोंपर धृष्टद्युम्नका क्रोध बहुत बढ़ा हुआ था। उसके मोहनास्त्रके प्रयोगसे अपनी चेतना और धैर्य खोकर आपके नरवीर पुत्र रणभूमिमें मोहित हो गये॥

प्रदुद्रुवुः कुरवश्चैव सर्वे
सवाजिनागाः सरथाः समन्तात्।
परीतकालानिव नष्टसंज्ञान्
मोहोपेतांस्तव पुत्रान् निशम्य॥ ४६॥

आपके पुत्रोंको मोहसे युक्त एवं मरे हुएके समान अचेत हुआ देख समस्त कौरव-सैनिक हाथी, घोड़े तथा रथसहित सब ओर भाग चले॥ ४६॥

एतस्मिन्नेव काले तु द्रोणः शस्त्रभृतां वरः।
द्रुपदं त्रिभिरासाद्य शरैर्विव्याध दारुणैः॥ ४७॥

इसी समय दूसरी ओर शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्यने द्रुपदके पास जाकर उनको तीन भयंकर बाणोंद्वारा बींध डाला॥

सोऽतिविद्धस्ततो राजन् रणे द्रोणेन पार्थिवः।
अपायाद् द्रुपदो राजन् पूर्ववैरमनुस्मरन्॥ ४८॥

राजन्! तब रणभूमिमें द्रोणके द्वारा अत्यन्त घायल हो राजा द्रुपद पहलेके वैरका स्मरण करते हुए वहाँसे दूर हट गये॥ ४८॥

जित्वा तु द्रुपदं द्रोणः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान्।
तस्य शङ्खस्वनं श्रुत्वा वित्रेसुः सर्वसोमकाः॥ ४९॥

द्रुपदको जीतकर प्रतापी द्रोणाचार्यने अपना शंख बजाया। उस शंखनादको सुनकर समस्त सोमक क्षत्रिय अत्यन्त भयभीत हो गये॥ ४९॥

अथ शुश्राव तेजस्वी द्रोणः शस्त्रभृतां वरः।
प्रमोहनास्त्रेण रणे मोहितानात्मजांस्तव॥ ५०॥

तदनन्तर शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ तेजस्वी द्रोणाचार्यने सुना कि आपके पुत्र रणभूमिमें प्रमोहनास्त्रसे मोहित होकर पड़े हैं॥ ५०॥

ततो द्रोणो महाराज त्वरितोऽभ्याययौ रणात्।
तत्रापश्यन्महेष्वासो भारद्वाजः प्रतापवान्॥ ५१॥
धृष्टद्युम्नं च भीमं च विचरन्तौ महारणे।
मोहाविष्टांश्च ते पुत्रानपश्यत् स महारथः॥ ५२॥

महाराज! यह सुनते ही महाधनुर्धर प्रतापी भरद्वाज-नन्दन द्रोणाचार्य तुरंत उस युद्धस्थलसे चलकर वहाँ आ पहुँचे। आकर उन महारथीने देखा कि धृष्टद्युम्न और भीमसेन उस महायुद्धमें विचर रहे हैं और आपके पुत्र मोहाविष्ट होकर पड़े हुए हैं॥ ५१-५२॥

ततः प्रज्ञास्त्रमादाय मोहनास्त्रं व्यनाशयत्।
अथ प्रत्यागतप्राणास्तव पुत्रा महारथाः॥ ५३॥

तब उन्होंने प्रज्ञास्त्र लेकर उसके द्वारा मोहनास्त्रका नाश कर दिया। इससे आपके महारथी पुत्रोंमें पुनः चेतनाशक्ति लौट आयी॥ ५३॥

पुनर्युद्धाय समरे प्रययुर्भीमपार्षतौ।
ततो युधिष्ठिरः प्राह समाहूय स्वसैनिकान्॥ ५४॥
गच्छन्तु पदवीं शक्त्या भीमपार्षतयोर्युधि।
सौभद्रप्रमुखा वीरा रथा द्वादश दंशिताः॥ ५५॥
प्रवृत्तिमधिगच्छन्तु न हि शुद्ध्यति मे मनः।

वे समरभूमिमें पुनः युद्धके लिये भीमसेन और द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्नकी ओर चले। तब राजा युधिष्ठिरने अपने सैनिकोंको बुलाकर कहा—'तुमलोग पूरी शक्ति लगाकर युद्धस्थलमें भीमसेन और धृष्टद्युम्नके पथका अनुसरण करो। अभिमन्यु आदि बारह वीर महारथी कवच आदिसे सुसज्जित हो भीमसेन और धृष्टद्युम्नका समाचार प्राप्त करें। मेरा मन उनके विषयमें निश्चिन्त नहीं हो रहा है'॥ ५४-५५½॥

त एवं समनुज्ञाताः शूरा विक्रान्तयोधिनः॥ ५६॥
बाढमित्येवमुक्त्वा तु सर्वे पुरुषमानिनः।
मध्यन्दिनगते सूर्ये प्रययुः सर्व एव हि॥ ५७॥

युधिष्ठिरकी ऐसी आज्ञा पाकर पराक्रमपूर्वक युद्ध करनेवाले वे पुरुषमानी समस्त शूरवीर 'बहुत अच्छा' कहकर दोपहर होते-होते वहाँसे चल दिये॥ ५६-५७॥

केकया द्रौपदेयाश्च धृष्टकेतुश्च वीर्यवान्।
अभिमन्युं पुरस्कृत्य महत्या सेनयावृताः॥ ५८॥
ते कृत्वा समरव्यूहं सूचीमुखमरिंदमाः।
बिभिदुर्धार्तराष्ट्राणां तद् रथानीकमाहवे॥ ५९॥

अभिमन्युको आगे करके विशाल सेनासे घिरे हुए पाँच केकयराजकुमार, द्रौपदीके पाँचों पुत्र और पराक्रमी धृष्टकेतु—ये शत्रुओंका दमन करनेवाले शूरवीर सूचीमुख नामक समरव्यूह बनाकर आपके पुत्रोंकी उस सेनाको रणक्षेत्रमें विदीर्ण करने लगे॥ ५८-५९॥

तान् प्रयातान् महेष्वासानभिमन्युपुरोगमान्।
भीमसेनभयाविष्टा धृष्टद्युम्नविमोहिता॥ ६०॥
न संवारयितुं शक्ता तव सेना जनाधिप।
मदमूर्च्छान्वितात्मा वै प्रमदेवाध्वनि स्थिता॥ ६१॥

जनेश्वर! आपकी सेना भीमसेनके भयसे व्याकुल और धृष्टद्युम्नके बाणोंसे मोहित हो रही थी। अतः आक्रमण करनेवाले अभिमन्यु आदि महाधनुर्धर वीरोंको वह रोकनेमें समर्थ न हो सकी। मद और मूर्च्छाके वशीभूत हुई मतवाली स्त्रीकी भाँति वह मार्गमें चुपचाप खड़ी रही॥ ६०-६१॥

तेऽभिजाता महेष्वासाः सुवर्णविकृतध्वजाः।
परीप्सन्तोऽभ्यधावन्त धृष्टद्युम्नवृकोदरौ॥ ६२॥

सुवर्णनिर्मित ध्वजाओंसे सुशोभित होनेवाले वे महाधनुर्धर कुलीन योद्धा धृष्टद्युम्न और भीमसेनकी रक्षाके लिये बड़े वेगसे दौड़े॥ ६२॥

तौ च दृष्ट्वा महेष्वासावभिमन्युपुरोगमान्।
बभूवतुर्मुदा युक्तौ निघ्नन्तौ तव वाहिनीम्॥ ६३॥

वे दोनों महाधनुर्धर धृष्टद्युम्न और भीमसेन भी अभिमन्यु आदि वीरोंको सहायताके लिये आते देख हर्ष और उत्साहमें भर गये और आपकी सेनाका विनाश करने लगे॥ ६३॥

(द्रोणमिष्वस्त्रकुशलं सर्वविद्यासु पारगम्।)
दृष्ट्वा तु सहसाऽऽयान्तं पाञ्चाल्यो गुरुमात्मनः।
नाशंसत वधं वीरः पुत्राणां तव भारत॥ ६४॥

भारत! पांचालराजकुमार धृष्टद्युम्नने धनुर्वेदमें कुशल और समस्त विद्याओंके पारंगत विद्वान् अपने गुरु द्रोणाचार्यको सहसा वहाँ आये देख आपके पुत्रोंके वधकी इच्छा छोड़ दी॥ ६४॥

ततो रथं समारोप्य कैकेयस्य वृकोदरम्।
अभ्यधावत् सुसंक्रुद्धो द्रोणमिष्वस्त्रपारगम्॥ ६५॥

फिर भीमसेनको केकयके रथपर बिठाकर क्रोधमें भरे हुए धृष्टद्युम्नने अस्त्रविद्याके पारगामी विद्वान् द्रोणाचार्यपर धावा किया॥ ६५॥

तस्याभिपततस्तूर्णं भारद्वाजः प्रतापवान्।
क्रुद्धश्चिच्छेद बाणेन धनुः शत्रुनिबर्हणः॥ ६६॥

तब शत्रुओंका नाश करनेवाले प्रतापी द्रोणाचार्यने कुपित होकर अपनी ओर आनेवाले धृष्टद्युम्नके धनुषको एक बाणसे तुरंत काट दिया॥ ६६॥

अन्यांश्च शतशो बाणान् प्रेषयामास पार्षते।
दुर्योधनहितार्थाय भर्तृपिण्डमनुस्मरन्॥ ६७॥

उसके बाद दुर्योधनके हितके लिये स्वामीके अन्नका विचार करते हुए धृष्टद्युम्नपर और भी सैकड़ों बाण चलाये॥ ६७॥

अथान्यद् धनुरादाय पार्षतः परवीरहा।
द्रोणं विव्याध विंशत्या रुक्मपुङ्खैः शिलाशितैः॥ ६८॥

तत्पश्चात् शत्रुवीरोंका हनन करनेवाले धृष्टद्युम्नने दूसरा धनुष लेकर पत्थरपर रगड़कर तेज किये हुए सोनेकी पाँखवाले बीस बाणोंसे द्रोणाचार्यको घायल कर दिया॥ ६८॥

तस्य द्रोणः पुनश्चापं चिच्छेदामित्रकर्शनः।
हयांश्च चतुरस्तूर्णं चतुर्भिः सायकोत्तमैः॥ ६९॥
वैवस्वतक्षयं घोरं प्रेषयामास भारत।
सारथिं चास्य भल्लेन प्रेषयामास मृत्यवे॥ ७०॥

तब शत्रुसूदन द्रोणने पुनः धृष्टद्युम्नका धनुष काट दिया और चार उत्तम सायकोंद्वारा उनके चारों घोड़ोंको तुरंत ही भयानक यमलोकको भेज दिया। भारत! फिर एक भल्लके द्वारा उनके सारथिको भी मृत्युके हवाले कर दिया॥ ६९-७०॥

हताश्वात् स रथात् तूर्णमवप्लुत्य महारथः।
आरुरोह महाबाहुरभिमन्योर्महारथम्॥ ७१॥

घोड़ों और सारथिके मारे जानेपर महारथी महाबाहु धृष्टद्युम्न तुरंत उस रथसे कूद पड़े और अभिमन्युके विशाल रथपर आरूढ़ हो गये॥ ७१॥

ततः सरथनागाश्वा समकम्पत वाहिनी।
पश्यतो भीमसेनस्य पार्षतस्य च पश्यतः॥ ७२॥

तदनन्तर भीमसेन और धृष्टद्युम्नके देखते-देखते रथ, हाथी और घुड़सवारोंसहित सारी पाण्डव-सेना काँपने लगी॥ ७२॥

तत्प्रभग्नं बलं दृष्ट्वा द्रोणेनामिततेजसा।
नाशक्नुवन् वारयितुं समस्तास्ते महारथाः॥ ७३॥

अमिततेजस्वी आचार्य द्रोणके द्वारा अपनी सेनाका व्यूह भंग हुआ देख वे सम्पूर्ण महारथी प्रयत्न करनेपर भी उसे रोकनेमें सफल न हो सके॥ ७३॥

वध्यमानं तु तत् सैन्यं द्रोणेन निशितैः शरैः।
व्यभ्रमत् तत्र तत्रैव क्षोभ्यमाण इवार्णवः॥ ७४॥

द्रोणाचार्यके पैने बाणोंसे पीड़ित हुई वह सेना विक्षुब्ध महासागरके समान वहीं चक्कर काटने लगी॥

तथा दृष्ट्वा च तत्सैन्यं जहृषे तावकं बलम्।
दृष्ट्वाऽऽचार्यं सुसंक्रुद्धं पतन्तं रिपुवाहिनीम्।
चुक्रुशुः सर्वतो योधाः साधु साध्विति भारत॥ ७५॥

द्रोणाचार्यको अत्यन्त कुपित होकर शत्रुसेनापर टूटते और पाण्डव-सेनाको भागते देख आपके सैनिकोंको बड़ा हर्ष हुआ। भारत! आपके सभी योद्धा सब ओरसे द्रोणाचार्यको साधुवाद देने लगे॥ ७५॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि संकुलयुद्धे द्रोणपराक्रमे सप्तसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७७॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें संकुलयुद्धमें द्रोणपराक्रमविषयक सतहत्तरवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ७७॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठके ४½ श्लोक मिलाकर कुल ७९½ श्लोक हैं।]

अष्टसप्ततितमोऽध्यायः

उभय पक्षकी सेनाओंका संकुल युद्ध

संजय उवाच

ततो दुर्योधनो राजा मोहात् प्रत्यागतस्तदा।
शरवर्षैः पुनर्भीमं प्रत्यवारयदच्युतम्॥ १॥

संजय कहते हैं—महाराज! तदनन्तर (मोहनास्त्र-जनित) मोहसे जगनेपर राजा दुर्योधनने युद्धभूमिसे पीछे न हटनेवाले भीमसेनको पुनः बाणोंकी वर्षासे रोक दिया॥

एकीभूतास्ततश्चैव तव पुत्रा महारथाः।
समेत्य समरे भीमं योधयामासुरुद्यताः॥ २॥

फिर आपके सभी महारथी पुत्र समरभूमिमें एकत्र होकर पूर्ण प्रयत्नपूर्वक भीमसेनके साथ युद्ध करने लगे॥ २॥

भीमसेनोऽपि समरे सम्प्राप्य स्वरथं पुनः।
समारुह्य महाबाहुर्ययौ येन तवात्मजः॥ ३॥

महाबाहु भीमसेन भी समरभूमिमें पुनः अपने रथपर सवार हो उधर ही चल दिये, जिस मार्गसे आपका पुत्र दुर्योधन गया था॥ ३॥

प्रगृह्य च महावेगं परासुकरणं दृढम्।
सज्जं शरासनं संख्ये शरैर्विव्याध ते सुतम्॥ ४॥

उन्होंने युद्धस्थलमें मृत्युकी प्राप्ति करानेवाले महान् वेगशाली सुदृढ़ धनुषको लेकर उसपर प्रत्यंचा चढ़ायी और अनेक बाणोंद्वारा आपके पुत्रको घायल कर दिया॥ ४॥

ततो दुर्योधनो राजा भीमसेनं महाबलम्।
नाराचेन सुतीक्ष्णेन भृशं मर्मण्यताडयत्॥ ५॥

तब राजा दुर्योधनने महाबली भीमसेनके मर्मस्थलोंमें अत्यन्त तीखे नाराचसे गहरी चोट पहुँचायी॥ ५॥

सोऽतिविद्धो महेष्वासस्तव पुत्रेण धन्विना।
क्रोधसंरक्तनयनो वेगेनाक्षिप्य कार्मुकम्॥ ६॥
दुर्योधनं त्रिभिर्बाणैर्बाह्वोरुरसि चार्पयत्।
स तत्र शुशुभे राजा शिखरैर्गिरिराडिव॥ ७॥

आपके धनुर्धर पुत्रके द्वारा चलाये हुए बाणसे अत्यन्त पीड़ित हो महाधनुर्धर भीमसेनने क्रोधसे लाल आँखें करके वेगपूर्वक धनुषको खींचा और तीन बाणोंसे दुर्योधनकी दोनों भुजाओं तथा छातीमें चोट पहुँचायी। उन बाणोंद्वारा राजा दुर्योधन तीन शिखरोंसे युक्त गिरिराजकी भाँति शोभा पाने लगा॥ ६-७॥

तौ दृष्ट्वा समरे क्रुद्धौ विनिघ्नन्तौ परस्परम्।
दुर्योधनानुजाः सर्वे शूराः संत्यक्तजीविताः॥ ८॥
संस्मृत्य मन्त्रितं पूर्वं निग्रहे भीमकर्मणः।
निश्चयं परमं कृत्वा निग्रहीतुं प्रचक्रमुः॥ ९॥

क्रोधमें भरे हुए इन दोनों वीरोंको समरभूमिमें एक-दूसरेपर प्रहार करते देख दुर्योधनके सभी शूरवीर छोटे भाई प्राणोंका मोह छोड़कर भयंकर कर्म करनेवाले भीमसेनको जीवित पकड़नेके विषयमें की हुई पहली सलाहको याद करके एक दृढ़ निश्चयपर पहुँचकर उन्हें पकड़नेका उद्योग करने लगे॥ ८-९॥

तानापतत एवाजौ भीमसेनो महाबलः।
प्रत्युद्ययौ महाराज गजः प्रतिगजानिव॥ १०॥

महाराज! उन्हें युद्धमें आक्रमण करते देख जैसे हाथी अपने विपक्षी हाथियोंकी ओर दौड़ता है, उसी प्रकार महाबली भीमसेन उनकी अगवानीके लिये आगे बढ़े॥ १०॥

भृशं क्रुद्धश्च तेजस्वी नाराचेन समार्पयत्।
चित्रसेनं महाराज तव पुत्रं महायशाः॥ ११॥

नरेश्वर! महायशस्वी और तेजस्वी भीमसेन अत्यन्त क्रोधमें भरे हुए थे। उन्होंने आपके पुत्र चित्रसेनपर एक नाराचके द्वारा प्रहार किया॥ ११॥

तथेतरांस्तव सुतांस्ताडयामास भारत।
शरैर्बहुविधैः संख्ये रुक्मपुङ्खैः सुतेजनैः॥ १२॥

भारत! इसी प्रकार रणभूमिमें सोनेकी पाँखवाले अत्यन्त तीखे और बहुसंख्यक बाणोंद्वारा उन्होंने आपके अन्य पुत्रोंको भी पीड़ित किया॥ १२॥

ततः संस्थाप्य समरे तान्यनीकानि सर्वशः।
अभिमन्युप्रभृतयस्ते द्वादश महारथाः॥ १३॥
प्रेषिता धर्मराजेन भीमसेनपदानुगाः।
प्रतिजग्मुर्महाराज तव पुत्रान् महाबलान्॥ १४॥

महाराज! तत्पश्चात् अपनी सेनाओंको सब प्रकारसे समरभूमिमें स्थापित करके भीमसेनके पद-चिह्नोंपर चलनेवाले उन अभिमन्यु आदि बारह महारथियोंने, जिन्हें धर्मराज युधिष्ठिरने भेजा था, आपके महाबली पुत्रोंपर धावा किया॥ १३-१४॥

दृष्ट्वा रथस्थांस्तान् शूरान् सूर्याग्निसमतेजसः।
सर्वानेव महेष्वासान् भ्राजमानान् श्रिया वृतान्॥ १५॥
महाहवे दीप्यमानान् सुवर्णमुकुटोज्ज्वलान्।
तत्यजुः समरे भीमं तव पुत्रा महाबलाः॥ १६॥

वे सब-के-सब रथपर बैठे हुए शूरवीर, सूर्य और अग्निके समान तेजस्वी, महाधनुर्धर, उत्तम शोभासे

प्रकाशमान, सुवर्णमय मुकुटसे जगमग प्रतीत होनेवाले और अत्यन्त कान्तिमान् थे। उस महासमरमें उन्हें आते देखकर आपके महाबली पुत्र भीमसेनको छोड़कर वहाँसे दूर हट गये॥ १५-१६॥

तान् नामृष्यत कौन्तेयो जीवमाना गता इति।
अन्वीय च पुनः सर्वांस्तव पुत्रानपीडयत्॥ १७॥

परंतु वे जीवित लौट गये; यह बात भीमसेनसे नहीं सही गयी। उन्होंने पुनः आपके उन सब पुत्रोंका पीछा करके उन्हें अपने बाणोंसे पीड़ित कर दिया॥ १७॥

अथाभिमन्युं समरे भीमसेनेन संगतम्।
पार्षतेन च सम्प्रेक्ष्य तव सैन्ये महारथाः॥ १८॥
दुर्योधनप्रभृतयः प्रगृहीतशरासनाः।
भृशमश्वैः प्रजवितैः प्रययुर्यत्र ते रथाः॥ १९॥

इधर, उस समरभूमिमें अभिमन्युको भीमसेन तथा धृष्टद्युम्नसे मिला हुआ देख आपकी सेनाके दुर्योधन आदि महारथी हाथोंमें धनुष लिये अत्यन्त वेगशाली अश्वोंद्वारा वहाँ जा पहुँचे, जहाँ वे बारह पाण्डवपक्षीय महारथी विद्यमान थे॥ १८-१९॥

अपराह्णे महाराज प्रावर्तत महारणः।
तावकानां च बलिनां परेषां चैव भारत॥ २०॥

महाराज! भरतनन्दन! तब अपराह्णकालमें आपके और पाण्डवपक्षके अत्यन्त बलवान् योद्धाओंमें बड़ा भारी युद्ध आरम्भ हुआ॥ २०॥

अभिमन्युर्विकर्णस्य हयान् हत्वा महाहवे।
अथैनं पञ्चविंशत्या क्षुद्रकाणां समार्पयत्॥ २१॥

अभिमन्युने उस महायुद्धमें विकर्णके घोड़ोंको मारकर स्वयं विकर्णको भी पचीस बाणोंसे घायल कर दिया॥ २१॥

हताश्वं रथमुत्सृज्य विकर्णस्तु महारथः।
आरुरोह रथं राजंश्चित्रसेनस्य भारत॥ २२॥

भरतवंशी नरेश! घोड़ोंके मारे जानेपर महारथी विकर्ण अपना रथ छोड़कर चित्रसेनके रथपर जा बैठा॥ २२॥

स्थितावेकरथे तौ तु भ्रातरौ कुलवर्धनौ।
आर्जुनिः शरजालेन च्छादयामास भारत॥ २३॥

भरतनन्दन! अभिमन्युने एक रथपर बैठे हुए उन दोनों वंशवर्धक भ्राताओंको अपने बाणोंके जालसे आच्छादित कर दिया॥ २३॥

चित्रसेनो विकर्णश्च कार्ष्णिं पञ्चभिरायसैः।
विव्याध तेन चाकम्पत् कार्ष्णिर्मेरुरिव स्थितः॥ २४॥

चित्रसेन और विकर्णने भी लोहेके पाँच बाणोंसे अभिमन्युको बींध डाला। उस आघातसे अर्जुनकुमार अभिमन्यु विचलित नहीं हुआ। मेरु पर्वतकी भाँति अडिग खड़ा रहा॥ २४॥

दुःशासनस्तु समरे केकयान् पञ्च मारिष।
योधयामास राजेन्द्र तदद्भुतमिवाभवत्॥ २५॥

आर्य! राजेन्द्र! दुःशासनने अकेले ही समरभूमिमें पाँच केकयराजकुमारोंके साथ युद्ध किया। वह एक अद्भुत-सी बात हुई॥ २५॥

द्रौपदेया रणे क्रुद्धा दुर्योधनमवारयन्।
शरैराशीविषाकारैः पुत्रं तव विशाम्पते॥ २६॥

प्रजानाथ! युद्धमें कुपित हुए द्रौपदीके पाँचों पुत्रोंने विषधर सर्पके समान आकारवाले भयंकर बाणोंद्वारा आपके पुत्र दुर्योधनको आगे बढ़नेसे रोक दिया॥ २६॥

पुत्रोऽपि तव दुर्धर्षो द्रौपद्यास्तनयान् रणे।
सायकैर्निशितै राजन्नाजघान पृथक् पृथक्॥ २७॥

राजन्! तब आपके दुर्धर्ष पुत्रने भी तीखे सायकोंद्वारा रणभूमिमें द्रौपदीके पाँचों पुत्रोंपर पृथक्-पृथक् प्रहार किया॥ २७॥

तैश्चापि विद्धः शुशुभे रुधिरेण समुक्षितः।
गिरिः प्रस्रवणैर्यद्वद् गैरिकादिविमिश्रितैः॥ २८॥

फिर उनके द्वारा भी अत्यन्त घायल किये जानेपर आपका पुत्र रक्तसे नहा उठा और गेरु आदि धातुओंसे मिश्रित झरनोंके जलसे युक्त पर्वतकी भाँति शोभा पाने लगा॥ २८॥

भीष्मोऽपि समरे राजन् पाण्डवानामनीकिनीम्।
कालयामास बलवान् पालः पशुगणानिव॥ २९॥

राजन्! तदनन्तर बलवान् भीष्म भी संग्रामभूमिमें पाण्डव-सेनाको उसी प्रकार खदेड़ने लगे, जैसे चरवाहा पशुओंको हाँकता है॥ २९॥

ततो गाण्डीवनिर्घोषः प्रादुरासीद् विशाम्पते।
दक्षिणेन वरूथिन्याः पार्थस्यारीन् विनिघ्नतः॥ ३०॥

प्रजानाथ! तदनन्तर शत्रुओंका संहार करते हुए अर्जुनके गाण्डीवधनुषका घोष सेनाके दक्षिणभागसे प्रकट हुआ॥ ३०॥

उत्तस्थुः समरे तत्र कबन्धानि समन्ततः।
कुरूणां चैव सैन्येषु पाण्डवानां च भारत॥ ३१॥

भारत! वहाँ समरमें कौरवों और पाण्डवोंकी सेनाओंमें चारों ओर कबन्ध उठने लगे॥ ३१॥

शोणितोदं शरावर्तं गजद्वीपं हयोर्मिणम्।
रथनौभिर्नरव्याघ्राः प्रतेरुः सैन्यसागरम्॥ ३२॥

वह सेना एक समुद्रके समान थी। रक्त ही वहाँ जलके समान था। बाणोंकी भँवर उठती थी। हाथी

द्वीपके समान जान पड़ते थे और घोड़े तरंगकी शोभा धारण करते थे। रथरूपी नौकाओंके द्वारा नरश्रेष्ठ वीर उस सैन्य-सागरको पार करते थे॥ ३२॥

छिन्नहस्ता विकवचा विदेहाश्च नरोत्तमाः।
दृश्यन्ते पतितास्तत्र शतशोऽथ सहस्रशः॥ ३३॥

वहाँ सैकड़ों और हजारों नरश्रेष्ठ धरतीपर पड़े दिखायी देते थे। उनमेंसे कितनोंके हाथ कट गये थे, कितने ही कवचहीन हो रहे थे और बहुतोंके शरीर छिन्न-भिन्न हो गये थे॥ ३३॥

निहतैर्मत्तमातङ्गैः शोणितौघपरिप्लुतैः।
भूर्भाति भरतश्रेष्ठ पर्वतैराचिता यथा॥ ३४॥

भरतश्रेष्ठ! मरकर गिरे हुए मतवाले हाथी खूनसे लथपथ हो रहे थे। उनसे ढकी हुई वहाँकी भूमि पर्वतोंसे व्याप्त-सी जान पड़ती थी॥ ३४॥

तत्राद्भुतमपश्याम तव तेषां च भारत।
न तत्रासीत् पुमान् कश्चिद् यो युद्धं नाभिकाङ्क्षति॥ ३५॥

भारत! हमने वहाँ आपके और पाण्डवोंके सैनिकोंका अद्भुत उत्साह देखा। वहाँ ऐसा कोई पुरुष नहीं था, जो युद्ध न चाहता हो॥ ३५॥

एवं युयुधिरे वीराः प्रार्थयाना महद् यशः।
तावकाः पाण्डवैः सार्धमाकाङ्क्षन्तो जयं युधि॥ ३६॥

इस प्रकार महान् यशकी अभिलाषा रखते और युद्धमें विजय चाहते हुए आपके वीर सैनिक पाण्डवोंके साथ युद्ध करते थे॥ ३६॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि संकुलयुद्धे अष्टसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७८॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें संकुलयुद्धविषयक अठहत्तरवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ७८॥

एकोनाशीतितमोऽध्यायः

भीमसेनके द्वारा दुर्योधनकी पराजय, अभिमन्यु और द्रौपदीपुत्रोंका धृतराष्ट्रपुत्रोंके साथ युद्ध तथा छठे दिनके युद्धकी समाप्ति

संजय उवाच

ततो दुर्योधनो राजा लोहितायति भास्करे।
संग्रामरभसो भीमं हन्तुकामोऽभ्यधावत॥ १॥

संजय कहते हैं—महाराज! तदनन्तर जब सूर्यदेवपर संध्याकी लाली छाने लगी, उस समय संग्रामके लिये उत्साह रखनेवाले राजा दुर्योधनने भीमसेनको मार डालनेकी इच्छासे उनपर धावा किया॥ १॥

तमायान्तमभिप्रेक्ष्य नृवीरं दृढवैरिणम्।
भीमसेनः सुसंक्रुद्ध इदं वचनमब्रवीत्॥ २॥

अपने पक्के वैरी नरवीर दुर्योधनको आते देख भीमसेनका क्रोध बहुत बढ़ गया और वे उससे यह वचन बोले—॥ २॥

अयं स कालः सम्प्राप्तो वर्षपूगाभिवाञ्छितः।
अद्य त्वां निहनिष्यामि यदि नोत्सृजसे रणम्॥ ३॥

'दुर्योधन! मैं बहुत वर्षोंसे जिसकी अभिलाषा और प्रतीक्षा कर रहा था, वही यह अवसर आज प्राप्त हुआ है। यदि तू युद्ध छोड़कर भाग नहीं जायगा तो आज तुझे अवश्य मार डालूँगा॥ ३॥

अद्य कुन्त्याः परिक्लेशं वनवासं च कृत्स्नशः।
द्रौपद्याश्च परिक्लेशं प्रणेष्यामि हते त्वयि॥ ४॥

'माता कुन्तीको जो क्लेश उठाना पड़ा है, हमने वनवासका जो कष्ट भोगा है और सभामें द्रौपदीको जो अपमानका दुःख सहन करना पड़ा है, उन सबका बदला आज मैं तेरे मारे जानेपर चुका लूँगा॥ ४॥

यत् पुरा मत्सरी भूत्वा पाण्डवानवमन्यसे।
तस्य पापस्य गान्धारे पश्य व्यसनमागतम्॥ ५॥

'गान्धारीपुत्र! पूर्वकालमें डाह रखकर तू जो हम पाण्डवोंका तिरस्कार करता आया है, उसी पापके फलस्वरूप यह संकट तेरे ऊपर आया है। तू आँख खोलकर देख ले॥ ५॥

कर्णस्य मतमास्थाय सौबलस्य च यत् पुरा।
अचिन्त्य पाण्डवान् कामाद् यथेष्टं कृतवानसि॥ ६॥
याचमानं च यन्मोहाद् दाशार्हमवमन्यसे।
उलूकस्य समादेशं यद् ददासि च हृष्टवत्॥ ७॥
तेन त्वां निहनिष्यामि सानुबन्धं सबान्धवम्।
समीकरिष्ये तत् पापं यत् पुरा कृतवानसि॥ ८॥

'पहले कर्ण और शकुनिके बहकावेमें आकर पाण्डवोंको कुछ भी न गिनते हुए जो तूने इच्छानुसार मनमाना बर्ताव किया है, भगवान् श्रीकृष्ण संधिके लिये प्रार्थना करने आये थे, परंतु तूने मोहवश जो उनका भी तिरस्कार किया और बड़े हर्षमें भरकर उलूकके द्वारा जो तूने यह संदेश दिया था कि तुम मुझे और मेरे

भाइयोंको मारकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो, उसके अनुसार तुझे भाइयों तथा सगे-सम्बन्धियोंसहित अवश्य मार डालूँगा। पहले तूने जो-जो पाप किये हैं, उन सबका बदला चुकाकर बराबर कर दूँगा'॥ ६—८॥

एवमुक्त्वा धनुर्घोरं विकृष्योद्भ्राम्य चासकृत्।
समाधत्त शरान् घोरान् महाशनिसमप्रभान्॥ ९॥

ऐसा कहकर भीमसेनने अपने भयंकर धनुषको बारंबार घुमाकर उसे बलपूर्वक खींचा और वज्रके समान तेजस्वी भयंकर बाणोंको उसके ऊपर रखा॥ ९॥

षड्विंशतिमथ क्रुद्धो मुमोचाशु सुयोधने।
ज्वलिताग्निशिखाकारान् वज्रकल्पानजिह्मगान्॥ १०॥

वे सीधे जानेवाले बाण वज्र तथा प्रज्वलित आगकी लपटोंके समान जान पड़ते थे। उनकी संख्या छब्बीस थी। कुपित हुए भीमसेनने उन सबको शीघ्रतापूर्वक दुर्योधनपर छोड़ दिया॥ १०॥

ततोऽस्य कार्मुकं द्वाभ्यां सूतं द्वाभ्यां च विव्यधे।
चतुर्भिरश्वान् जवनाननयद् यमसादनम्॥ ११॥

तत्पश्चात् भीमसेनने दो बाणोंसे दुर्योधनका धनुष काट दिया, दोसे उसके सारथिको पीड़ित किया और चार बाणोंसे उसके वेगशाली घोड़ोंको यमलोक भेज दिया॥

द्वाभ्यां च सुविकृष्टाभ्यां शराभ्यामरिमर्दनः।
छत्रं चिच्छेद समरे राज्ञस्तस्य नरोत्तम॥ १२॥

नरश्रेष्ठ! फिर शत्रुमर्दन भीमने धनुषको अच्छी तरह खींचकर छोड़े हुए दो बाणोंद्वारा समरभूमिमें राजा दुर्योधनके छत्रको काट दिया॥ १२॥

षड्भिश्च तस्य चिच्छेद ज्वलन्तं ध्वजमुत्तमम्।
छित्त्वा तं च ननादोच्चैस्तव पुत्रस्य पश्यतः॥ १३॥

इसके बाद अपनी प्रभासे प्रकाशित होनेवाले उसके उत्तम ध्वजको छः बाणोंसे खण्डित कर दिया। आपके पुत्रके देखते-देखते उस ध्वजको काटकर भीमसेन उच्चस्वरसे सिंहनाद करने लगे॥ १३॥

रथाच्च स ध्वजः श्रीमान् नानारत्नविभूषितात्।
पपात सहसा भूमौ विद्युज्जलधरादिव॥ १४॥

दुर्योधनके नाना रत्नविभूषित रथसे वह शोभाशाली ध्वज सहसा कटकर पृथ्वीपर गिर पड़ा, मानो मेघोंकी घटासे भूमिपर बिजली गिरी हो॥ १४॥

ज्वलन्तं सूर्यसंकाशं नागं मणिमयं शुभम्।
ध्वजं कुरुपतेश्छिन्नं ददृशुः सर्वपार्थिवाः॥ १५॥

कुरुराज दुर्योधनके उस सूर्यके समान प्रज्वलित नागचिह्नित मणिमय सुन्दर ध्वजको कटकर गिरते समय समस्त राजाओंने देखा॥ १५॥

अथैनं दशभिर्बाणैस्तोत्रैरिव महाद्विपम्।
आजघान रणे वीरं स्मयन्निव महारथः॥ १६॥

इसके बाद महारथी भीमने मुसकराते हुए-से रणभूमिमें वीरवर दुर्योधनको दस बाणोंसे उसी तरह घायल किया, जैसे महावत अंकुशोंसे महान् गजराजको पीड़ा देता है॥ १६॥

ततः स राजा सिन्धूनां रथश्रेष्ठो महारथः।
दुर्योधनस्य जग्राह पार्ष्णिं सत्पुरुषैर्वृतः॥ १७॥

तदनन्तर रथियोंमें श्रेष्ठ सिन्धुराज महारथी जयद्रथने कुछ सत्पुरुषोंके साथ आकर दुर्योधनके पृष्ठभागकी रक्षाका कार्य सँभाला॥ १७॥

कृपश्च रथिनां श्रेष्ठः कौरव्यममितौजसम्।
आरोपयद् रथं राजन् दुर्योधनममर्षणम्॥ १८॥

राजन्! इसी प्रकार रथियोंमें श्रेष्ठ कृपाचार्यने अमर्षमें भरे हुए अमिततेजस्वी कुरुवंशी दुर्योधनको अपने रथपर चढ़ा लिया॥ १८॥

स गाढविद्धो व्यथितो भीमसेनेन संयुगे।
निषसाद रथोपस्थे राजन् दुर्योधनस्तदा॥ १९॥

नरेश्वर! भीमसेनने उस युद्धमें दुर्योधनको बहुत घायल कर दिया था। अतः उस समय वह व्यथासे व्याकुल होकर रथके पिछले भागमें जा बैठा॥ १९॥

परिवार्य ततो भीमं जेतुकामो जयद्रथः।
रथैरनेकसाहस्रैर्भीमस्यावारयद् दिशः॥ २०॥

तत्पश्चात् जयद्रथने भीमसेनको जीतनेकी इच्छा रखकर कई हजार रथोंके द्वारा उन्हें घेर लिया और उनकी सम्पूर्ण दिशाओंको अवरुद्ध कर दिया॥ २०॥

धृष्टकेतुस्ततो राजन्नभिमन्युश्च वीर्यवान्।
केकया द्रौपदेयाश्च तव पुत्रानयोधयन्॥ २१॥

महाराज! इसी समय धृष्टकेतु, पराक्रमी अभिमन्यु, पाँच केकयराजकुमार तथा द्रौपदीके पाँचों पुत्र आपके पुत्रोंके साथ युद्ध करने लगे॥ २१॥

चित्रसेनः सुचित्रश्च चित्राङ्गश्चित्रदर्शनः।
चारुचित्रः सुचारुश्च तथा नन्दोपनन्दकौ॥ २२॥
अष्टावेते महेष्वासाः सुकुमारा यशस्विनः।
अभिमन्युरथं राजन् समन्तात् पर्यवारयन्॥ २३॥

उस युद्धमें चित्रसेन, सुचित्र, चित्रांग, चित्रदर्शन, चारुचित्र, सुचारु, नन्द और उपनन्द—इन आठ यशस्वी सुकुमार एवं महाधनुर्धर वीरोंने अभिमन्युके रथको चारों ओरसे घेर लिया॥ २२-२३॥

आजघान ततस्तूर्णमभिमन्युर्महामनाः।
एकैकं पञ्चभिर्बाणैः शितैः संनतपर्वभिः॥ २४॥

उस समय महामना अभिमन्युने तुरंत ही झुकी हुई गाँठवाले पाँच-पाँच तीखे बाणोंद्वारा प्रत्येकको बींध डाला॥ २४॥

वज्रमृत्युप्रतीकाशैर्विचित्रायुधनिःसृतैः ।
अमृष्यमाणास्ते सर्वे सौभद्रं रथसत्तमम्॥ २५॥
ववृषुर्मार्गणैस्तीक्ष्णैर्गिरिं मेरुमिवाम्बुदाः।

वे सभी बाण विचित्र धनुषद्वारा छोड़े गये थे और सब-के-सब वज्र एवं मृत्युके तुल्य भयंकर थे। उन बाणोंके आघातको आपके पुत्र सहन न कर सके। उन सबने मिलकर रथियोंमें श्रेष्ठ सुभद्राकुमार अभिमन्युपर तीखे बाणोंकी वर्षा आरम्भ की, मानो बादल मेरुगिरिपर जलकी वर्षा कर रहे हों॥ २५½॥

स पीड्यमानः समरे कृतास्त्रो युद्धदुर्मदः॥ २६॥
अभिमन्युर्महाराज तावकान् समकम्पयत्।
यथा देवासुरे युद्धे वज्रपाणिर्महासुरान्॥ २७॥

महाराज! अभिमन्यु अस्त्रविद्याका ज्ञाता और युद्धमें उन्मत्त होकर लड़नेवाला है। उसने समरभूमिमें बाणोंसे पीड़ित होनेपर भी आपके सैनिकोंमें कँपकँपी उत्पन्न कर दी। ठीक उसी तरह, जैसे देवासुर-संग्राममें वज्रधारी इन्द्रने बड़े-बड़े असुरोंको भयसे पीड़ित कर दिया था॥ २६-२७॥

विकर्णस्य ततो भल्लान् प्रेषयामास भारत।
चतुर्दश रथश्रेष्ठो घोरानाशीविषोपमान्॥ २८॥
स तैर्विकर्णस्य रथात् पातयामास वीर्यवान्।
ध्वजं सूतं हयांश्चैव नृत्यमान इवाहवे॥ २९॥

भारत! तदनन्तर रथियोंमें श्रेष्ठ पराक्रमी अभिमन्युने विकर्णके ऊपर सर्पके समान आकारवाले चौदह भयंकर भल्ल चलाये और उनके द्वारा विकर्णके रथसे ध्वज, सारथि और घोड़ोंको मार गिराया। उस समय वह युद्धमें नृत्य-सा कर रहा था॥ २८-२९॥

पुनश्चान्यान् शरान् पीतानकुण्ठाग्रान् शिलाशितान्।
प्रेषयामास संक्रुद्धो विकर्णाय महाबलः॥ ३०॥

तत्पश्चात् उस महाबली वीरने अत्यन्त कुपित हो शानपर चढ़ाकर तेज किये हुए अप्रतिहत धारवाले दूसरे पानीदार बाण विकर्णपर चलाये॥ ३०॥

ते विकर्णं समासाद्य कङ्कबर्हिणवाससः।
भित्त्वा देहं गता भूमिं ज्वलन्त इव पन्नगाः॥ ३१॥

उन बाणोंके पुच्छभागमें मोरके पंख लगे हुए थे। वे विकर्णके शरीरको विदीर्ण करके भीतर घुस गये और वहाँसे भी निकलकर प्रज्वलित सर्पोंकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़े॥ ३१॥

ते शरा हेमपुङ्खाग्रा व्यदृश्यन्त महीतले।
विकर्णरुधिरक्लिन्ना वमन्त इव शोणितम्॥ ३२॥

उन बाणोंके पुच्छ और अग्रभाग सुनहरे थे। वे विकर्णके रुधिरमें भीगे हुए बाण पृथ्वीपर रक्त वमन करते हुए-से दृष्टिगोचर हो रहे थे॥ ३२॥

विकर्णं वीक्ष्य निर्भिन्नं तस्यैवान्ये सहोदराः।
अभ्यद्रवन्त समरे सौभद्रप्रमुखान् रथान्॥ ३३॥

विकर्णको क्षत-विक्षत हुआ देख उसके दूसरे भाइयोंने समरभूमिमें अभिमन्यु आदि रथियोंपर धावा किया॥ ३३॥

अभियात्वा तथैवान्यान् रथांस्तान् सूर्यवर्चसः।
अविध्यन् समरेऽन्योन्यं संरम्भाद् युद्धदुर्मदाः॥ ३४॥

वे सब-के-सब युद्धमें उन्मत्त होकर लड़नेवाले थे। उन्होंने दूसरे-दूसरे रथियोंपर भी, जो अभिमन्युकी ही भाँति सूर्यके समान तेजस्वी थे, आक्रमण किया। फिर वे सब लोग अत्यन्त क्रोधमें भरकर एक-दूसरेको अपने बाणोंद्वारा घायल करने लगे॥ ३४॥

दुर्मुखः श्रुतकर्माणं विद्ध्वा सप्तभिराशुगैः।
ध्वजमेकेन चिच्छेद सारथिं चास्य सप्तभिः॥ ३५॥

दुर्मुखने श्रुतकर्माको सात शीघ्रगामी बाणोंद्वारा बींधकर एकसे उसका ध्वज काट डाला और सात बाणोंसे उसके सारथिको घायल कर दिया॥ ३५॥

अश्वान् जाम्बूनदैर्जालैः प्रच्छन्नान् वातरंहसः।
जघान षड्भिरासाद्य सारथिं चाभ्यपातयत्॥ ३६॥

उसके घोड़े वायुके समान वेगशाली तथा सोनेकी जालीसे आच्छादित थे। दुर्मुखने उन घोड़ोंको छः बाणोंसे मार डाला और सारथिको भी रथसे नीचे गिरा दिया॥ ३६॥

स हताश्वे रथे तिष्ठन् श्रुतकर्मा महारथः।
शक्तिं चिक्षेप संक्रुद्धो महोल्कां ज्वलितामिव॥ ३७॥

महारथी श्रुतकर्मा घोड़ोंके मारे जानेपर भी उसी रथपर खड़ा रहा और अत्यन्त क्रोधमें भरकर उसने दुर्मुखपर प्रज्वलित उल्काके समान एक शक्ति चलायी॥ ३७॥

सा दुर्मुखस्य विमलं वर्म भित्त्वा यशस्विनः।
विदार्य प्राविशद् भूमिं दीप्यमाना स्वतेजसा॥ ३८॥

वह शक्ति अपने तेजसे उद्दीप्त हो रही थी। उसने यशस्वी दुर्मुखके चमकीले कवचको फाड़ डाला। फिर वह धरतीको चीरती हुई उसमें समा गयी॥ ३८॥

तं दृष्ट्वा विरथं तत्र सुतसोमो महारथः।
पश्यतां सर्वसैन्यानां रथमारोपयत् स्वकम्॥ ३९॥

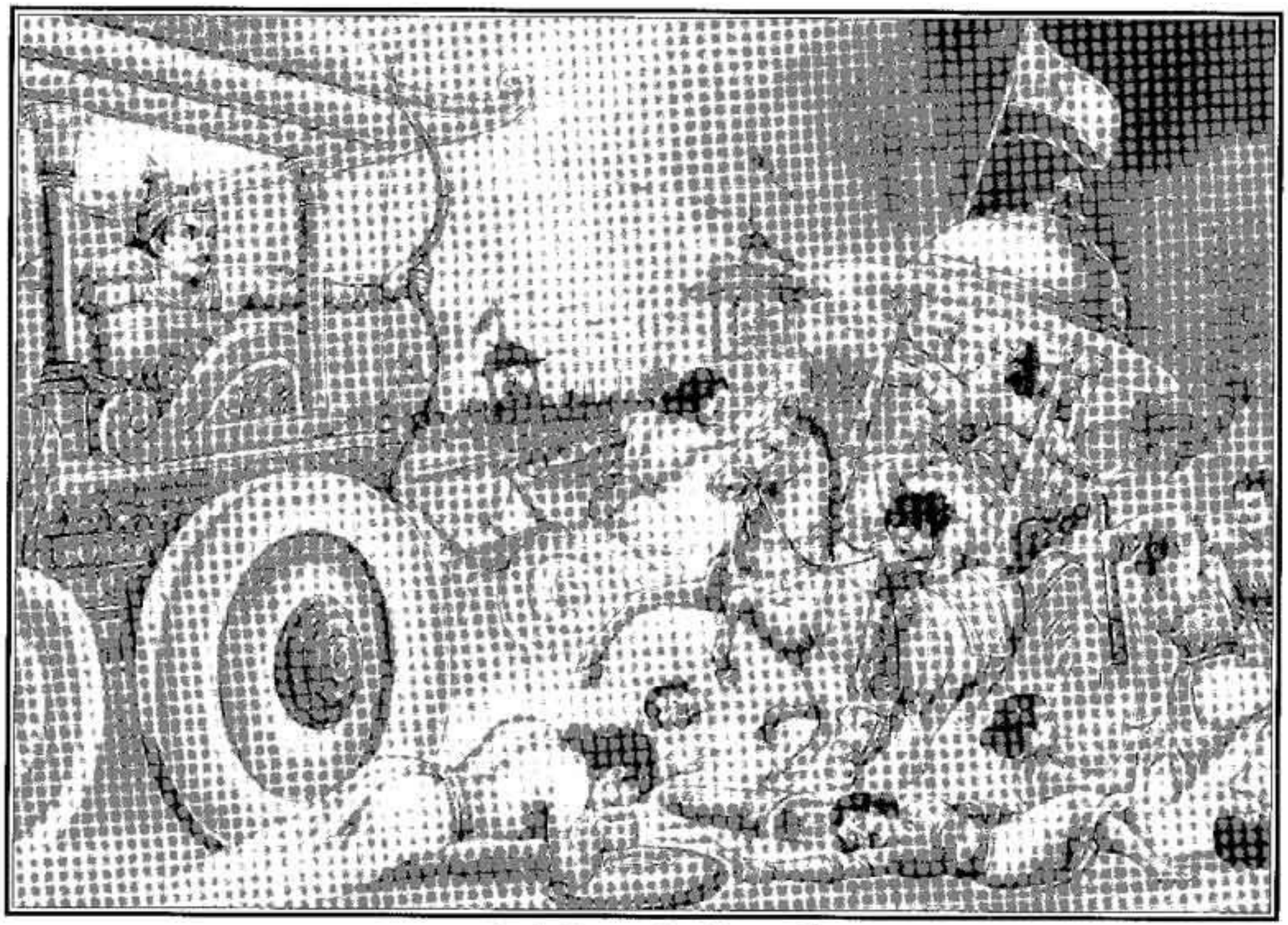

भीमसेनके बाणसे मूर्च्छित दुर्योधन

महारथी सुतसोमने अपने भाई श्रुतकर्माको युद्धमें रथहीन हुआ देख समस्त सैनिकोंके देखते-देखते उसे अपने रथपर चढ़ा लिया॥ ३९॥

श्रुतकीर्तिस्तथा वीरो जयत्सेनं सुतं तव।
अभ्ययात् समरे राजन् हन्तुकामो यशस्विनम्॥ ४०॥

राजन्! इसी प्रकार वीरवर श्रुतकीर्तिने युद्धभूमिमें आपके यशस्वी पुत्र जयत्सेनको मार डालनेकी इच्छासे उसपर आक्रमण किया॥ ४०॥

तस्य विक्षिपतश्चापं श्रुतकीर्तेर्महास्वनम्।
चिच्छेद समरे तूर्णं जयत्सेनः सुतस्तव॥ ४१॥
क्षुरप्रेण सुतीक्ष्णेन प्रहसन्निव भारत।

भारत! श्रुतकीर्ति जब बड़े जोर-जोरसे खींचकर अपने विशाल धनुषकी गम्भीर टंकार फैला रहा था, उसी समय रणभूमिमें आपके पुत्र जयत्सेनने हँसते हुए-से एक तीखे क्षुरप्रद्वारा तुरंत उसका धनुष काट दिया॥

तं दृष्ट्वा छिन्नधन्वानं शतानीकः सहोदरम्॥ ४२॥
अभ्यपद्यत तेजस्वी सिंहवन्निनदन् मुहुः।

अपने भाईका धनुष कटा हुआ देख तेजस्वी शतानीक बारंबार सिंहके समान गर्जना करता हुआ वहाँ आ पहुँचा॥ ४२½॥

शतानीकस्तु समरे दृढं विस्फार्य कार्मुकम्॥ ४३॥
विव्याध दशभिस्तूर्णं जयत्सेनं शिलीमुखैः।
ननाद सुमहानादं प्रभिन्न इव वारणः॥ ४४॥

शतानीकने संग्रामभूमिमें अपने धनुषको जोरसे खींचकर शीघ्रतापूर्वक दस बाण मारकर जयत्सेनको घायल कर दिया। फिर उसने मदवर्षी गजराजके समान बड़े जोरसे गर्जना की॥ ४३-४४॥

अथान्येन सुतीक्ष्णेन सर्वावरणभेदिना।
शतानीको जयत्सेनं विव्याध हृदये भृशम्॥ ४५॥

तत्पश्चात् समस्त आवरणोंका भेदन करनेमें समर्थ दूसरे तीक्ष्ण बाणद्वारा शतानीकने जयत्सेनके वक्षः-स्थलमें गहरी चोट पहुँचायी॥ ४५॥

तथा तस्मिन् वर्तमाने दुष्कर्णो भ्रातुरन्तिके।
चिच्छेद समरे चापं नाकुलेः क्रोधमूर्च्छितः॥ ४६॥

उसके इस प्रकार करनेपर अपने भाईके पास खड़ा हुआ दुष्कर्ण क्रोधसे व्याकुल हो उठा। उसने समरभूमिमें नकुलपुत्र शतानीकका धनुष काट दिया॥

अथान्यद् धनुरादाय भारसाहमनुत्तमम्।
समादत्त शरान् घोरान् शतानीको महाबलः॥ ४७॥

तब महाबली शतानीकने भार सहन करनेमें समर्थ दूसरा अत्यन्त उत्तम धनुष लेकर उसपर भयंकर बाणोंका अनुसंधान किया॥ ४७॥

तिष्ठ तिष्ठेति चामन्त्र्य दुष्कर्णं भ्रातुरग्रतः।
मुमोचास्मै शितान् बाणान् ज्वलितान् पन्नगानिव॥ ४८॥

फिर भाईके सामने ही दुष्कर्णसे 'खड़ा रह, खड़ा रह' ऐसा कहकर उसके ऊपर प्रज्वलित सर्पोंके समान तीखे बाणोंका प्रहार किया॥ ४८॥

ततोऽस्य धनुरेकेन द्वाभ्यां सूतं च मारिष।
चिच्छेद समरे तूर्णं तं च विव्याध सप्तभिः॥ ४९॥

आर्य! तदनन्तर एक बाणसे उसके धनुषको काट दिया, दोसे उसके सारथिको क्षत-विक्षत कर दिया और सात बाणोंसे उस युद्धस्थलमें स्वयं दुष्कर्णको भी तुरंत घायल कर दिया॥ ४९॥

अश्वान् मनोजवांस्तस्य कर्बुरान् वातरंहसः।
जघान निशितैस्तूर्णं सर्वान् द्वादशभिः शरैः॥ ५०॥

दुष्कर्णके घोड़े मन और वायुके समान वेगशाली थे। उनका रंग चितकबरा था। शतानीकने बारह तीखे बाणोंसे उन सब घोड़ोंको भी तुरंत मार डाला॥ ५०॥

अथापरेण भल्लेन सुयुक्तेनाशुपातिना।
दुष्कर्णं सुदृढं क्रुद्धो विव्याध हृदये भृशम्॥ ५१॥
स पपात ततो भूमौ वज्राहत इव द्रुमः।

तत्पश्चात् लक्ष्यको शीघ्र मार गिरानेवाले एक दूसरे भल्ल नामक बाणका उत्तम रीतिसे प्रयोग करके क्रोधमें भरे हुए शतानीकने दुष्कर्णके हृदयमें अत्यन्त गहरा आघात किया। इससे दुष्कर्ण वज्राहत वृक्षकी भाँति पृथ्वीपर गिर पड़ा॥ ५१½॥

दुष्कर्णं व्यथितं दृष्ट्वा पञ्च राजन् महारथाः॥ ५२॥
जिघांसन्तः शतानीकं सर्वतः पर्यवारयन्।

राजन्! दुष्कर्णको आघातसे पीड़ित देख पाँच महारथियोंने शतानीकको मार डालनेकी इच्छासे उसे सब ओरसे घेर लिया॥ ५२½॥

छाद्यमानं शरव्रातैः शतानीकं यशस्विनम्॥ ५३॥
अभ्यधावन्त संक्रुद्धाः केकयाः पञ्च सोदराः।

उनके बाणसमूहोंसे यशस्वी शतानीकको आच्छादित होते देख क्रोधमें भरे हुए पाँच भाई केकयराजकुमारोंने उन पाँचों महारथियोंपर धावा किया॥ ५३½॥

तानभ्यापततः प्रेक्ष्य तव पुत्रा महारथाः॥ ५४॥
प्रत्युद्ययुर्महाराज गजानिव महागजाः।

महाराज! उन्हें आते देख आपके महारथी पुत्र उनका सामना करनेके लिये आगे बढ़े, जैसे हाथी दूसरे हाथियोंसे भिड़नेके लिये आगे बढ़ते हैं॥ ५४½॥

दुर्मुखो दुर्जयश्चैव तथा दुर्मर्षणो युवा॥ ५५॥
शत्रुञ्जयः शत्रुसहः सर्वे क्रुद्धा यशस्विनः।
प्रत्युद्याता महाराज केकयान् भ्रातरः समम्॥ ५६॥

नरेश्वर! दुर्मुख, दुर्जय, युवा वीर दुर्मर्षण, शत्रुंजय तथा शत्रुसह—ये सब-के-सब यशस्वी वीर क्रोधमें भरकर पाँचों भाई केकयोंका सामना करनेके लिये एक साथ आगे बढ़े॥ ५५-५६॥

रथैर्नगरसंकाशैर्हयैर्युक्तैर्मनोजवैः।
नानावर्णविचित्राभिः पताकाभिरलंकृतैः॥ ५७॥
वरचापधरा वीरा विचित्रकवचध्वजाः।
विविशुस्ते परं सैन्यं सिंहा इव वनाद् वनम्॥ ५८॥

उनके रथ नगरोंके समान प्रतीत होते थे। उनमें मनके समान वेगशाली घोड़े जुते हुए थे। नाना प्रकारके रूप-रंगवाली और विचित्र पताकाएँ उन्हें अलंकृत कर रही थीं। ऐसे रथोंपर आरूढ़ सुन्दर धनुष धारण किये विचित्र कवच और ध्वजोंसे सुशोभित उन वीरोंने शत्रुकी सेनामें उसी प्रकार प्रवेश किया, जैसे सिंह एक वनसे दूसरे वनमें प्रवेश करते हैं॥ ५७-५८॥

तेषां सुतुमुलं युद्धं व्यतिषक्तरथद्विपम्।
अवर्तत महारौद्रं निघ्नतामितरेतरम्॥ ५९॥

फिर तो एक-दूसरेपर प्रहार करते हुए उन सभी महारथियोंमें अत्यन्त भयंकर तुमुल युद्ध होने लगा। रथोंसे रथ और हाथियोंसे हाथी भिड़ गये॥ ५९॥

अन्योन्यागस्कृतां राजन् यमराष्ट्रविवर्धनम्।
मुहूर्तास्तमिते सूर्ये चक्रुर्युद्धं सुदारुणम्॥ ६०॥

राजन्! एक-दूसरेपर प्रहार करनेवाले उन महारथियोंका वह युद्ध यमलोककी वृद्धि करनेवाला था। सूर्यास्तके दो घड़ी बादतक उन सब लोगोंने बड़ा भयंकर युद्ध किया॥ ६०॥

रथिनः सादिनश्चाथ व्यकीर्यन्त सहस्रशः।
ततः शान्तनवः क्रुद्धः शरैः संनतपर्वभिः॥ ६१॥
नाशयामास सेनां तां भीष्मस्तेषां महात्मनाम्।
पञ्चालानां च सैन्यानि शरैर्निन्ये यमक्षयम्॥ ६२॥

उसमें सहस्रों रथी और घुड़सवार प्राणशून्य होकर बिखर गये। तब शान्तनुनन्दन भीष्मने कुपित होकर झुकी हुई गाँठवाले बाणोंद्वारा उन महामना वीरोंकी सेनाका विनाश कर डाला; पांचालोंकी सेनाकी कितनी ही टुकड़ियोंको अपने बाणोंद्वारा यमलोक पहुँचा दिया॥

एवं भित्त्वा महेष्वासः पाण्डवानामनीकिनीम्।
कृत्वावहारं सैन्यानां ययौ स्वशिबिरं नृप॥ ६३॥

नरेश्वर! महाधनुर्धर भीष्म इस प्रकार पाण्डव-सेनाका संहार करके अपनी समस्त सेनाओंको युद्धसे लौटाकर अपने शिविरको चले गये॥ ६३॥

(नाशयामासतुर्वीरौ धृष्टद्युम्नवृकोदरौ।
कौरवाणामनीकानि शरैः संनतपर्वभिः॥)

इसी प्रकार धृष्टद्युम्न और भीमसेन—इन दोनों वीरोंने झुकी हुई गाँठवाले बाणोंद्वारा कौरवसेनाओंका विनाश कर डाला।

धर्मराजोऽपि सम्प्रेक्ष्य धृष्टद्युम्नवृकोदरौ।
मूर्ध्नि चैतावुपाघ्राय प्रहृष्टः शिबिरं ययौ॥ ६४॥

धर्मराज युधिष्ठिरने धृष्टद्युम्न और भीमसेन दोनोंसे मिलकर उनका मस्तक सूँघा और बड़े हर्षके साथ अपने शिविरको प्रस्थान किया॥ ६४॥

(अर्जुनो वासुदेवश्च कौरवाणामनीकिनीम्।
हत्वा विद्राव्य च शरैः शिबिरायैव जग्मतुः॥)

अर्जुन और भगवान् श्रीकृष्ण भी कौरव-सेनाको बाणोंद्वारा मारकर तथा रणभूमिसे भगाकर शिविरको ही चल दिये।

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि षष्ठदिवसावहारे एकोनाशीतितमोऽध्यायः॥ ७९॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें छठे दिनके युद्धमें सेनाके शिविरके लिये लौटनेसे सम्बन्ध रखनेवाला उन्यासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ७९॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठके २ श्लोक मिलाकर कुल ६६ श्लोक हैं।]

अशीतितमोऽध्यायः

भीष्मद्वारा दुर्योधनको आश्वासन तथा सातवें दिनके युद्धके लिये कौरव-सेनाका प्रस्थान

संजय उवाच

अथ शूरा महाराज परस्परकृतागसः।
जग्मुः स्वशिबिराण्येव रुधिरेण समुक्षिताः॥ १॥

संजय कहते हैं—महाराज! आपसमें एक-दूसरेको चोट पहुँचानेवाले वे सभी शूरवीर खूनसे लथपथ हो अपने शिविरोंको ही चले गये॥ १॥

विश्राम्य च यथान्यायं पूजयित्वा परस्परम्।
संनद्धाः समदृश्यन्त भूयो युद्धचिकीर्षया॥ २॥

यथायोग्य विश्राम करके एक-दूसरेकी प्रशंसा करते हुए वे लोग पुनः युद्ध करनेकी इच्छासे तैयार दिखायी देने लगे॥ २॥

ततस्तव सुतो राजंश्चिन्तयाभिपरिप्लुतः।
विस्रवच्छोणितात्काङ्गः पप्रच्छेदं पितामहम्॥ ३॥

राजन्! तदनन्तर आपके पुत्र दुर्योधनने, जिसका शरीर बहते हुए रक्तसे भीगा हुआ था, चिन्तामग्न होकर पितामह भीष्मके पास जाकर इस प्रकार पूछा— ॥ ३॥

सैन्यानि रौद्राणि भयानकानि
व्यूढानि सम्यग् बहुलध्वजानि।
विदार्य हत्वा च निपीड्य शूरा-
स्ते पाण्डवानां त्वरिता महारथाः॥ ४॥

'दादाजी! हमारी सेनाएँ अत्यन्त भयंकर तथा रौद्ररूप धारण करनेवाली हैं। उनकी व्यूह-रचना भी अच्छे ढंगसे की जाती है। इन सेनाओंमें ध्वजोंकी संख्या बहुत अधिक है, तथापि शूरवीर पाण्डव महारथी उनमें प्रवेश करके तुरंत हमारे सैनिकोंको विदीर्ण करते, मारते और पीड़ा देकर चले जाते हैं॥ ४॥

सम्मोह्य सर्वान् युधि कीर्तिमन्तो
व्यूहं च तं मकरं वज्रकल्पम्।
प्रविश्य भीमेन रणे हतोऽस्मि
घोरैः शरैर्मृत्युदण्डप्रकाशैः॥ ५॥

'वे युद्धमें सबको मोहित करके अपनी कीर्तिका विस्तार करते हैं। देखिये न, भीमसेनने वज्रके समान दुर्भेद्य मकर-व्यूहमें प्रवेश करके मृत्युदण्डके समान भयंकर बाणोंद्वारा मुझे युद्धस्थलमें क्षत-विक्षत कर दिया है॥ ५॥

क्रुद्धं तमुद्वीक्ष्य भयेन राजन्
सम्मूर्च्छितो न लभे शान्तिमद्य।
इच्छे प्रसादात् तव सत्यसंध
प्राप्तुं जयं पाण्डवेयांश्च हन्तुम्॥ ६॥

'राजन्! भीमसेनको कुपित देखकर मैं भयसे व्याकुल हो उठता हूँ। आज मुझे शान्ति नहीं मिल रही है। सत्यप्रतिज्ञ पितामह! मैं आपकी कृपासे पाण्डवोंको मारना और उनपर विजय पाना चाहता हूँ'॥ ६॥

तेनैवमुक्तः प्रहसन् महात्मा
दुर्योधनं मन्युगतं विदित्वा।
तं प्रत्युवाचाविमना मनस्वी
गङ्गासुतः शस्त्रभृतां वरिष्ठः॥ ७॥

दुर्योधनके ऐसा कहनेपर और उसे क्रोधमें भरा हुआ जानकर शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ मनस्वी महात्मा गंगानन्दन भीष्मने जोर-जोरसे हँसते हुए प्रसन्न मनसे उसे इस प्रकार उत्तर दिया— ॥ ७॥

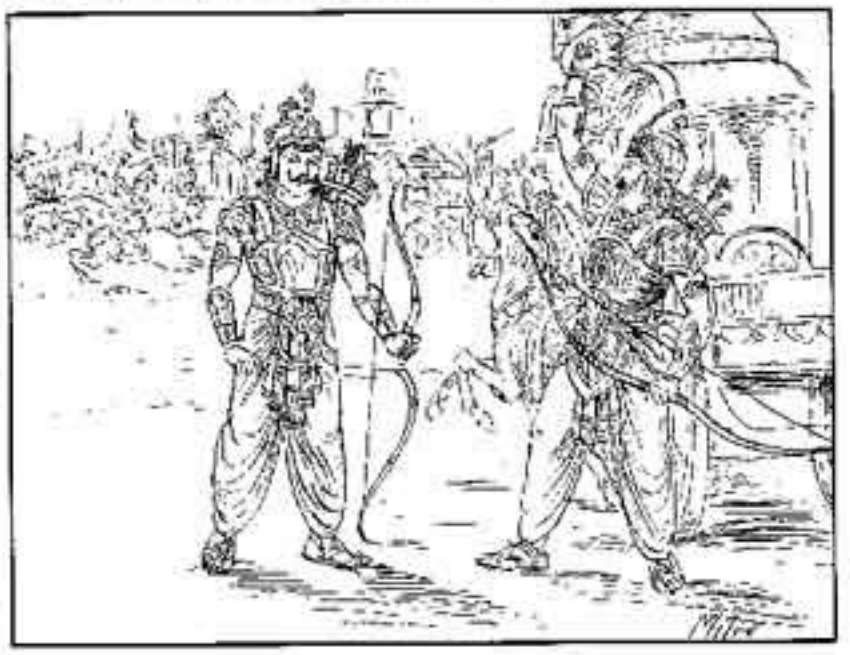

परेण यत्नेन विगाह्य सेनां
सर्वात्मनाहं तव राजपुत्र।
इच्छामि दातुं विजयं सुखं च
न चात्मानं छादयेऽहं त्वदर्थे॥ ८॥

'राजकुमार! मैं अपनी पूरी शक्ति लगाकर महान् प्रयत्नके साथ पाण्डवोंकी सेनामें प्रवेश करके तुम्हें विजय और सुख देना चाहता हूँ। तुम्हारे लिये अपने-आपको छिपाकर नहीं रखता हूँ॥ ८॥

एते तु रौद्रा बहवो महारथा
यशस्विनः शूरतमाः कृतास्त्राः।
ये पाण्डवानां समरे सहाया
जितक्लमा रोषविषं वमन्ति॥ ९॥

'जो समरभूमिमें पाण्डवोंके सहायक हुए हैं, उनमें बहुत-से ये महारथी वीर अत्यन्त भयंकर, परम शौर्यसम्पन्न, शस्त्रविद्याके विद्वान् तथा यशस्वी हैं। इन्होंने थकावटको जीत लिया है और ये हमलोगोंपर रोषरूपी विष उगल रहे हैं॥ ९॥

ते नैव शक्याः सहसा विजेतुं
वीर्योद्धताः कृतवैरास्त्वया च।
अहं सेनां प्रतियोत्स्यामि राजन्
सर्वात्मना जीवितं त्यज्य वीर॥ १०॥

'ये बल-पराक्रममें प्रचण्ड और तुम्हारे साथ वैर बाँधे हुए हैं। इन्हें सहसा पराजित नहीं किया जा सकता है। राजन्! वीरवर! मैं सम्पूर्ण शरीरसे अपने प्राणोंकी परवा छोड़कर पाण्डवोंकी सेनाके साथ युद्ध करूँगा॥ १०॥

रणे तवार्थाय महानुभाव
न जीवितं रक्ष्यतमं ममाद्य।
सर्वांस्तवार्थाय सदेवदैत्यान्
घोरान् दहेयं किमु शत्रुसेनाम्॥ ११॥

'महानुभाव! तुम्हारे कार्यकी सिद्धिके लिये अब युद्धमें मुझे अपने जीवनकी रक्षा भी अत्यन्त आवश्यक नहीं जान पड़ती है। मैं तुम्हारे मनोरथकी सिद्धिके लिये देवताओंसहित समस्त भयंकर दैत्योंको भी दग्ध कर सकता हूँ; फिर शत्रुओंकी सेनाकी तो बात ही क्या है?॥

तान् पाण्डवान् योधयिष्यामि राजन्
प्रियं च ते सर्वमहं करिष्ये।
श्रुत्वैव चैतद् वचनं तदानीं
दुर्योधनः प्रीतमना बभूव॥ १२॥

'राजन्! मैं उन पाण्डवोंसे भी युद्ध करूँगा और तुम्हारा सम्पूर्ण प्रिय कार्य सिद्ध करूँगा।' उस समय भीष्मजीकी यह बात सुनते ही दुर्योधनका मन प्रसन्न हो गया॥ १२॥

सर्वाणि सैन्यानि ततः प्रहृष्टो
निर्गच्छतेत्याह नृपांश्च सर्वान्।
तदाज्ञया तानि विनिर्ययुर्द्रुतं
गजाश्वपादातरथायुतानि ॥ १३॥

तदनन्तर दुर्योधनने हर्षमें भरकर सम्पूर्ण राजाओं तथा सारी सेनाओंसे कहा—'युद्धके लिये निकलो।' राजा दुर्योधनकी आज्ञा पाकर सहस्रों हाथी, घोड़े, पैदल तथा रथोंसे भरी हुई वे सारी सेनाएँ तुरंत रणके लिये प्रस्थित हुईं॥ १३॥

प्रहर्षयुक्तानि तु तानि राजन्
महान्ति नानाविधशस्त्रवन्ति।
स्थितानि नागाश्वपदातिमन्ति
विरेजुराजौ तव राजन् बलानि॥ १४॥

महाराज! आपकी वे विशाल सेनाएँ नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंसे सम्पन्न हो अत्यन्त हर्ष एवं उत्साहमें भरी हुई थीं। राजन्! घोड़े, हाथी और पैदलोंसे युक्त हो रणभूमिमें खड़ी हुई उन सेनाओंकी बड़ी शोभा होती थी॥ १४॥

शस्त्रास्त्रविद्भिर्नरवीरयोधै-
रधिष्ठिताः सैन्यगणास्त्वदीयाः।
रथौघपादातगजाश्वसंघैः
प्रयाद्भिराजौ विधिवत् प्रणुन्नैः॥ १५॥
समुद्धतं वै तरुणार्कवर्णं
रजो बभौच्छादयन् सूर्यरश्मीन्।
रेजुः पताका रथदन्तिसंस्था
वातेरिता भ्राम्यमाणाः समन्तात्॥ १६॥

आपकी सेनाओंके सेनापति अस्त्र-शस्त्रोंके ज्ञाता एवं नरवीर योद्धा थे। उनसे विधिपूर्वक अनुशासित हो रथसमूह, पैदल, हाथी और घोड़ोंके समुदाय जब युद्ध-भूमिमें जाने लगे, तब उनके पैरोंसे उठी हुई धूल सूर्यकी किरणोंको आच्छादित करके प्रातःकालिक सूर्यकी प्रभाके समान कान्तिमती प्रतीत होने लगी। रथों और हाथियोंपर खड़ी की हुई पताकाएँ चारों ओर वायुकी प्रेरणासे फहराती हुई बड़ी शोभा पा रही थीं॥

नानारङ्गाः समरे तत्र राजन्
मेघैर्युता विद्युतः खे यथैव।
वृन्दैः स्थिताश्चापि सुसम्प्रयुक्ता-
श्चकाशिरे दन्तिगणाः समन्तात्॥ १७॥

राजन्! जैसे आकाशमें बादलोंके साथ बिजलियाँ चमक रही हों, उसी प्रकार उस समरांगणमें चारों ओर अनेक रंगोंके दन्तार हाथी झुंड-के-झुंड खड़े हुए शोभा पा रहे थे। उनका संचालन सुन्दर ढंगसे हो रहा था॥ १७॥

धनूंषि विस्फारयतां नृपाणां
बभूव शब्दस्तुमुलोऽतिघोरः।
विमथ्यतो देवमहासुरौघै-
र्यथार्णवस्यादियुगे तदानीम्॥ १८॥

जैसे आदियुगमें देवताओं और दैत्योंके समूहद्वारा समुद्रके मथे जाते समय अत्यन्त घोर शब्द होता था, उसी प्रकार उस समय युद्धस्थलमें अपने धनुषोंकी टंकार करनेवाले राजाओंका अत्यन्त भयानक तुमुल शब्द प्रकट हो रहा था॥

तदुग्रनागं बहुरूपवर्णं
तवात्मजानां समुदीर्णमेवम्।
बभूव सैन्यं रिपुसैन्यहन्तृ
युगान्तमेघौघनिभं तदानीम्॥ १९॥

महाराज! आपके पुत्रोंकी वह सेना भयंकर गजराजोंसे भरी थी। वह अनेक रूप-रंगोंकी दिखायी देती थी। उसका वेग बढ़ता ही जा रहा था। वह उस समय प्रलयकालके मेघसमुदायकी भाँति शत्रु-सेनाका संहार करनेमें समर्थ प्रतीत होती थी॥ १९॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि भीष्मदुर्योधनसंवादे अशीतितमोऽध्यायः॥ ८०॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें भीष्म-दुर्योधन-संवादविषयक अस्सीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८०॥

एकाशीतितमोऽध्यायः

सातवें दिनके युद्धमें कौरव-पाण्डव-सेनाओंका मण्डल और वज्रव्यूह बनाकर भीषण संघर्ष

संजय उवाच

अथात्मजं तव पुनर्गाङ्गेयो ध्यानमास्थितम्।
अब्रवीद् भरतश्रेष्ठः सम्प्रहर्षकरं वचः॥ १॥

संजय कहते हैं—महाराज! तदनन्तर आपके पुत्रको चिन्तामें निमग्न देख भरतश्रेष्ठ गंगानन्दन भीष्मने उससे पुनः हर्ष बढ़ानेवाली बात कही— ॥ १॥

अहं द्रोणश्च शल्यश्च कृतवर्मा च सात्वतः।
अश्वत्थामा विकर्णश्च भगदत्तोऽथ सौबलः॥ २॥
विन्दानुविन्दावावन्त्यौ बाह्लीकः सह बाह्लिकैः।
त्रिगर्तराजो बलवान् मागधश्च सुदुर्जयः॥ ३॥
बृहद्बलश्च कौसल्यश्चित्रसेनो विविंशतिः।
रथाश्च बहुसाहस्राः शोभनाश्च महाध्वजाः॥ ४॥
देशजाश्च हया राजन् स्वारूढा हयसादिभिः।
गजेन्द्राश्च मदोद्वृत्ताः प्रभिन्नकरटामुखाः॥ ५॥
पादाताश्च तथा शूरा नानाप्रहरणध्वजाः।
नानादेशसमुत्पन्नास्त्वदर्थे योद्धुमुद्यताः॥ ६॥

'राजन्! मैं, द्रोणाचार्य, शल्य, यदुवंशी कृतवर्मा, अश्वत्थामा, विकर्ण, भगदत्त, सुबलपुत्र शकुनि, अवन्ति-देशके राजकुमार विन्द और अनुविन्द, बाह्लिकदेशीय वीरोंके साथ राजा बाह्लीक, बलवान् त्रिगर्तराज, अत्यन्त दुर्जय मगधराज, कोसलनरेश बृहद्बल, चित्रसेन, विविंशति तथा विशाल ध्वजाओंवाले परम सुन्दर कई हजार रथ, घुड़सवारोंसे युक्त देशीय घोड़े, गण्डस्थलसे मदकी धारा बहानेवाले मदोन्मत्त गजराज और भाँति-भाँतिके आयुध एवं ध्वज धारण करनेवाले विभिन्न देशोंके शूरवीर पैदल सैनिक तुम्हारे लिये युद्ध करनेको उद्यत हैं॥ २—६॥

एते चान्ये च बहवस्त्वदर्थे त्यक्तजीविताः।
देवानपि रणे जेतुं समर्था इति मे मतिः॥ ७॥

'ये तथा और भी बहुत-से ऐसे सैनिक हैं, जिन्होंने तुम्हारे लिये अपना जीवन निछावर कर दिया है। मेरा तो ऐसा विश्वास है कि ये सब मिलकर युद्धस्थलमें देवताओंको भी जीतनेमें समर्थ हैं॥ ७॥

अवश्यं हि मया राजंस्तव वाच्यं हितं सदा।
अशक्याः पाण्डवा जेतुं देवैरपि सवासवैः॥ ८॥

'राजन्! मुझे सदा तुम्हारे हितकी बात अवश्य कहनी चाहिये; इसीलिये कहता हूँ—पाण्डवोंको इन्द्र-सहित सम्पूर्ण देवता भी जीत नहीं सकते॥ ८॥

वासुदेवसहायाश्च महेन्द्रसमविक्रमाः।
सर्वथाहं तु राजेन्द्र करिष्ये वचनं तव॥ ९॥

'राजेन्द्र! एक तो वे देवराज इन्द्रके समान पराक्रमी हैं, दूसरे साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण उनके सहायक हैं,(अतः उन्हें जीतना असम्भव है तथापि) मैं सर्वथा तुम्हारे वचनका पालन करूँगा॥ ९॥

पाण्डवांश्च रणे जेष्ये मां वा जेष्यन्ति पाण्डवाः।
एवमुक्त्वा ददावस्मै विशल्यकरणीं शुभाम्॥ १०॥
ओषधीं वीर्यसम्पन्नां विशल्यश्चाभवत् तदा।

'पाण्डवोंको मैं युद्धमें जीतूँगा अथवा पाण्डव ही मुझे परास्त कर देंगे।' ऐसा कहकर भीष्मजीने दुर्योधनको विशल्यकरणी नामक शुभ एवं शक्तिशालिनी ओषधि प्रदान की। उस समय उसके प्रभावसे दुर्योधनके शरीरमें धँसे हुए बाण आसानीसे निकल गये और वह आघातजनित घाव तथा उसकी पीड़ासे मुक्त हो गया॥ १०½॥

ततः प्रभाते विमले स्वेन सैन्येन वीर्यवान्॥ ११॥
अव्यूहत स्वयं व्यूहं भीष्मो व्यूहविशारदः।
मण्डलं मनुजश्रेष्ठो नानाशस्त्रसमाकुलम्॥ १२॥

तदनन्तर निर्मल प्रभातकी बेलामें व्यूहविशारद नरश्रेष्ठ बलवान् भीष्मने अपनी सेनाके द्वारा स्वयं ही मण्डल नामक व्यूहका निर्माण किया, जो नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंसे सम्पन्न था॥ ११-१२॥

सम्पूर्णं योधमुख्यैश्च तथा दन्तिपदातिभिः।
रथैरनेकसाहस्रैः समन्तात् परिवारितम्॥ १३॥

वह व्यूह हाथी और पैदल आदि मुख्य-मुख्य योद्धाओंसे भरा हुआ था। कई सहस्र रथोंने उसे सब ओरसे घेर रखा था॥ १३॥

अश्ववृन्दैर्महद्भिश्च ऋष्टितोमरधारिभिः।
नागे नागे रथाः सप्त सप्त चाश्वा रथे रथे॥ १४॥
अन्वश्वं दश धानुष्का धानुष्के दश चर्मिणः।

वह व्यूह ऋष्टि और तोमर धारण करनेवाले अश्वारोहियोंके महान् समुदायोंसे भरा था। एक-एक हाथीके पीछे सात-सात रथ, एक-एक रथके साथ सात-सात घुड़सवार, प्रत्येक घुड़सवारके पीछे दस-दस धनुर्धर और प्रत्येक धनुर्धरके साथ दस-दस ढाल-तलवार लिये रहनेवाले वीर खड़े थे॥ १४½॥

एवं व्यूढं महाराज तव सैन्यं महारथैः॥ १५॥
स्थितं रणाय महते भीष्मेण युधि पालितम्।

महाराज! इस प्रकार महारथियोंके द्वारा व्यूहबद्ध होकर आपकी सेना महायुद्धके लिये खड़ी थी और भीष्म युद्धस्थलमें उसकी रक्षा करते थे॥ १५½॥

दशाश्वानां सहस्राणि दन्तिनां च तथैव च॥ १६॥
रथानामयुतं चापि पुत्राश्च तव दंशिताः।
चित्रसेनादयः शूरा अभ्यरक्षन् पितामहम्॥ १७॥

उसमें दस हजार घोड़े, उतने ही हाथी और दस हजार रथ तथा आपके चित्रसेन आदि शूरवीर पुत्र कवच धारण करके पितामह भीष्मकी रक्षा कर रहे थे॥

रक्ष्यमाणः स तैः शूरैर्गोप्यमानाश्च तेन ते।
संनद्धाः समदृश्यन्त राजानश्च महाबलाः॥ १८॥

उन वीरोंसे भीष्म सुरक्षित थे और भीष्मसे उन शूरवीरोंकी रक्षा हो रही थी। वहाँ बहुत-से महाबली नरेश कवच बाँधकर युद्धके लिये तैयार दिखायी देते थे॥ १८॥

दुर्योधनस्तु समरे दंशितो रथमास्थितः।
व्यराजत श्रिया जुष्टो यथा शक्रस्त्रिविष्टपे॥ १९॥

शोभासम्पन्न राजा दुर्योधन भी युद्धस्थलमें कवच बाँधकर रथपर आरूढ़ हो ऐसा सुशोभित हो रहा था, मानो देवराज इन्द्र स्वर्गमें अपनी दिव्य प्रभासे प्रकाशित हो रहे हों॥ १९॥

ततः शब्दो महानासीत् पुत्राणां तव भारत।
रथघोषश्च विपुलो वादित्राणां च निस्वनः॥ २०॥

भारत! तदनन्तर आपके पुत्रोंका महान् सिंहनाद सुनायी देने लगा, साथ ही रथों और वाद्योंका गम्भीर घोष गूँज उठा॥ २०॥

भीष्मेण धार्तराष्ट्राणां व्यूढः प्रत्यङ्मुखो युधि।
मण्डलः स महाव्यूहो दुर्भेद्योऽमित्रघातनः॥ २१॥

भीष्मने युद्धस्थलमें कौरव-सैनिकोंका पश्चिमाभिमुख व्यूह बनाया था। वह मण्डल नामक महाव्यूह दुर्भेद्य होनेके साथ ही शत्रुओंका संहार करनेवाला था॥ २१॥

सर्वतः शुशुभे राजन् रणेऽरीणां दुरासदः।
मण्डलं तु समालोक्य व्यूहं परमदुर्जयम्॥ २२॥
स्वयं युधिष्ठिरो राजा वज्रं व्यूहमथाकरोत्।

राजन्! उस रणभूमिमें सब ओर उस व्यूहकी बड़ी शोभा हो रही थी। वह शत्रुओंके लिये सर्वथा दुर्गम था। कौरवोंके परम दुर्जय मण्डलव्यूहको देखकर राजा युधिष्ठिरने स्वयं अपनी सेनाके लिये वज्रव्यूहका निर्माण किया॥ २२½॥

तथा व्यूढेष्वनीकेषु यथास्थानमवस्थिताः॥ २३॥
रथिनः सादिनः सर्वे सिंहनादमथानदन्।

इस प्रकार सेनाओंकी व्यूह-रचना हो जानेपर यथास्थान खड़े हुए रथी और घुड़सवार आदि सब सैनिक सिंहनाद करने लगे॥ २३½॥

विभित्सवस्ततो व्यूहं निर्ययुर्युद्धकाङ्क्षिणः॥ २४॥
इतरेतरतः शूराः सहसैन्याः प्रहारिणः।

तत्पश्चात् प्रहार करनेमें कुशल सभी शूरवीर एक-दूसरेका व्यूह तोड़ने और परस्पर युद्ध करनेकी इच्छासे सेनासहित आगे बढ़े॥ २४½॥

भारद्वाजो ययौ मत्स्यं द्रौणिश्चापि शिखण्डिनम्॥ २५॥
स्वयं दुर्योधनो राजा पार्षतं समुपाद्रवत्।

द्रोणाचार्यने विराटपर और अश्वत्थामाने शिखण्डीपर धावा किया। स्वयं राजा दुर्योधनने द्रुपदपर चढ़ाई की॥

नकुलः सहदेवश्च मद्रराजानमीयतुः॥ २६॥
विन्दानुविन्दावावन्त्याविरावन्तमभिद्रुतौ ।

नकुल और सहदेवने अपने मामा मद्रराज शल्यपर धावा किया। अवन्तीके विन्द और अनुविन्दने इरावान्पर आक्रमण किया॥ २६½॥

सर्वे नृपास्तु समरे धनंजयमयोधयन्॥ २७॥
भीमसेनो रणे यान्तं हार्दिक्यं समवारयत्।

समस्त नरेशोंने संग्रामभूमिमें अर्जुनके साथ युद्ध किया। भीमसेनने युद्धमें विचरते हुए कृतवर्माको आगे बढ़नेसे रोका॥ २७½॥

चित्रसेनं विकर्णं च तथा दुर्मर्षणं विभुः॥ २८॥
आर्जुनिः समरे राजंस्तव पुत्रानयोधयत्।

राजन्! शक्तिशाली अर्जुनकुमार अभिमन्युने संग्रामभूमिमें आपके तीन पुत्र चित्रसेन, विकर्ण तथा दुर्मर्षणके साथ युद्ध आरम्भ किया॥ २८½॥

प्राग्ज्योतिषो महेष्वासो हैडिम्बं राक्षसोत्तमम्॥ २९॥
अभिदुद्राव वेगेन मत्तो मत्तमिव द्विपम्।

महाधनुर्धर भगदत्तने राक्षसप्रवर घटोत्कचपर बड़े वेगसे आक्रमण किया, मानो एक मतवाला हाथी दूसरे मतवाले हाथीपर टूट पड़ा हो॥ २९½॥

अलम्बुषस्तदा राजन् सात्यकिं युद्धदुर्मदम्॥ ३०॥
ससैन्यं समरे क्रुद्धो राक्षसः समुपाद्रवत्।

राजन्! उस समय राक्षस अलम्बुषने युद्धमें उन्मत्त होकर लड़नेवाले सेनासहित सात्यकिपर क्रोधपूर्वक धावा किया॥ ३०½॥

भूरिश्रवा रणे यत्तो धृष्टकेतुमयोधयत्॥ ३१॥
श्रुतायुषं च राजानं धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः।

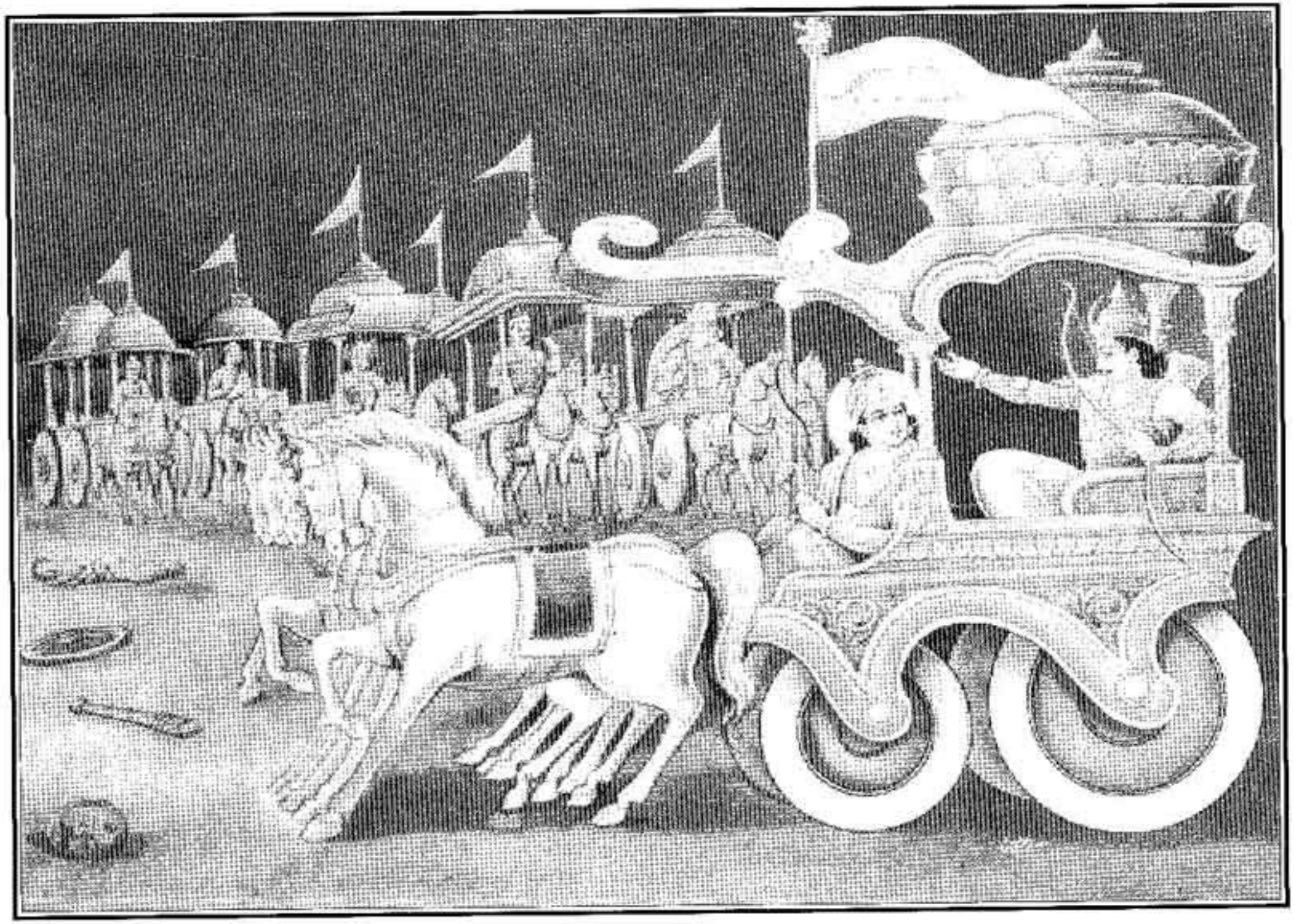

अर्जुनका व्यूहबद्ध कौरव-सेनाकी ओर श्रीकृष्णका ध्यान आकृष्ट करना

भूरिश्रवाने रणभूमिमें प्रयत्नपूर्वक धृष्टकेतुके साथ युद्ध छेड़ दिया। धर्मपुत्र युधिष्ठिरने राजा श्रुतायुपर धावा किया॥ ३१½ ॥

चेकितानश्च समरे कृपमेवान्वयोधयत्॥ ३२॥
शेषाः प्रतिययुर्यत्ता भीष्ममेव महारथम्।

चेकितानने समरमें कृपाचार्यके ही साथ युद्ध छेड़ दिया। शेष योद्धा प्रयत्नपूर्वक महारथी भीष्मका ही सामना करने लगे॥ ३२½ ॥

ततो राजसमूहास्ते परिवव्रुर्धनंजयम्॥ ३३॥
शक्तितोमरनाराचगदापरिघपाणयः ।

तदनन्तर उन राजसमूहोंने कुन्तीपुत्र धनंजयको सब ओरसे घेर लिया। उन सबके हाथोंमें शक्ति, तोमर, नाराच, गदा और परिघ आदि आयुध शोभा पा रहे थे॥

अर्जुनोऽथ भृशं क्रुद्धो वार्ष्णेयमिदमब्रवीत्॥ ३४॥
पश्य माधव सैन्यानि धार्तराष्ट्रस्य संयुगे।
व्यूढानि व्यूहविदुषा गाङ्गेयेन महात्मना॥ ३५॥

तत्पश्चात् अर्जुनने अत्यन्त क्रुद्ध होकर भगवान् श्रीकृष्णसे इस प्रकार कहा—'माधव! युद्धस्थलमें दुर्योधनकी इन सेनाओंको देखिये, व्यूहके विद्वान् महात्मा गंगानन्दनने इनका व्यूह रचा है॥ ३४-३५॥

युद्धाभिकामान् शूरांश्च पश्य माधव दंशितान्।
त्रिगर्तराजं सहितं भ्रातृभिः पश्य केशव॥ ३६॥

'माधव! युद्धकी इच्छासे कवच बाँधकर आये हुए इन शूरवीरोंपर दृष्टिपात कीजिये। केशव! यह देखिये, यह भाइयोंसहित त्रिगर्तराज खड़ा है॥ ३६॥

अद्यैतान् नाशयिष्यामि पश्यतस्ते जनार्दन।
य इमे मां यदुश्रेष्ठ योद्धुकामा रणाजिरे॥ ३७॥

'जनार्दन! यदुश्रेष्ठ! ये जो रणक्षेत्रमें मुझसे युद्ध करना चाहते हैं, मैं इन सबको आज आपके देखते-देखते नष्ट कर दूँगा'॥ ३७॥

एतदुक्त्वा तु कौन्तेयो धनुर्ज्यामवमृज्य च।
ववर्ष शरवर्षाणि नराधिपगणान् प्रति॥ ३८॥

ऐसा कहकर कुन्तीनन्दन अर्जुनने अपने धनुषकी प्रत्यंचापर हाथ फेरा और विपक्षी नरेशोंपर बाणोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी॥ ३८॥

तेऽपि तं परमेष्वासाः शरवर्षैरपूरयन्।
तडागं वारिधाराभिर्यथा प्रावृषि तोयदाः॥ ३९॥

जैसे बादल वर्षा-ऋतुमें जलकी धाराओंसे तालाबको भरते हैं, उसी प्रकार वे महाधनुर्धर नरेश भी बाणोंकी वृष्टिसे अर्जुनको भरपूर करने लगे॥ ३९॥

हाहाकारो महानासीत् तव सैन्ये विशाम्पते।
छाद्यमानौ रणे कृष्णौ शरैर्दृष्ट्वा महारणे॥ ४०॥

प्रजानाथ! उस महायुद्धमें श्रीकृष्ण और अर्जुनको बाणोंसे आच्छादित देख आपकी सेनामें बड़े जोरसे कोलाहल होने लगा॥ ४०॥

देवा देवर्षयश्चैव गन्धर्वाश्च सहोरगैः।
विस्मयं परमं जग्मुर्दृष्ट्वा कृष्णौ तथागतौ॥ ४१॥

श्रीकृष्ण और अर्जुनको उस अवस्थामें देखकर देवताओं, देवर्षियों, गन्धर्वों और नागोंको महान् आश्चर्य हुआ॥ ४१॥

ततः क्रुद्धोऽर्जुनो राजन्नैन्द्रमस्त्रमुदैरयत्।
तत्राद्भुतमपश्याम विजयस्य पराक्रमम्॥ ४२॥

राजन्! तब अर्जुनने कुपित होकर इन्द्रास्त्रका प्रयोग किया। उस समय हमलोगोंने अर्जुनका अद्भुत पराक्रम देखा॥ ४२॥

शस्त्रवृष्टिं परैर्मुक्तां शरौघैर्यदवारयत्।
न च तत्राप्यनिर्भिन्नः कश्चिदासीद् विशाम्पते॥ ४३॥

उन्होंने अपने बाणसमूहद्वारा शत्रुओंकी की हुई बाण-वर्षाको रोक दिया। महाराज! उस समय वहाँ कोई भी योद्धा ऐसा नहीं रह गया था, जो उनके बाणोंसे क्षत-विक्षत न हो गया हो॥ ४३॥

तेषां राजसहस्राणां हयानां दन्तिनां तथा।
द्वाभ्यां त्रिभिः शरैश्चान्यान् पार्थो विव्याध मारिष॥ ४४॥

आर्य! कुन्तीकुमार अर्जुनने उन सहस्रों राजाओंके घोड़ों तथा हाथियोंमेंसे किन्हींको दो-दो और किन्हींको तीन-तीन बाणोंसे घायल कर दिया॥ ४४॥

ते हन्यमानाः पार्थेन भीष्मं शान्तनवं ययुः।
अगाधे मज्जमानानां भीष्मः पोतोऽभवत् तदा॥ ४५॥

अर्जुनकी मार खाकर वे सब-के-सब शान्तनुनन्दन भीष्मकी शरणमें गये। उस समय अगाध विपत्तिसमुद्रमें डूबते हुए सैनिकोंके लिये भीष्म जहाज बन गये॥

आपतद्भिस्तु तैस्तत्र प्रभग्नं तावकं बलम्।
संचुक्षुभे महाराज वातैरिव महार्णवः॥ ४६॥

महाराज! पाण्डवोंके आक्रमण करनेपर आपकी सेनाका व्यूह भंग हो गया। वह सेना प्रचण्ड वायुके वेगसे समुद्रकी भाँति विक्षुब्ध हो उठी॥ ४६॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि सप्तमयुद्धदिवसे एकाशीतितमोऽध्यायः॥ ८१॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें सातवें दिनका युद्धविषयक इक्यासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८१॥

द्व्यशीतितमोऽध्यायः

श्रीकृष्ण और अर्जुनसे डरकर कौरवसेनामें भगदड़, द्रोणाचार्य और विराटका युद्ध, विराटपुत्र शंखका वध, शिखण्डी और अश्वत्थामाका युद्ध, सात्यकिके द्वारा अलम्बुषकी पराजय, धृष्टद्युम्नके द्वारा दुर्योधनकी हार तथा भीमसेन और कृतवर्माका युद्ध

संजय उवाच

तथा प्रवृत्ते संग्रामे निवृत्ते च सुशर्मणि।
भग्नेषु चापि वीरेषु पाण्डवेन महात्मना॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! इस प्रकार संग्राम आरम्भ होनेपर महामना पाण्डुनन्दन अर्जुनसे पराजित हो सुशर्मा युद्धभूमिसे दूर हो गया और अन्यान्य वीर भी भाग खड़े हुए॥ १॥

क्षुभ्यमाणे बले तूर्णं सागरप्रतिमे तव।
प्रत्युद्याते च गाङ्गेये त्वरितं विजयं प्रति॥ २॥

आपकी समुद्र-जैसी विशाल वाहिनीमें तुरंत ही हलचल मच गयी। उस समय गंगानन्दन भीष्मने शीघ्रतापूर्वक अर्जुनपर आक्रमण किया॥ २॥

दृष्ट्वा दुर्योधनो राजा रणे पार्थस्य विक्रमम्।
त्वरमाणः समभ्येत्य सर्वांस्तानब्रवीन्नृपान्॥ ३॥

राजा दुर्योधनने रणभूमिमें अर्जुनका पराक्रम देखकर बड़ी उतावलीके साथ निकट जा उन समस्त नरेशोंसे कहा॥ ३॥

तेषां तु प्रमुखे शूरं सुशर्माणं महाबलम्।
मध्ये सर्वस्य सैन्यस्य भृशं संहर्षयन्निव॥ ४॥

उन नरेशोंके सम्मुख सारी सेनाके बीचमें शूरवीर महाबली सुशर्माको अत्यन्त हर्ष प्रदान करता हुआ-सा दुर्योधन यों बोला—॥ ४॥

एष भीष्मः शान्तनवो योद्धुकामो धनंजयम्।
सर्वात्मना कुरुश्रेष्ठस्त्यक्त्वा जीवितमात्मनः॥ ५॥

'वीरो! ये शान्तनुनन्दन कुरुश्रेष्ठ भीष्म अपना जीवन निछावर करके सम्पूर्ण हृदयसे अर्जुनके साथ युद्ध करना चाहते हैं॥ ५॥

तं प्रयान्तं रणे वीरं सर्वसैन्येन भारतम्।
संयत्ताः समरे सर्वे पालयध्वं पितामहम्॥ ६॥

'सारी सेनाके साथ युद्धके लिये यात्रा करते हुए मेरे वीर पितामह भरतनन्दन भीष्मकी आप सब लोग प्रयत्नपूर्वक रक्षा करें'॥ ६॥

बाढमित्येवमुक्त्वा तु तान्यनीकानि सर्वशः।
नरेन्द्राणां महाराज समाजग्मुः पितामहम्॥ ७॥

महाराज! 'बहुत अच्छा' कहकर राजाओंकी वे सम्पूर्ण सेनाएँ पितामह भीष्मके पास गयीं॥ ७॥

ततः प्रयातः सहसा भीष्मः शान्तनवोऽर्जुनम्।
रणे भारतमायान्तमाससाद महाबलः॥ ८॥

तदनन्तर शान्तनुनन्दन भीष्म युद्धभूमिमें सहसा अर्जुनके सामने गये। भरतवंशी भीष्मको आते देख महाबली अर्जुन उनके पास जा पहुँचे॥ ८॥

महाश्वेताश्वयुक्तेन भीमवानरकेतुना।
महता मेघनादेन रथेनातिविराजता॥ ९॥

वे जिस रथपर आरूढ़ होकर आये थे, वह अत्यन्त शोभायमान था। उसमें श्वेतवर्णके विशाल घोड़े जुते हुए थे। उसपर भयंकर वानरसे उपलक्षित ध्वजा फहरा रही थी और उसके पहियोंसे मेघके समान गम्भीर शब्द हो रहा था॥ ९॥

समरे सर्वसैन्यानामुपयान्तं धनंजयम्।
अभवत् तुमुलो नादो भयाद् दृष्ट्वा किरीटिनम्॥ १०॥

किरीटधारी अर्जुनको युद्धमें समीप आते देख भयके मारे समस्त सैनिकोंके मुँहसे भयानक हाहाकार प्रकट होने लगा॥ १०॥

अभीषुहस्तं कृष्णं च दृष्ट्वाऽऽदित्यमिवापरम्।
मध्यन्दिनगतं संख्ये न शेकुः प्रतिवीक्षितुम्॥ ११॥

हाथमें बागडोर लिये मध्याह्नकालके दूसरे सूर्यके समान तेजस्वी श्रीकृष्णको युद्धभूमिमें उपस्थित देख कोई भी योद्धा उन्हें भर आँख देख भी न सके॥ ११॥

तथा शान्तनवं भीष्मं श्वेताश्वं श्वेतकार्मुकम्।
न शेकुः पाण्डवा द्रष्टुं श्वेतं ग्रहमिवोदितम्॥ १२॥

इसी प्रकार श्वेत घोड़े तथा श्वेत धनुषवाले शान्तनुनन्दन भीष्मको श्वेत ग्रहके समान उदित देख पाण्डवसैनिक उनसे आँख न मिला सके॥ १२॥

स सर्वतः परिवृतस्त्रिगर्तैः सुमहात्मभिः।
भ्रातृभिः सह पुत्रैश्च तथान्यैश्च महारथैः॥ १३॥

महामना त्रिगर्तोंने अपने भाइयों, पुत्रों तथा अन्य महारथियोंके साथ उपस्थित होकर भीष्मको सब ओरसे घेर रखा था॥ १३॥

भारद्वाजस्तु समरे मत्स्यं विव्याध पत्रिणा।
ध्वजं चास्य शरेणाजौ धनुश्चैकेन चिच्छिदे॥ १४॥

दूसरी ओर द्रोणाचार्यने मत्स्यराज विराटको युद्धमें एक बाणसे बींध डाला तथा एक बाणसे उनका ध्वज

और एकसे धनुष काट डाला॥ १४॥

तदपास्य धनुश्छिन्नं विराटो वाहिनीपतिः।
अन्यदादत्त वेगेन धनुर्भारसहं दृढम्॥ १५॥

सेनापति विराटने वह कटा हुआ धनुष फेंककर वेगपूर्वक दूसरे सुदृढ़ धनुषको हाथमें लिया, जो भार सहन करनेमें समर्थ था॥ १५॥

शरांश्चाशीविषाकाराञ्ज्वलितान् पन्नगानिव।
द्रोणं त्रिभिश्च विव्याध चतुर्भिश्चास्य वाजिनः॥ १६॥

उन्होंने उसके द्वारा प्रज्वलित सर्पोंकी भाँति विषैले नागोंकी-सी आकृतिवाले बाण छोड़कर तीनसे द्रोणाचार्यको और चार बाणोंसे उनके घोड़ोंको बींध डाला॥ १६॥

ध्वजमेकेन विव्याध सारथिं चास्य पञ्चभिः।
धनुरेकेषुणाविध्यत् तत्राक्रुध्यद् द्विजर्षभः॥ १७॥

फिर एक बाणसे ध्वजको, पाँच बाणोंसे सारथिको और एकसे धनुषको बींध डाला। इससे द्विजश्रेष्ठ द्रोणाचार्यको बड़ा क्रोध हुआ॥ १७॥

तस्य द्रोणोऽवधीदश्वान् शरैः संनतपर्वभिः।
अष्टाभिर्भरतश्रेष्ठ सूतमेकेन पत्रिणा॥ १८॥

भरतश्रेष्ठ! फिर द्रोणने झुकी हुई गाँठवाले आठ बाणोंद्वारा विराटके घोड़ोंको और एक बाणसे सारथिको मार डाला॥ १८॥

स हताश्वादवप्लुत्य स्यन्दनाद्धतसारथिः।
आरुरोह रथं तूर्णं पुत्रस्य रथिनां वरः॥ १९॥

सारथि और घोड़ोंके मारे जानेपर रथियोंमें श्रेष्ठ विराट अपने रथसे तुरंत कूद पड़े और पुत्रके रथपर आरूढ़ हो गये॥ १९॥

ततस्तु तौ पितापुत्रौ भारद्वाजं रथे स्थितौ।
महता शरवर्षेण वारयामासतुर्बलात्॥ २०॥

अब उन दोनों पिता-पुत्रोंने एक ही रथपर बैठकर महान् बाणवर्षाके द्वारा द्रोणाचार्यको बलपूर्वक आगे बढ़नेसे रोक दिया॥ २०॥

भारद्वाजस्ततः क्रुद्धः शरमाशीविषोपमम्।
चिक्षेप समरे तूर्णं शङ्खं प्रति जनेश्वर॥ २१॥

जनेश्वर! तब द्रोणाचार्यने कुपित होकर युद्धभूमिमें विषधर सर्पके समान एक भयंकर बाण शंखपर शीघ्रतापूर्वक चलाया॥ २१॥

स तस्य हृदयं भित्त्वा पीत्वा शोणितमाहवे।
जगाम धरणीं बाणो लोहितार्द्रवरच्छदः॥ २२॥

वह बाण शंखकी छाती छेदकर रणभूमिमें उसका रक्त पीकर धरतीमें समा गया। उसके श्रेष्ठ पंख लोहूमें भीगकर लाल हो रहे थे॥ २२॥

स पपात रणे तूर्णं भारद्वाजशराहतः।
धनुस्त्यक्त्वा शरांश्चैव पितुरेव समीपतः॥ २३॥

द्रोणाचार्यके बाणोंसे घायल होकर शंख पिताके पास ही धनुष-बाण छोड़कर तुरंत ही रणभूमिमें गिर पड़ा॥ २३॥

हतं तमात्मजं दृष्ट्वा विराटः प्राद्रवद् भयात्।
उत्सृज्य समरे द्रोणं व्यात्ताननमिवान्तकम्॥ २४॥

अपने पुत्रको मारा गया देख मुँह बाये हुए कालके समान भयंकर द्रोणाचार्यको समरभूमिमें छोड़कर विराट भयके मारे भाग गये॥ २४॥

भारद्वाजस्ततस्तूर्णं पाण्डवानां महाचमूम्।
दारयामास समरे शतशोऽथ सहस्रशः॥ २५॥

तब द्रोणाचार्यने संग्रामभूमिमें तुरंत ही पाण्डवोंकी विशाल वाहिनीको विदीर्ण करना आरम्भ किया। सैकड़ों-हजारों योद्धा धराशायी हो गये॥ २५॥

शिखण्डी तु महाराज द्रौणिमासाद्य संयुगे।
आजघान भ्रुवोर्मध्ये नाराचैस्त्रिभिराशुगैः॥ २६॥

महाराज! दूसरी ओर शिखण्डीने युद्धभूमिमें अश्वत्थामाके पास पहुँचकर तीन शीघ्रगामी नाराचोंद्वारा उसके भौंहोंके मध्यभागमें आघात किया॥ २६॥

स बभौ रथशार्दूलो ललाटे संस्थितैस्त्रिभिः।
शिखरैः काञ्चनमयैर्मेरुस्त्रिभिरिवोच्छ्रितैः॥ २७॥

रथियोंमें श्रेष्ठ अश्वत्थामा ललाटमें लगे हुए उन तीनों बाणोंके द्वारा तीन ऊँचे सुवर्णमय शिखरोंसे युक्त मेरुपर्वतके समान शोभा पाने लगा॥ २७॥

अश्वत्थामा ततः क्रुद्धो निमेषार्धाच्छिखण्डिनः।
ध्वजं सूतमथो राजंस्तुरगानायुधानि च॥ २८॥
शरैर्बहुभिराच्छिद्य पातयामास संयुगे।

राजन्! तदनन्तर क्रोधमें भरे अश्वत्थामाने आधे निमेषमें बहुत-से बाणोंद्वारा शिखण्डीके ध्वज, सारथि, घोड़ों और आयुधोंको रणभूमिमें काट गिराया॥ २८½॥

स हताश्वादवप्लुत्य रथाद् वै रथिनां वरः॥ २९॥
खड्गमादाय सुशितं विमलं च शरावरम्।
श्येनवद् व्यचरत् क्रुद्धः शिखण्डी शत्रुतापनः॥ ३०॥

रथियोंमें श्रेष्ठ शत्रुसंतापी शिखण्डी घोड़ोंके मारे जानेपर उस रथसे कूद पड़ा और बहुत तीखी एवं चमकीली तलवार और ढाल हाथमें लेकर कुपित हुए श्येन पक्षीकी भाँति सब ओर विचरने लगा॥ २९-३०॥

सखड्गस्य महाराज चरतस्तस्य संयुगे।
नान्तरं ददृशे द्रौणिस्तदद्भुतमिवाभवत्॥ ३१॥

महाराज! तलवार लेकर युद्धमें विचरते हुए शिखण्डीका थोड़ा-सा भी छिद्र अश्वत्थामाको नहीं

दिखायी दिया। वह एक अद्भुत-सी बात हुई॥ ३१॥

ततः शरसहस्राणि बहूनि भरतर्षभ।
प्रेषयामास समरे द्रौणिः परमकोपनः॥ ३२॥

भरतश्रेष्ठ! तब परम क्रोधी अश्वत्थामाने समरभूमिमें शिखण्डीपर कई हजार बाणोंकी वर्षा की॥ ३२॥

तामापतन्तीं समरे शरवृष्टिं सुदारुणाम्।
असिना तीक्ष्णधारेण चिच्छेद बलिनां वरः॥ ३३॥

बलवानोंमें श्रेष्ठ शिखण्डीने समरभूमिमें होनेवाली उस अत्यन्त भयंकर बाणवर्षाको तीखी धारवाली तलवारसे काट डाला॥ ३३॥

ततोऽस्य विमलं द्रौणिः शतचन्द्रं मनोरमम्।
चर्माच्छिनदसिं चास्य खण्डयामास संयुगे॥ ३४॥

तब अश्वत्थामाने सौ चन्द्राकार चिह्नोंसे सुशोभित शिखण्डीकी परम सुन्दर ढाल और चमकीली तलवारको युद्धस्थलमें टूक-टूक कर दिया॥ ३४॥

शितैस्तु बहुशो राजंस्तं च विव्याध पत्त्रिभिः।
शिखण्डी तु ततः खड्गं खण्डितं तेन सायकैः॥ ३५॥
आविध्य व्यसृजत् तूर्णं ज्वलन्तमिव पन्नगम्।
तमापतन्तं सहसा कालानलसमप्रभम्॥ ३६॥
चिच्छेद समरे द्रौणिर्दर्शयन् पाणिलाघवम्।
शिखण्डिनं च विव्याध शरैर्बहुभिरायसैः॥ ३७॥

राजन्! तत्पश्चात् पंखयुक्त तीखे बाणोंद्वारा शिखण्डीको भी बहुत घायल कर दिया। अश्वत्थामाद्वारा सायकोंकी मारसे खण्डित किये हुए उस खड्गको शिखण्डीने घुमाकर तुरंत ही उसके ऊपर चला दिया। वह खड्ग प्रज्वलित सर्प-सा प्रकाशित हो उठा। अपने ऊपर आते हुए प्रलयकालकी अग्निके समान तेजस्वी उस खड्गको अश्वत्थामाने युद्धमें अपना हस्त-लाघव दिखाते हुए सहसा काट डाला। तत्पश्चात् बहुत-से लोहमय बाणोंद्वारा उसने शिखण्डीको भी घायल कर दिया॥ ३५—३७॥

शिखण्डी तु भृशं राजंस्ताड्यमानः शितैः शरैः।
आरुरोह रथं तूर्णं माधवस्य महात्मनः॥ ३८॥

राजन्! अश्वत्थामाके तीखे बाणोंसे अत्यन्त घायल होकर शिखण्डी तुरंत ही महामना सात्यकिके रथपर चढ़ गया॥ ३८॥

सात्यकिश्चापि संक्रुद्धो राक्षसं क्रूरमाहवे।
अलम्बुषं शरैस्तीक्ष्णैर्विव्याध बलिनां वरः॥ ३९॥

इधर बलवानोंमें श्रेष्ठ सात्यकिने भी अत्यन्त कुपित होकर अपने तीखे बाणोंद्वारा संग्रामभूमिमें क्रूर राक्षस अलम्बुषको बींध डाला॥ ३९॥

राक्षसेन्द्रस्ततस्तस्य धनुश्चिच्छेद भारत।
अर्धचन्द्रेण समरे तं च विव्याध सायकैः॥ ४०॥

भारत! तब राक्षसराज अलम्बुषने रणक्षेत्रमें अर्धचन्द्राकार बाणके द्वारा सात्यकिके धनुषको काट दिया और अनेक सायकोंका प्रहार करके उन्हें भी घायल कर दिया॥ ४०॥

मायां च राक्षसीं कृत्वा शरवर्षैरवाकिरत्।
तत्राद्भुतमपश्याम शैनेयस्य पराक्रमम्॥ ४१॥

तत्पश्चात् उसने राक्षसी माया फैलाकर उनके ऊपर बाणोंकी वर्षा आरम्भ की। उस समय हमने सात्यकिका अद्भुत पराक्रम देखा॥ ४१॥

असम्भ्रमस्तु समरे वध्यमानः शितैः शरैः।
ऐन्द्रमस्त्रं च वार्ष्णेयो योजयामास भारत॥ ४२॥
विजयाद् यदनुप्राप्तं माधवेन यशस्विना।

भारत! वे समरभूमिमें तीखे बाणोंसे पीड़ित होनेपर भी घबराये नहीं। उन यशस्वी यदुकुलरत्न सात्यकिने अर्जुनसे जिसकी शिक्षा प्राप्त की थी, उस ऐन्द्रास्त्रका प्रयोग किया॥ ४२½॥

तदस्त्रं भस्मसात् कृत्वा मायां तां राक्षसीं तदा॥ ४३॥
अलम्बुषं शरैरन्यैरभ्याकिरत सर्वतः।
पर्वतं वारिधाराभिः प्रावृषीव बलाहकः॥ ४४॥

उस समय उस दिव्यास्त्रने उस राक्षसी मायाको तत्काल भस्म करके अलम्बुषके ऊपर सब ओरसे दूसरे-दूसरे बाणोंकी उसी प्रकार वर्षा आरम्भ की, जैसे वर्षा-ऋतुमें मेघ पर्वतपर जलकी धाराएँ गिराता है॥ ४३-४४॥

तत् तथा पीडितं तेन माधवेन यशस्विना।
प्रदुद्राव भयाद् रक्षस्त्यक्त्वा सात्यकिमाहवे॥ ४५॥

परमयशस्वी मधुवंशी सात्यकिके द्वारा इस प्रकार पीड़ित होनेपर वह राक्षस भयसे युद्धस्थलमें उन्हें छोड़कर भाग गया॥ ४५॥

तमजेयं राक्षसेन्द्रं संख्ये मघवता अपि।
शैनेयः प्राणदज्जित्वा योधानां तव पश्यताम्॥ ४६॥

जिसे इन्द्र भी युद्धमें हरा नहीं सकते थे, उसी राक्षसराज अलम्बुषको आपके योद्धाओंके देखते-देखते परास्त करके सात्यकि सिंहनाद करने लगे॥ ४६॥

न्यहनत् तावकांश्चापि सात्यकिः सत्यविक्रमः।
निशितैर्बहुभिर्बाणैस्तेऽद्रवन्त भयार्दिताः॥ ४७॥

तत्पश्चात् सत्यपराक्रमी सात्यकिने अपने बहुसंख्यक तीखे बाणोंद्वारा आपके अन्य योद्धाओंको भी मारना आरम्भ किया। उस समय उनके भयसे पीड़ित हो वे सब योद्धा भागने लगे॥ ४७॥

एतस्मिन्नेव काले तु द्रुपदस्यात्मजो बली।
धृष्टद्युम्नो महाराज पुत्रं तव जनेश्वरम्॥ ४८॥
छादयामास समरे शरैः संनतपर्वभिः।

महाराज! इसी समय द्रुपदके बलवान् पुत्र धृष्टद्युम्नने आपके पुत्र राजा दुर्योधनको रणक्षेत्रमें झुकी हुई गाँठवाले बाणोंसे आच्छादित कर दिया॥ ४८½॥

स च्छाद्यमानो विशिखैर्धृष्टद्युम्नेन भारत॥ ४९॥
विव्यथे न च राजेन्द्र तव पुत्रो जनेश्वर।
धृष्टद्युम्नं च समरे तूर्णं विव्याध पत्रिभिः॥ ५०॥
षष्ट्या च त्रिंशता चैव तदद्भुतमिवाभवत्।

भरतनन्दन! राजेन्द्र! जनेश्वर! धृष्टद्युम्नके बाणोंसे आच्छादित होनेपर भी आपके पुत्र दुर्योधनके मनमें व्यथा नहीं हुई। उसने युद्धस्थलमें धृष्टद्युम्नको तुरंत ही नब्बे बाणोंसे घायल कर दिया। वह एक अद्भुत-सी बात थी॥ ४९-५०½॥

तस्य सेनापतिः क्रुद्धो धनुश्चिच्छेद मारिष॥ ५१॥
हयांश्च चतुरः शीघ्रं निजघान महाबलः।
शरैश्चैनं सुनिशितैः क्षिप्रं विव्याध सप्तभिः॥ ५२॥

आर्य! तब महाबली पाण्डवसेनापतिने भी कुपित होकर दुर्योधनके धनुषको काट दिया और शीघ्रतापूर्वक उसके चारों घोड़ोंको भी मार डाला। तत्पश्चात् अत्यन्त तीखे सात बाणोंद्वारा तुरंत ही दुर्योधनको घायल कर दिया॥

स हताश्वान्महाबाहुरवप्लुत्य रथाद् बली।
पदातिरसिमुद्यम्य प्राद्रवत् पार्षतं प्रति॥ ५३॥

घोड़े मारे जानेपर बलवान् महाबाहु दुर्योधन अपने रथसे कूद पड़ा और तलवार उठाकर धृष्टद्युम्नकी ओर पैदल ही दौड़ा॥ ५३॥

शकुनिस्तं समभ्येत्य राजगृद्धी महाबलः।
राजानं सर्वलोकस्य रथमारोपयत् स्वकम्॥ ५४॥

उस समय महाबली शकुनिने, जो राजाको बहुत चाहता था, निकट आकर सम्पूर्ण जगत्के अधिपति दुर्योधनको अपने रथपर चढ़ा लिया॥ ५४॥

ततो नृपं पराजित्य पार्षतः परवीरहा।
न्यहनत् तावकं सैन्यं वज्रपाणिरिवासुरान्॥ ५५॥

तब शत्रुवीरोंका हनन करनेवाले धृष्टद्युम्नने राजा दुर्योधनको पराजित करके आपकी सेनाका उसी प्रकार विनाश आरम्भ किया, जैसे वज्रधारी इन्द्र असुरोंका विनाश करते हैं॥ ५५॥

कृतवर्मा रणे भीमं शरैरार्च्छन्महारथः।
प्रच्छादयामास च तं महामेघो रविं यथा॥ ५६॥

महारथी कृतवर्माने रणमें भीमसेनको अपने बाणोंसे बहुत पीड़ित किया और महामेघ जैसे सूर्यको ढक लेता है, उसी प्रकार उसने भीमसेनको आच्छादित कर दिया॥ ५६॥

ततः प्रहस्य समरे भीमसेनः परंतपः।
प्रेषयामास संक्रुद्धः सायकान् कृतवर्मणे॥ ५७॥

तब शत्रुओंको संताप देनेवाले भीमसेनने युद्धमें हँसकर अत्यन्त क्रोधपूर्वक कृतवर्मापर अनेकों सायकों-का प्रहार किया॥ ५७॥

तैरर्द्यमानोऽतिरथः सात्वतः सत्यकोविदः।
नाकम्पत महाराज भीमं चार्च्छच्छितैः शरैः॥ ५८॥

महाराज! उन सायकोंसे अत्यन्त पीड़ित होनेपर भी अतिरथी एवं सत्यकोविद सात्वतवंशी कृतवर्मा विचलित नहीं हुआ। उसने भीमसेनको पुनः तीखे बाणोंसे पीड़ित किया॥ ५८॥

तस्याश्वांश्चतुरो हत्वा भीमसेनो महारथः।
सारथिं पातयामास सध्वजं सुपरिष्कृतम्॥ ५९॥

फिर महारथी भीमसेनने उनके चारों घोड़ोंको मारकर ध्वजसहित सुसज्जित सारथिको भी काट गिराया॥

शरैर्बहुविधैश्चैनमाचिनोत् परवीरहा।
शकलीकृतसर्वाङ्गो हताश्वः प्रत्यदृश्यत॥ ६०॥

तत्पश्चात् शत्रुवीरोंका हनन करनेवाले भीमसेनने अनेक प्रकारके बाणोंसे कृतवर्माके सारे शरीरको क्षत-विक्षत कर दिया। उसके घोड़े मारे जा चुके थे। उस समय भीमसेनके बाणोंसे उसका सारा शरीर छिन्न-भिन्न-सा दिखायी देता था॥ ६०॥

हताश्वश्च ततस्तूर्णं वृषकस्य रथं ययौ।
श्यालस्य ते महाराज तव पुत्रस्य पश्यतः॥ ६१॥

महाराज! तब घोड़ोंके मारे जानेपर कृतवर्मा आपके पुत्रके देखते-देखते तुरंत ही आपके साले वृषकके रथपर सवार हो गया॥ ६१॥

भीमसेनोऽपि संक्रुद्धस्तव सैन्यमुपाद्रवत्।
निजघान च संक्रुद्धो दण्डपाणिरिवान्तकः॥ ६२॥

इधर भीमसेन भी अत्यन्त कुपित होकर आपकी सेनापर टूट पड़े और दण्डपाणि यमराजकी भाँति उसका संहार करने लगे॥ ६२॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि द्वैरथे द्व्यशीतितमोऽध्यायः॥ ८२॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें द्वैरथयुद्धविषयक बयासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८२॥

त्र्यशीतितमोऽध्यायः

इरावान्‌के द्वारा विन्द और अनुविन्दकी पराजय, भगदत्तसे घटोत्कचका हारना तथा मद्रराजपर नकुल और सहदेवकी विजय

धृतराष्ट्र उवाच

बहूनि हि विचित्राणि द्वैरथानि स्म संजय।
पाण्डूनां मामकैः सार्धमश्रौषं तव जल्पतः॥ १॥

धृतराष्ट्र बोले—संजय! मैंने तुम्हारे मुखसे अबतक पाण्डवोंके मेरे पुत्रोंके साथ जो बहुत-से विचित्र द्वैरथ युद्ध हुए हैं, उनका वर्णन सुना॥ १॥

न चैव मामकं किंचिद्धृष्टं शंससि संजय।
नित्यं पाण्डुसुतान् हृष्टानभग्नान् सम्प्रशंससि॥ २॥

परंतु सूत! तुमने अभीतक मेरे पक्षमें घटित हुई कोई हर्षकी बात नहीं कही है; उलटे पाण्डवोंको प्रतिदिन हर्षसे पूर्ण और अभग्न (अपराजित) बताते हो॥ २॥

जीयमानान् विमनसो मामकान् विगतौजसः।
वदसे संयुगे सूत दिष्टमेतन्न संशयः॥ ३॥

मेरे पुत्रोंको तेज और बलसे हीन, खिन्नचित्त और युद्धमें पराजित बताते हो। संजय! यह सब प्रारब्धका ही खेल है, इसमें संशय नहीं है॥ ३॥

संजय उवाच

यथाशक्ति यथोत्साहं युद्धे चेष्टन्ति तावकाः।
दर्शयानाः परं शक्त्या पौरुषं पुरुषर्षभ॥ ४॥

संजय बोले—पुरुषश्रेष्ठ! आपके पुत्र भी पूरी शक्तिसे पुरुषार्थ दिखाते हुए अपने बल और उत्साहके अनुसार युद्धमें सफलता प्राप्त करनेकी चेष्टा करते हैं॥ ४॥

गङ्गायाः सुरनद्या वै स्वादु भूत्वा यथोदकम्।
महोदधेर्गुणाभ्यासाल्लवणत्वं निगच्छति॥ ५॥
तथा तत् पौरुषं राजंस्तावकानां परंतप।
प्राप्य पाण्डुसुतान् वीरान् व्यर्थं भवति संयुगे॥ ६॥

परंतप! नरेश! जैसे देवनदी गंगाजीका जल स्वादिष्ट होकर भी महासागरके संयोगसे उसीके गुणका सम्मिश्रण हो जानेके कारण खारा हो जाता है, उसी प्रकार आपके पुत्रोंका पुरुषार्थ युद्धमें वीर पाण्डवोंतक पहुँचकर व्यर्थ हो जाता है॥ ५-६॥

घटमानान् यथाशक्ति कुर्वाणान् कर्म दुष्करम्।
न दोषेण कुरुश्रेष्ठ कौरवान् गन्तुमर्हसि॥ ७॥

कुरुश्रेष्ठ! कौरव यथाशक्ति प्रयत्न करते और दुष्कर कर्म कर दिखाते हैं। अतः उनके ऊपर आपको दोषारोपण नहीं करना चाहिये॥ ७॥

तवापराधात् सुमहान् सपुत्रस्य विशाम्पते।
पृथिव्याः प्रक्षयो घोरो यमराष्ट्रविवर्धनः॥ ८॥

प्रजानाथ! पुत्रसहित आपके अपराधसे ही यह भूमण्डलका घोर एवं महान् संहार हो रहा है, जो यमलोककी वृद्धि करनेवाला है॥ ८॥

आत्मदोषात् समुत्पन्नं शोचितुं नार्हसे नृप।
न हि रक्षन्ति राजानः सर्वथात्रापि जीवितम्॥ ९॥

नरेश्वर! अपने ही अपराधसे जो संकट प्राप्त हुआ है, उसके लिये आपको शोक नहीं करना चाहिये। (आपके अपराधके कारण) राजालोग भी इस भूतलमें सर्वथा अपने जीवनकी रक्षा नहीं कर पाते हैं॥ ९॥

युद्धे सुकृतिनां लोकानिच्छन्तो वसुधाधिपाः।
चमूं विगाह्य युध्यन्ते नित्यं स्वर्गपरायणाः॥ १०॥

वसुधाके नरेश युद्धमें पुण्यात्माओंके लोकोंकी इच्छा करते हुए शत्रुकी सेनामें घुसकर युद्ध करते हैं और सदा स्वर्गको ही परम लक्ष्य मानते हैं॥ १०॥

पूर्वाह्णे तु महाराज प्रावर्तत जनक्षयः।
तं त्वमेकमना भूत्वा शृणु देवासुरोपमम्॥ ११॥

महाराज! उस दिन पूर्वाह्णकालमें बड़ा भारी जनसंहार हुआ था। आप एकचित्त होकर देवासुर-संग्रामके समान उस भयंकर युद्धका वृत्तान्त सुनिये॥ ११॥

आवन्त्यौ तु महेष्वासौ महासेनौ महाबलौ।
इरावन्तमभिप्रेक्ष्य समेयातां रणोत्कटौ॥ १२॥

अवन्तीके महाबली महाधनुर्धर और विशाल सेनासे युक्त राजकुमार विन्द और अनुविन्द, जो युद्धमें उन्मत्त होकर लड़नेवाले हैं, अर्जुनपुत्र इरावान्‌को सामने देखकर उसीसे भिड़ गये॥ १२॥

तेषां प्रववृते युद्धं सुमहल्लोमहर्षणम्।
इरावांस्तु सुसंक्रुद्धो भ्रातरौ देवरूपिणौ॥ १३॥
विव्याध निशितैस्तूर्णं शरैः संनतपर्वभिः।
तावेनं प्रत्यविध्येतां समरे चित्रयोधिनौ॥ १४॥

उन तीनों वीरोंका युद्ध अत्यन्त रोमांचकारी हुआ। इरावान्‌ने कुपित होकर देवताओंके समान रूपवान् दोनों भाई विन्द और अनुविन्दको झुकी हुई गाँठवाले तीखे बाणोंसे तुरंत घायल कर दिया। वे भी समरांगणमें विचित्र युद्ध करनेवाले थे। अतः उन्होंने भी इरावान्‌को बींध डाला॥ १३-१४॥

युध्यतां हि तथा राजन् विशेषो न व्यदृश्यत।
यततां शत्रुनाशाय कृतप्रतिकृतैषिणाम्॥ १५॥

नरेश्वर! दोनों ही पक्षवाले अपने शत्रुका नाश करनेके लिये प्रयत्नशील थे। दोनों ही एक-दूसरेके अस्त्रोंका निवारण करनेकी इच्छा रखते थे। अतः युद्ध करते समय उनमें कोई अन्तर नहीं दिखायी देता था॥१५॥

इरावांस्तु ततो राजन्ननुविन्दस्य सायकैः।
चतुर्भिश्चतुरो वाहाननयद् यमसादनम्॥ १६॥

राजन्! उस समय इरावान्‌ने अपने चार बाणोंद्वारा अनुविन्दके चारों घोड़ोंको यमलोक पहुँचा दिया॥१६॥

भल्लाभ्यां च सुतीक्ष्णाभ्यां धनुः केतुं च मारिष।
चिच्छेद समरे राजंस्तदद्भुतमिवाभवत्॥ १७॥

आर्य! राजन्! तदनन्तर दो तीखे भल्लोंद्वारा उन्होंने युद्धस्थलमें उसके धनुष और ध्वज काट डाले। वह अद्‌भुत-सी बात हुई॥१७॥

त्यक्त्वानुविन्दोऽथ रथं विन्दस्य रथमास्थितः।
धनुर्गृहीत्वा परमं भारसाधनमुत्तमम्॥ १८॥

तत्पश्चात् अनुविन्द अपना रथ त्यागकर विन्दके रथपर जा बैठा और भार वहन करनेमें समर्थ दूसरा परम उत्तम धनुष लेकर युद्धके लिये डट गया॥१८॥

तावेकस्थौ रणे वीरावावन्त्यौ रथिनां वरौ।
शरान् मुमुचतुस्तूर्णमिरावति महात्मनि॥ १९॥

रथियोंमें श्रेष्ठ वे दोनों आवन्त्य वीर रणभूमिमें एक ही रथपर बैठकर बड़ी शीघ्रताके साथ महामना इरावान्‌पर बाणोंकी वर्षा करने लगे॥१९॥

ताभ्यां मुक्ता महावेगाः शराः काञ्चनभूषणाः।
दिवाकरपथं प्राप्य च्छादयामासुरम्बरम्॥ २०॥

उन दोनोंके छोड़े हुए महान् वेगशाली सुवर्णभूषित बाणोंने सूर्यके पथपर पहुँचकर आकाशको आच्छादित कर दिया॥२०॥

इरावांस्तु रणे क्रुद्धो भ्रातरौ तौ महारथौ।
ववर्ष शरवर्षेण सारथिं चाप्यपातयत्॥ २१॥

तब इरावान्‌ने भी रणक्षेत्रमें क्रुद्ध होकर उन दोनों महारथी बन्धुओंपर बाणोंकी वर्षा आरम्भ कर दी और उनके सारथिको मार गिराया॥२१॥

तस्मिंस्तु पतिते भूमौ गतसत्त्वे तु सारथौ।
रथः प्रदुद्राव दिशः समुद्भ्रान्तहयस्ततः॥ २२॥

सारथिके प्राणशून्य होकर पृथ्वीपर गिर जानेके पश्चात् उस रथके घोड़े घबराकर भागने लगे और इस प्रकार वह रथ सम्पूर्ण दिशाओंमें दौड़ने लगा॥२२॥

तौ स जित्वा महाराज नागराजसुतासुतः।
पौरुषं ख्यापयंस्तूर्णं व्यधमत् तव वाहिनीम्॥ २३॥

महाराज! इरावान् नागराजकन्या उलूपीका पुत्र था। उसने विन्द और अनुविन्दको जीतकर अपने पुरुषार्थका परिचय देते हुए तुरंत ही आपकी सेनाका संहार आरम्भ कर दिया॥२३॥

सा वध्यमाना समरे धार्तराष्ट्री महाचमूः।
वेगान् बहुविधांश्चक्रे विषं पीत्वेव मानवः॥ २४॥

युद्धक्षेत्रमें इरावान्‌से पीड़ित होकर आपकी विशाल सेना विषपान किये हुए मनुष्यकी भाँति नाना प्रकारसे उद्वेग प्रकट करने लगी॥२४॥

हैडिम्बो राक्षसेन्द्रस्तु भगदत्तं समाद्रवत्।
रथेनादित्यवर्णेन सध्वजेन महाबलः॥ २५॥

दूसरी ओर राक्षसराज महाबली घटोत्कचने सूर्यके समान तेजस्वी एवं ध्वजयुक्त रथके द्वारा भगदत्तपर आक्रमण किया॥२५॥

ततः प्राग्ज्योतिषो राजा नागराजं समास्थितः।
यथा वज्रधरः पूर्वं संग्रामे तारकामये॥ २६॥

जैसे पूर्वकालमें तारकामय-संग्रामके अवसरपर वज्रधारी इन्द्र ऐरावत नामक हाथीपर आरूढ़ होकर युद्धके लिये गये थे, उसी प्रकार इस महायुद्धमें प्राग्ज्योतिषपुरके स्वामी राजा भगदत्त एक गजराजपर चढ़कर आये थे॥२६॥

तत्र देवाः सगन्धर्वा ऋषयश्च समागताः।
विशेषं न स्म विविदुर्हैडिम्बभगदत्तयोः॥ २७॥

वहाँ युद्ध देखनेके लिये आये हुए देवताओं, गन्धर्वों तथा ऋषियोंकी भी समझमें यह नहीं आया कि घटोत्कच और भगदत्तमें पराक्रमकी दृष्टिसे क्या अन्तर है॥२७॥

यथा सुरपतिः शक्रस्त्रासयामास दानवान्।
तथैव समरे राजा द्रावयामास पाण्डवान्॥ २८॥

जैसे देवराज इन्द्रने दानवोंको भयभीत किया था, उसी प्रकार भगदत्तने पाण्डवसैनिकोंको भयभीत करके भगाना आरम्भ किया॥२८॥

तेन विद्राव्यमाणास्ते पाण्डवाः सर्वतो दिशम्।
त्रातारं नाध्यगच्छन्तः स्वेष्वनीकेषु भारत॥ २९॥

भारत! भगदत्तके द्वारा खदेड़े हुए पाण्डवसैनिक सम्पूर्ण दिशाओंमें भागते हुए अपनी सेनाओंमें भी कहीं कोई रक्षक नहीं पाते थे॥२९॥

भैमसेनिं रथस्थं तु तत्रापश्याम भारत।
शेषा विमनसो भूत्वा प्राद्रवन्त महारथाः॥ ३०॥

भरतनन्दन! उस समय वहाँ हमलोगोंने केवल भीमपुत्र घटोत्कचको ही रथपर स्थिरभावसे बैठा देखा। शेष महारथी खिन्नचित्त होकर वहींसे भाग रहे थे॥ ३०॥

निवृत्तेषु तु पाण्डूनां पुनः सैन्येषु भारत।
आसीन्निष्ठानको घोरस्तव सैन्यस्य संयुगे॥ ३१॥

भारत! जब पाण्डवोंकी सेनाएँ पुनः युद्धभूमिमें लौट आयीं, तब उस युद्धक्षेत्रमें आपकी सेनाके भीतर घोर हाहाकार होने लगा॥ ३१॥

घटोत्कचस्ततो राजन् भगदत्तं महारणे।
शरैः प्रच्छादयामास मेरुं गिरिमिवाम्बुदः॥ ३२॥

राजन्! उस समय उस महायुद्धमें घटोत्कचने अपने बाणोंद्वारा भगदत्तको उसी प्रकार आच्छादित कर दिया, जैसे बादल मेरुपर्वतको ढक लेता है॥ ३२॥

निहत्य तान् शरान् राजा राक्षसस्य धनुश्च्युतान्।
भैमसेनिं रणे तूर्णं सर्वमर्मस्वताडयत्॥ ३३॥

राक्षस घटोत्कचके धनुषसे छूटे हुए उन सभी बाणोंको नष्ट करके राजा भगदत्तने रणक्षेत्रमें तुरंत ही घटोत्कचके सभी मर्मस्थानोंपर प्रहार किया॥ ३३॥

स ताड्यमानो बहुभिः शरैः संनतपर्वभिः।
न विव्यथे राक्षसेन्द्रो भिद्यमान इवाचलः॥ ३४॥

झुकी हुई गाँठवाले बहुत-से बाणोंद्वारा आहत होकर भी विदीर्ण किये जानेवाले पर्वतकी भाँति राक्षसराज घटोत्कच व्यथित एवं विचलित नहीं हुआ॥ ३४॥

तस्य प्राग्ज्योतिषः क्रुद्धस्तोमरांश्च चतुर्दश।
प्रेषयामास समरे तांश्चिच्छेद स राक्षसः॥ ३५॥

प्राग्ज्योतिषपुरके नरेशने कुपित हो उस राक्षसपर चौदह तोमर चलाये, परंतु उसने समरभूमिमें उन सबको काट दिया॥

स तांश्छित्त्वा महाबाहुस्तोमरान् निशितैः शरैः।
भगदत्तं च विव्याध सप्तत्या कङ्कपत्रिभिः॥ ३६॥

उन तोमरोंको तीखे बाणोंसे काटकर महाबाहु घटोत्कचने कंकपत्रयुक्त सत्तर बाणोंद्वारा भगदत्तको भी घायल कर दिया॥ ३६॥

ततः प्राग्ज्योतिषो राजा प्रहसन्निव भारत।
तस्याश्वांश्चतुरः संख्ये पातयामास सायकैः॥ ३७॥

भारत! तब राजा प्राग्ज्योतिष (भगदत्त)-ने हँसते हुए-से उस युद्धमें अपने सायकोंद्वारा घटोत्कचके चारों घोड़ोंको मार गिराया॥ ३७॥

स हताश्वे रथे तिष्ठन् राक्षसेन्द्रः प्रतापवान्।
शक्तिं चिक्षेप वेगेन प्राग्ज्योतिषगजं प्रति॥ ३८॥

घोड़ोंके मारे जानेपर भी उसी रथपर खड़े हुए प्रतापी राक्षसराज घटोत्कचने भगदत्तके हाथीपर बड़े वेगसे शक्तिका प्रहार किया॥ ३८॥

तामापतन्तीं सहसा हेमदण्डां सुवेगिनीम्।
त्रिधा चिच्छेद नृपतिः सा व्यकीर्यत मेदिनीम्॥ ३९॥

उस शक्तिमें सोनेका डंडा लगा हुआ था। वह अत्यन्त वेगशालिनी थी। उसे सहसा आती देख राजा भगदत्तने उसके तीन टुकड़े कर डाले। फिर वह पृथ्वीपर बिखर गयी॥

शक्तिं विनिहतां दृष्ट्वा हैडिम्बः प्राद्रवद् भयात्।
यथेन्द्रस्य रणात् पूर्वं नमुचिर्दैत्यसत्तमः॥ ४०॥

अपनी शक्तिको कटी हुई देखकर हिडिम्बाकुमार घटोत्कच भगदत्तके भयसे उसी प्रकार भाग गया, जैसे पूर्वकालमें देवराज इन्द्रके साथ युद्ध करते समय दैत्यराज नमुचि रणभूमिसे भागा था॥ ४०॥

तं विजित्य रणे शूरं विक्रान्तं ख्यातपौरुषम्।
अजेयं समरे वीरं यमेन वरुणेन च॥ ४१॥
पाण्डवीं समरे सेनां सम्ममर्द स कुञ्जरः।
यथा वनगजो राजन् मृद्नंश्चरति पद्मिनीम्॥ ४२॥

राजन्! घटोत्कच अपने पौरुषके लिये विख्यात, पराक्रमी, शूरवीर था। वरुण और यमराज भी उस वीरको समरभूमिमें परास्त नहीं कर सकते थे। उसीको वहाँ रणक्षेत्रमें जीतकर भगदत्तका वह हाथी समरांगणमें पाण्डवसेनाका उसी प्रकार मर्दन करने लगा, जैसे वनैला हाथी सरोवरमें कमलिनीको रौंदता हुआ विचरता है॥ ४१-४२॥

मद्रेश्वरस्तु समरे यमाभ्यां समसज्जत।
स्वस्त्रीयौ छादयांचक्रे शरौघैः पाण्डुनन्दनौ॥ ४३॥

दूसरी ओर मद्रराज शल्य युद्धमें अपने भानजे नकुल और सहदेवसे उलझे हुए थे। उन्होंने पाण्डुकुलको आनन्दित करनेवाले भानजोंको अपने बाणसमूहोंसे आच्छादित कर दिया॥ ४३॥

सहदेवस्तु समरे मातुलं दृश्य संगतम्।
अवारयच्छरौघेण मेघो यद्वद् दिवाकरम्॥ ४४॥

सहदेवने समरभूमिमें अपने मामाको युद्धमें आसक्त देखकर जैसे बादल सूर्यको ढक लेता है, उसी प्रकार उन्हें अपने बाणसमूहोंसे आच्छादित करके आगे बढ़नेसे रोक दिया॥ ४४॥

छाद्यमानः शरौघेण हृष्टरूपतरोऽभवत्।
तयोश्चाप्यभवत् प्रीतिरतुला मातृकारणात्॥ ४५॥

उनके बाणसमूहोंसे आच्छादित होकर भी शल्य अत्यन्त प्रसन्न ही हुए। माताके नाते नकुल और सहदेवके मनमें भी उनके प्रति अनुपम प्रेमका भाव था॥ ४५॥

ततः प्रहस्य समरे नकुलस्य महारथः।
(ध्वजं चिच्छेद बाणेन धनुश्चैकेन मारिष।

अथैनं छिन्नधन्वानं छादयन्निव भारत॥
निजघान रणे तं तु सूतं चास्य न्यपातयत्॥)
अश्वांश्च चतुरो राजंश्चतुर्भिः सायकोत्तमैः॥ ४६॥
प्रेषयामास समरे यमस्य सदनं प्रति।
हताश्वात् तु रथात् तूर्णमवप्लुत्य महारथः॥ ४७॥
आरुरोह ततो यानं भ्रातुरेव यशस्विनः।

आर्य! तब महारथी शल्यने समरभूमिमें हँसकर एक बाणसे नकुलके ध्वजको और दूसरेसे उनके धनुषको भी काट दिया। भारत! धनुष कट जानेपर उन्हें बाणोंसे आच्छादित-से करते हुए युद्धस्थलमें उनके सारथिको भी मार गिराया। राजन्! फिर उन्होंने उस युद्धमें चार उत्तम सायकोंद्वारा नकुलके चारों घोड़ोंको यमराजके घर भेज दिया। घोड़ोंके मारे जानेपर महारथी नकुल उस रथसे तुरंत ही कूदकर अपने यशस्वी भाई सहदेवके ही रथपर जा बैठे॥

एकस्थौ तु रणे शूरौ दृढे विक्षिप्य कार्मुकौ॥ ४८॥
मद्रराजरथं तूर्णं छादयामासतुः क्षणात्।

तदनन्तर एक ही रथपर बैठे हुए उन दोनों शूरवीरोंने क्षणभरमें अपने सुदृढ़ धनुषको खींचकर रणभूमिमें मद्रराजके रथको तुरंत ही आच्छादित कर दिया॥ ४८½॥

स छाद्यमानो बहुभिः शरैः संनतपर्वभिः॥ ४९॥
स्वस्त्रीयाभ्यां नरव्याघ्रो नाकम्पत यथाचलः।
प्रहसन्निव तां चापि शस्त्रवृष्टिं जघान ह॥ ५०॥

अपने भानजोंके चलाये हुए झुकी हुई गाँठवाले बहुसंख्यक बाणोंसे आच्छादित होनेपर भी नरश्रेष्ठ शल्य पर्वतकी भाँति अडिगभावसे खड़े रहे; कम्पित या विचलित नहीं हुए। उन्होंने हँसते हुए-से उस शस्त्र-वर्षाको भी नष्ट कर दिया॥ ४९-५०॥

सहदेवस्ततः क्रुद्धः शरमुद्गृह्य वीर्यवान्।
मद्रराजमभिप्रेक्ष्य प्रेषयामास भारत॥ ५१॥

भारत! तब पराक्रमी सहदेवने कुपित होकर एक बाण हाथमें लिया और उसे मद्रराजको लक्ष्य करके चला दिया॥ ५१॥

स शरः प्रेषितस्तेन गरुडानिलवेगवान्।
मद्रराजं विनिर्भिद्य निपपात महीतले॥ ५२॥

उनके द्वारा चलाया हुआ वह बाण गरुड और वायुके समान वेगशाली था। वह मद्रराजको विदीर्ण करके पृथ्वीपर जा गिरा॥ ५२॥

स गाढविद्धो व्यथितो रथोपस्थे महारथः।
निषसाद महाराज कश्मलं च जगाम ह॥ ५३॥

महाराज! उसके गहरे आघातसे पीड़ित एवं व्यथित होकर महारथी शल्य रथके पिछले भागमें जा

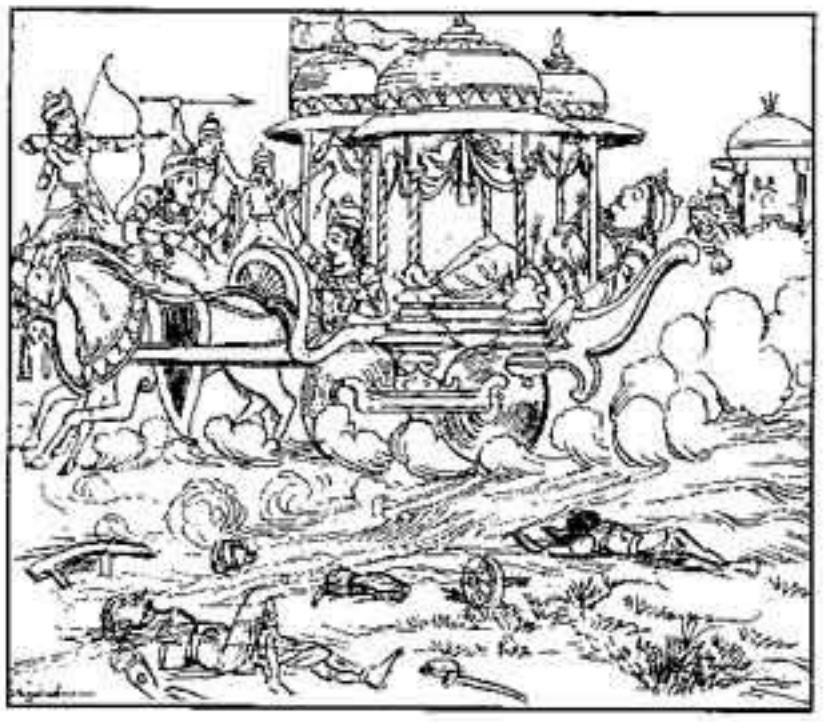

बैठे और मूर्च्छित हो गये॥ ५३॥

तं विसंज्ञं निपतितं सूतः सम्प्रेक्ष्य संयुगे।
अपोवाह रथेनाजौ यमाभ्यामभिपीडितम्॥ ५४॥

युद्धस्थलमें नकुल और सहदेवद्वारा पीड़ित होकर उन्हें अचेत हो रथपर गिरा हुआ देख सारथि रथद्वारा रणभूमिसे बाहर हटा ले गया॥ ५४॥

दृष्ट्वा मद्रेश्वररथं धार्तराष्ट्राः पराङ्मुखम्।
सर्वे विमनसो भूत्वा नेदमस्तीत्यचिन्तयन्॥ ५५॥

मद्रराजके रथको युद्धसे विमुख हुआ देख आपके सभी पुत्र मन-ही-मन दुःखी हो सोचने लगे—शायद अब मद्रराजका जीवन शेष नहीं है॥ ५५॥

निर्जित्य मातुलं संख्ये माद्रीपुत्रौ महारथौ।
दध्मतुर्मुदितौ शङ्खौ सिंहनादं च नेदतुः॥ ५६॥

महारथी माद्रीपुत्र युद्धमें अपने मामाको परास्त करके प्रसन्नतापूर्वक शंख बजाने और सिंहनाद करने लगे॥ ५६॥

अभिदुद्रुवतुर्हृष्टौ तव सैन्यं विशाम्पते।
यथा दैत्यचमूं राजन्निन्द्रोपेन्द्राविवामरौ॥ ५७॥

प्रजानाथ! जैसे इन्द्रदेव और उपेन्द्रदेव दैत्योंकी सेनाको मार भगाते हैं, उसी प्रकार नकुल-सहदेव हर्षमें भरकर आपकी सेनाको खदेड़ने लगे॥ ५७॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि द्वन्द्वयुद्धे त्र्यशीतितमोऽध्यायः॥ ८३॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें द्वन्द्वयुद्धविषयक तिरासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८३॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका १½ श्लोक मिलाकर कुल ५८½ श्लोक हैं।]

चतुरशीतितमोऽध्यायः

युधिष्ठिरसे राजा श्रुतायुका पराजित होना, युद्धमें चेकितान और कृपाचार्यका मूर्च्छित होना, भूरिश्रवासे धृष्टकेतुका और अभिमन्युसे चित्रसेन आदिका पराजित होना एवं सुशर्मा आदिसे अर्जुनका युद्धारम्भ

संजय उवाच

ततो युधिष्ठिरो राजा मध्यं प्राप्ते दिवाकरे।
श्रुतायुषमभिप्रेक्ष्य प्रेषयामास वाजिनः॥ १॥

संजय कहते हैं—महाराज! जब सूर्यदेव दिनके मध्यभागमें आ गये, तब राजा युधिष्ठिरने श्रुतायुको देखकर उसकी ओर अपने घोड़ोंको बढ़ाया॥ १॥

अभ्यधावत् ततो राजा श्रुतायुषमरिंदमम्।
विनिघ्नन् सायकैस्तीक्ष्णैर्नवभिर्नतपर्वभिः॥ २॥

उस समय झुकी हुई गाँठवाले नौ तीखे सायकोंद्वारा शत्रुदमन श्रुतायुको घायल करते हुए राजा युधिष्ठिरने उसपर धावा किया॥ २॥

स संवार्य रणे राजा प्रेषितान् धर्मसूनुना।
शरान् सप्त महेष्वासः कौन्तेयाय समार्पयत्॥ ३॥

तब महाधनुर्धर राजा श्रुतायुने युद्धमें धर्मपुत्र युधिष्ठिरके चलाये हुए बाणोंका निवारण करके उन कुन्तीकुमारको सात बाण मारे॥ ३॥

ते तस्य कवचं भित्त्वा पपुः शोणितमाहवे।
असूनिव विचिन्वन्तो देहे तस्य महात्मनः॥ ४॥

संग्राममें वे बाण महात्मा युधिष्ठिरके शरीरमें उनके प्राणोंको ढूँढ़ते हुए-से कवच छेदकर घुस गये और उनका रक्त पीने लगे॥ ४॥

पाण्डवस्तु भृशं क्रुद्धो विद्धस्तेन महात्मना।
रणे वराहकर्णेन राजानं हृद्यविध्यत॥ ५॥

महामना श्रुतायुके बाणोंसे घायल होनेपर पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर अत्यन्त कुपित हो उठे और उन्होंने रणक्षेत्रमें वराहकर्ण नामक एक बाण चलाकर राजा श्रुतायुकी छातीमें चोट पहुँचायी॥ ५॥

अथापरेण भल्लेन केतुं तस्य महात्मनः।
रथश्रेष्ठो रथात् तूर्णं भूमौ पार्थो न्यपातयत्॥ ६॥

तत्पश्चात् रथियोंमें श्रेष्ठ कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने भल्ल नामक दूसरे बाणसे महामना श्रुतायुके ध्वजको काटकर तुरंत ही रथसे पृथ्वीपर गिरा दिया॥ ६॥

केतुं विपतितं दृष्ट्वा श्रुतायुः स तु पार्थिवः।
पाण्डवं विंशिखैस्तीक्ष्णैः राजन् विव्याध सप्तभिः॥ ७॥

राजन्! ध्वजको गिरा हुआ देख राजा श्रुतायुने अपने सात तीखे बाणोंद्वारा पाण्डुनन्दन युधिष्ठिरको घायल कर दिया॥ ७॥

ततः क्रोधात् प्रजज्वाल धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः।
यथा युगान्ते भूतानि दिधक्षुरिव पावकः॥ ८॥

यह देख धर्मपुत्र युधिष्ठिर प्रलयकालमें सम्पूर्ण भूतोंको जला डालनेकी इच्छावाले अग्निदेवके समान क्रोधसे प्रज्वलित हो उठे॥ ८॥

क्रुद्धं तु पाण्डवं दृष्ट्वा देवगन्धर्वराक्षसाः।
प्रविव्यथुर्महाराज व्याकुलं चाप्यभूज्जगत्॥ ९॥

महाराज! पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरको कुपित देख देवता, गन्धर्व और राक्षस व्यथित हो उठे तथा सारा जगत् भी भयसे व्याकुल हो गया॥ ९॥

सर्वेषां चैव भूतानामिदमासीन्मनोगतम्।
त्रींल्लोकानद्य संक्रुद्धो नृपोऽयं धक्ष्यतीति वै॥ १०॥

उस समय समस्त प्राणियोंके मनमें यह विचार उठा कि आज निश्चय ही ये राजा युधिष्ठिर कुपित होकर तीनों लोकोंको भस्म कर डालेंगे॥ १०॥

ऋषयश्चैव देवाश्च चक्रुः स्वस्त्ययनं महत्।
लोकानां नृप शान्त्यर्थं क्रोधिते पाण्डवे तदा॥ ११॥

नरेश्वर! पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरके कुपित होनेपर उस समय सम्पूर्ण लोकोंकी शान्तिके लिये देवता तथा ऋषिलोग श्रेष्ठ स्वस्तिवाचन करने लगे॥ ११॥

स च क्रोधसमाविष्टः सृक्किणी परिसंलिहन्।
दधारात्मवपुर्घोरं युगान्तादित्यसंनिभम्॥ १२॥

उन्होंने क्रोधसे व्याप्त हो मुखके दोनों कोनोंको चाटते हुए अपने शरीरको प्रलयकालके सूर्यके समान अत्यन्त भयंकर बना लिया॥ १२॥

ततः सैन्यानि सर्वाणि तावकानि विशाम्पते।
निराशान्यभवंस्तत्र जीवितं प्रति भारत॥ १३॥

प्रजानाथ! भरतनन्दन! उस समय आपकी सारी सेनाएँ वहाँ अपने जीवनसे निराश हो गयीं॥ १३॥

स तु धैर्येण तं कोपं संनिवार्य महायशाः।
श्रुतायुषः प्रचिच्छेद मुष्टिदेशे महाधनुः॥ १४॥

परंतु महायशस्वी युधिष्ठिरने धैर्यपूर्वक अपने क्रोधको दबा दिया और श्रुतायुके विशाल धनुषको, जहाँ उसे मुट्ठीसे पकड़ा जाता है, उसी जगहसे काट दिया॥ १४॥

अथैनं छिन्नधन्वानं नाराचेन स्तनान्तरे।
निर्बिभेद रणे राजा सर्वसैन्यस्य पश्यतः॥ १५॥
सत्वरं च रणे राजंस्तस्य वाहान् महात्मनः।
निजघान शरैः क्षिप्रं सूतं च सुमहाबलः॥ १६॥

राजन्! धनुष कट जानेपर महाबली राजा युधिष्ठिरने श्रुतायुकी छातीमें नाराचसे प्रहार किया। फिर उन्होंने समस्त सेनाओंके देखते-देखते रणक्षेत्रमें महामना श्रुतायुके घोड़ोंको तुरंत मार डाला और उसके सारथिको भी शीघ्र ही मौतके मुखमें डाल दिया॥ १५-१६॥

हताश्वं तु रथं त्यक्त्वा दृष्ट्वा राज्ञोऽस्य पौरुषम्।
विप्रदुद्राव वेगेन श्रुतायुः समरे तदा॥ १७॥

रथके घोड़े मारे गये, यह देखकर तथा युद्धमें राजा युधिष्ठिरके पुरुषार्थका भी अवलोकन करके श्रुतायु उस समय बड़े वेगसे रथ छोड़कर भाग गया॥ १७॥

तस्मिञ्जिते महेष्वासे धर्मपुत्रेण संयुगे।
दुर्योधनबलं राजन् सर्वमासीत् पराङ्मुखम्॥ १८॥

राजन्! संग्राममें धर्मपुत्र युधिष्ठिरद्वारा महाधनुर्धर श्रुतायुके पराजित होनेपर दुर्योधनकी सारी सेना पीठ दिखाकर भागने लगी॥ १८॥

एतत् कृत्वा महाराज धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः।
व्यात्ताननो यथा कालस्तव सैन्यं जघान ह॥ १९॥

महाराज! ऐसा पराक्रम करके धर्मपुत्र युधिष्ठिर मुँह फैलाये कालके समान आपकी सेनाका संहार करने लगे॥ १९॥

चेकितानस्तु वार्ष्णेयो गौतमं रथिनां वरम्।
प्रेक्षतां सर्वसैन्यानां छादयामास सायकैः॥ २०॥

उधर वृष्णिवंशी चेकितानने रथियोंमें श्रेष्ठ कृपाचार्यको सब सेनाओंके देखते-देखते अपने सायकोंसे आच्छादित कर दिया॥ २०॥

संनिवार्य शरांस्तांस्तु कृपः शारद्वतो युधि।
चेकितानं रणे यत्तं राजन् विव्याध पत्रिभिः॥ २१॥

राजन्! शरद्वान्‌के पुत्र कृपाचार्यने युद्धमें उन सब बाणोंको काटकर सावधानीके साथ युद्ध करनेवाले चेकितानको पंखवाले बाणोंसे बींध डाला॥ २१॥

अथापरेण भल्लेन धनुश्चिच्छेद मारिष।
सारथिं चास्य समरे क्षिप्रहस्तो न्यपातयत्॥ २२॥

आर्य! फिर दूसरे भल्लसे उसका धनुष काट दिया और अपने हाथोंकी फुर्ती दिखाते हुए समरमें उसके सारथिको भी मार गिराया॥ २२॥

अश्वांश्चास्यावधीद् राजन्नुभौ तौ पार्ष्णिसारथी।
सोऽवप्लुत्य रथात् तूर्णं गदां जग्राह सात्वतः॥ २३॥

राजन्! तदनन्तर चेकितानके चारों घोड़ों और दोनों पृष्ठरक्षकोंको भी कृपाचार्यने मार डाला। तब सात्वतवंशी चेकितानने रथसे कूदकर तुरंत ही गदा हाथमें ले ली॥ २३॥

स तया वीरघातिन्या गदया गदिनां वरः।
गौतमस्य हयान् हत्वा सारथिं च न्यपातयत्॥ २४॥

गदाधारियोंमें श्रेष्ठ चेकितानने उस वीरघातिनी गदासे कृपाचार्यके घोड़ोंको मारकर उनके सारथिको भी धराशायी कर दिया॥ २४॥

भूमिष्ठो गौतमस्तस्य शरांश्चिक्षेप षोडश।
शरास्ते सात्वतं भित्त्वा प्राविशन् धरणीतलम्॥ २५॥

तब कृपाचार्यने भूमिपर ही खड़े होकर चेकितानको सोलह बाण मारे। वे बाण चेकितानको छेदकर धरतीमें समा गये॥ २५॥

चेकितानस्ततः क्रुद्धः पुनश्चिक्षेप तां गदाम्।
गौतमस्य वधाकाङ्क्षी वृत्रस्येव पुरंदरः॥ २६॥

तब क्रोधमें भरे हुए चेकितानने कृपाचार्यके वधकी इच्छासे उनपर पुनः वैसे ही गदाका प्रहार किया, जैसे इन्द्र वृत्रासुरपर प्रहार करते हैं॥ २६॥

तामापतन्तीं विमलामश्मगर्भां महागदाम्।
शरैरनेकसाहस्रैर्वारयामास गौतमः॥ २७॥

उस निर्मल एवं लोहेकी बनी हुई विशाल गदाको अपने ऊपर आती देख कृपाचार्यने अनेक सहस्र बाणोंद्वारा दूर गिरा दिया॥ २७॥

चेकितानस्ततः खड्गं क्रोधादुद्धृत्य भारत।
लाघवं परमास्थाय गौतमं समुपाद्रवत्॥ २८॥

भारत! तब चेकितानने क्रोधपूर्वक तलवार खींच ली और बड़ी फुर्तीके साथ कृपाचार्यपर धावा किया॥ २८॥

गौतमोऽपि धनुस्त्यक्त्वा प्रगृह्यासिं सुसंयतः।
वेगेन महता राजंश्चेकितानमुपाद्रवत्॥ २९॥

राजन्! यह देख कृपाचार्यने भी धनुष फेंककर तलवार हाथमें ले ली और पूरी सावधानीके साथ वे बड़े वेगसे चेकितानकी ओर दौड़े॥ २९॥

तावुभौ बलसम्पन्नौ निस्त्रिंशवरधारिणौ।
निस्त्रिंशाभ्यां सुतीक्ष्णाभ्यामन्योन्यं संततक्षतुः॥ ३०॥

वे दोनों ही बलवान् थे। दोनोंने ही उत्तम खड्ग धारण कर रखे थे। अतः अपनी उन अत्यन्त तीखी तलवारोंसे वे एक-दूसरेको काटने लगे॥ ३०॥

निस्त्रिंशवेगाभिहतौ ततस्तौ पुरुषर्षभौ।
धरणीं समनुप्राप्तौ सर्वभूतनिषेविताम्॥ ३१॥

तलवारकी गहरी चोटसे घायल होकर वे दोनों

पुरुषश्रेष्ठ सम्पूर्ण भूतोंकी निवासभूत पृथ्वीपर गिर पड़े॥ ३१॥

मूर्छयाभिपरीताङ्गौ व्यायामेन तु मोहितौ।
ततोऽभ्यधावद् वेगेन करकर्षः सुहृत्तया॥ ३२॥
चेकितानं तथाभूतं दृष्ट्वा समरदुर्मदः।
रथमारोपयच्चैनं सर्वसैन्यस्य पश्यतः॥ ३३॥

उनके सारे अंगोंमें मूर्च्छा व्याप्त हो रही थी। दोनों ही अधिक परिश्रमके कारण अचेत हो गये थे। उस समय युद्धमें उन्मत्त होकर लड़नेवाला करकर्ष चेकितानको वैसी अवस्थामें पड़ा देख सौहार्दके नाते बड़े वेगसे दौड़ा और सम्पूर्ण सेनाके देखते-देखते उसने उन्हें अपने रथपर चढ़ा लिया॥ ३२-३३॥

तथैव शकुनिः शूरः श्यालस्तव विशाम्पते।
आरोपयद् रथं तूर्णं गौतमं रथिनां वरम्॥ ३४॥

प्रजानाथ! इसी प्रकार आपके साले शूरवीर शकुनिने रथियोंमें श्रेष्ठ कृपाचार्यको शीघ्र ही अपने रथपर बैठा लिया॥ ३४॥

सौमदत्तिं तथा क्रुद्धो धृष्टकेतुर्महाबलः।
नवत्या सायकैः क्षिप्रं राजन् विव्याध वक्षसि॥ ३५॥

राजन्! दूसरी ओर महाबली धृष्टकेतुने क्रोधमें भरकर नब्बे बाणोंसे शीघ्रतापूर्वक भूरिश्रवाकी छातीमें चोट पहुँचायी॥ ३५॥

सौमदत्तिरुरःस्थैस्तैर्भृशं बाणैरशोभत।
मध्यन्दिने महाराज रश्मिभिस्तपनो यथा॥ ३६॥

महाराज! छातीमें धँसे हुए उन बाणोंसे भूरिश्रवा उसी प्रकार शोभा पाने लगा, जैसे दोपहरके समय सूर्य अपनी किरणोंद्वारा अधिक प्रकाशित होता है॥ ३६॥

भूरिश्रवास्तु समरे धृष्टकेतुं महारथम्।
हतसूतहयं चक्रे विरथं सायकोत्तमैः॥ ३७॥

तब भूरिश्रवाने समरभूमिमें उत्तम सायकोंद्वारा महारथी धृष्टकेतुके घोड़ों और सारथिको मारकर उन्हें रथहीन कर दिया॥ ३७॥

विरथं तं समालोक्य हताश्वं हतसारथिम्।
महता शरवर्षेण च्छादयामास संयुगे॥ ३८॥

भूरिश्रवाने धृष्टकेतुको घोड़े और सारथिके मारे जानेसे रथहीन हुआ देख युद्धस्थलमें बाणोंकी बड़ी भारी वर्षा करके ढक दिया॥ ३८॥

स तु तं रथमुत्सृज्य धृष्टकेतुर्महामनाः।
आरुरोह ततो यानं शतानीकस्य मारिष॥ ३९॥

आर्य! तत्पश्चात् महामना धृष्टकेतु उस रथको छोड़कर शतानीककी सवारीपर जा बैठे॥ ३९॥

चित्रसेनो विकर्णश्च राजन् दुर्मर्षणस्तथा।
रथिनो हेमसंनाहाः सौभद्रमभिदुद्रुवुः॥ ४०॥

राजन्! इसी समय चित्रसेन, विकर्ण तथा दुर्मर्षण—इन तीन रथियोंने सोनेके कवच बाँधकर सुभद्राकुमार अभिमन्युपर धावा किया॥ ४०॥

अभिमन्योस्ततस्तैस्तु घोरं युद्धमवर्तत।
शरीरस्य यथा राजन् वातपित्तकफैस्त्रिभिः॥ ४१॥

नरेश्वर! तब उनके साथ अभिमन्युका भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ, ठीक उसी तरह, जैसे शरीरका वात, पित्त और कफ—इन तीनों धातुओंके साथ युद्ध होता रहता है॥ ४१॥

विरथांस्तव पुत्रांस्तु कृत्वा राजन् महाहवे।
न जघान नरव्याघ्रः स्मरन् भीमवचस्तदा॥ ४२॥

राजन्! उस महासमरमें आपके पुत्रोंको रथहीन करके पुरुषसिंह अभिमन्युने उस समय भीमसेनकी प्रतिज्ञाका स्मरण करके उनका वध नहीं किया॥ ४२॥

ततो राज्ञां बहुशतैर्गजाश्वरथयायिभिः।
संवृतं समरे भीष्मं देवैरपि दुरासदम्॥ ४३॥
प्रयान्तं शीघ्रमुद्वीक्ष्य परित्रातुं सुतांस्तव।
अभिमन्युं समुद्दिश्य बालमेकं महारथम्॥ ४४॥
वासुदेवमुवाचेदं कौन्तेयः श्वेतवाहनः।

तदनन्तर हाथी, घोड़े और रथपर यात्रा करनेवाले करोड़ों राजाओंसे घिरे हुए भीष्म, जो युद्धमें देवताओंके लिये भी दुर्जय थे, आपके पुत्रोंको बचानेके लिये एकमात्र बालक महारथी अभिमन्युको लक्ष्य करके तीव्र वेगसे आगे बढ़े। उनको उस ओर जाते देख श्वेतवाहन कुन्तीपुत्र अर्जुनने वसुदेवनन्दन भगवान् श्रीकृष्णसे इस प्रकार कहा—॥ ४३-४४½॥

चोदयाश्वान् हृषीकेश यत्रैते बहुला रथाः॥ ४५॥
एते हि बहवः शूराः कृतास्त्रा युद्धदुर्मदाः।
यथा हन्युर्न नः सेनां तथा माधव चोदय॥ ४६॥

'हृषीकेश! जहाँ ये बहुत-से रथ जा रहे हैं, उधर ही अपने घोड़ोंको हाँकिये। माधव! ये अस्त्र-विद्याके विद्वान् तथा रण-दुर्मद बहुसंख्यक शूरवीर जिस प्रकार हमारी सेनाका विनाश न कर सकें, उसी तरह इस रथको वहाँ ले चलिये'॥ ४५-४६॥

एवमुक्तः स वार्ष्णेयः कौन्तेयेनामितौजसा।
रथं श्वेतहयैर्युक्तं प्रेषयामास संयुगे॥ ४७॥

अमिततेजस्वी कुन्तीकुमार अर्जुनके इस प्रकार कहनेपर वृष्णिकुलनन्दन भगवान् श्रीकृष्णने युद्धमें श्वेत घोड़ोंसे जुते हुए रथको आगे बढ़ाया॥ ४७॥

निष्ठानको महानासीत् तव सैन्यस्य मारिष।
यदर्जुनो रणे क्रुद्धः संयातस्तावकान् प्रति॥ ४८॥

आर्य! रणभूमिमें क्रुद्ध हुए अर्जुन आपके सैनिकोंकी ओर जाने लगे, उस समय आपकी सेनामें बड़े जोरसे हाहाकार होने लगा॥ ४८॥

समासाद्य तु कौन्तेयो राज्ञस्तान् भीष्मरक्षिणः।
सुशर्माणमथो राजन्निदं वचनमब्रवीत्॥ ४९॥

राजन्! कुन्तीकुमार अर्जुनने भीष्मकी रक्षा करनेवाले उन राजाओंके पास जाकर सुशर्मासे इस प्रकार कहा—॥ ४९॥

जानामि त्वां युधां श्रेष्ठमत्यन्तं पूर्ववैरिणम्।
अनयस्याद्य सम्प्राप्तं फलं पश्य सुदारुणम्॥ ५०॥
अद्य ते दर्शयिष्यामि पूर्वप्रेतान् पितामहान्।

'वीर! मैं जानता हूँ, तुम पाण्डवोंके पूर्ववैरी और योद्धाओंमें अत्यन्त उत्तम हो। तुमलोगोंने जो अन्याय किया है, उसका यह अत्यन्त भयंकर फल आज प्राप्त हुआ है, इसे देखो। आज मैं तुम्हें तुम्हारे पहलेके मरे हुए पितामहोंका दर्शन कराऊँगा'॥ ५०½॥

एवं संजल्पतस्तस्य बीभत्सोः शत्रुघातिनः॥ ५१॥
श्रुत्वापि परुषं वाक्यं सुशर्मा रथयूथपः।
न चैनमब्रवीत् किंचिच्छुभं वा यदि वाशुभम्॥ ५२॥

ऐसा कहते हुए शत्रुघाती अर्जुनके परुष वचनको सुनकर भी रथयूथपति सुशर्मा उनसे भला या बुरा कुछ भी न बोला॥ ५१-५२॥

अभिगम्यार्जुनं वीरं राजभिर्बहुभिर्वृतः।
पुरस्तात् पृष्ठतश्चैव पार्श्वतश्चैव सर्वतः॥ ५३॥
परिवार्यार्जुनं संख्ये तव पुत्रैर्महारथः।
शरैः संछादयामास मेघैरिव दिवाकरम्॥ ५४॥

अनेक राजाओंसे घिरे हुए उस महारथीने आपके पुत्रोंको साथ ले युद्धमें वीर अर्जुनके सामने जाकर उन्हें आगे, पीछे और पार्श्वभाग—सब ओरसे घेर लिया और जैसे बादल सूर्यको ढक लेते हैं, उसी प्रकार बाणोंसे अर्जुनको आच्छादित कर दिया॥ ५३-५४॥

ततः प्रवृत्तः सुमहान् संग्रामः शोणितोदकः।
तावकानां च समरे पाण्डवानां च भारत॥ ५५॥

भारत! तत्पश्चात् रणक्षेत्रमें आपके पुत्रों और पाण्डवोंमें खूनको पानीकी तरह बहानेवाला महान् संग्राम छिड़ गया॥ ५५॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि सप्तमयुद्धदिवसे सुशर्मार्जुनसमागमे चतुरशीतितमोऽध्यायः॥ ८४॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें सातवें दिनके युद्धमें सुशर्मा और अर्जुनकी भिड़ंतसे सम्बन्ध रखनेवाला चौरासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८४॥

पञ्चाशीतितमोऽध्यायः

अर्जुनका पराक्रम, पाण्डवोंका भीष्मपर आक्रमण, युधिष्ठिरका शिखण्डीको उपालम्भ और भीमका पुरुषार्थ

संजय उवाच

स ताड्यमानस्तु शरैर्धनंजयः
पदा हतो नाग इव श्वसन् बली।
बाणेन बाणेन महारथानां
चिच्छेद चापानि रणे प्रसह्य॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! इस प्रकार शत्रुओंके बाणोंसे आहत होकर बलवान् अर्जुन पैरसे कुचले हुए सर्पकी भाँति क्रोधसे लंबी साँस खींचने लगे। उन्होंने बलपूर्वक पृथक्-पृथक् बाण मारकर युद्धमें सभी महारथियोंके धनुष काट डाले॥ १॥

संछिद्य चापानि च तानि राज्ञां
तेषां रणे वीर्यवतां क्षणेन।
विव्याध बाणैर्युगपन्महात्मा
निःशेषतां तेष्वथ मन्यमानः॥ २॥

रणक्षेत्रमें उन पराक्रमी नरेशोंके धनुषोंको क्षणभरमें काटकर महामना अर्जुनने उनका पूर्णतः संहार कर देनेकी इच्छासे एक ही साथ सबको अपने बाणोंसे घायल कर दिया॥ २॥

निपेतुराजौ रुधिरप्रदिग्धा-
स्ते ताडिताः शक्रसुतेन राजन्।
विभिन्नगात्राः पतितोत्तमाङ्गा
गतासवश्छिन्नतनुत्रकायाः॥ ३॥

राजन्! इन्द्रपुत्र अर्जुनके द्वारा ताड़ित होकर वे सभी नरेश खूनसे लथपथ हो युद्धभूमिमें गिर पड़े। उनके अंग छिन्न-भिन्न हो गये थे, मस्तक कटकर दूर

जा गिरे थे, कवच और शरीरके टुकड़े-टुकड़े हो गये थे और इस अवस्थामें पहुँचकर उन्हें अपने प्राण खो देने पड़े थे॥ ३॥

महीं गताः पार्थबलाभिभूता
विचित्ररूपा युगपद् विनेशुः।
दृष्ट्वा हतांस्तान् युधि राजपुत्रां-
स्त्रिगर्तराजः प्रययौ रथेन॥ ४॥

पार्थके बलसे अभिभूत होकर वे विचित्ररूपधारी राजकुमार एक साथ ही पृथ्वीपर गिरकर नष्ट हो गये। उन राजपुत्रोंको युद्धमें मारा गया देख त्रिगर्तराज सुशर्माने रथके द्वारा अर्जुनपर आक्रमण किया॥ ४॥

तेषां रथानामथ पृष्ठगोपा
द्वात्रिंशदन्येऽभ्यपतन्त पार्थम्।
तथैव ते तं परिवार्य पार्थं
विकृष्य चापानि महारवाणि॥ ५॥
अवीवृषन् बाणमहौघवृष्ट्या
यथा गिरिं तोयधरा जलौघैः।
सम्पीड्यमानस्तु शरौघवृष्ट्या
धनंजयस्तान् युधि जातरोषः॥ ६॥

उन राजपुत्रोंके रथोंके जो दूसरे-दूसरे बत्तीस पृष्ठरक्षक थे, वे भी (सुशर्माके साथ ही) अर्जुनपर टूट पड़े। इसी प्रकार उन सबने अर्जुनको चारों ओरसे घेरकर महान् टंकारध्वनि करनेवाले अपने धनुष खींचे और जैसे मेघ पर्वतपर जलराशिकी वर्षा करते हैं, उसी प्रकार अर्जुनपर बाणसमूहोंकी वृष्टि करने लगे। उनके बाणसमूहोंकी वर्षासे पीड़ित होकर युद्धस्थलमें अर्जुनके हृदयमें बड़ा भारी रोष हुआ॥ ५-६॥

षष्ट्या शरैः संयति तैलधौतै-
र्जघान तानप्यथ पृष्ठगोपान्।
रथांश्च तांस्तानवजित्य संख्ये
धनंजयः प्रीतमना यशस्वी॥ ७॥
अथात्वरद् भीष्मवधाय जिष्णु-
र्बलानि राजन् समरे निहत्य।

उन्होंने रणक्षेत्रमें तेलके धोये हुए साठ बाण मारकर उन पृष्ठरक्षकोंका भी संहार कर दिया। इस प्रकार युद्धभूमिमें उन सभी रथियोंको जीतकर और कौरव-सेनाओंका समरमें संहार करके प्रसन्नचित्त हुए यशस्वी विजयी अर्जुनने भीष्मके वधके लिये शीघ्रता की॥ ७½॥

त्रिगर्तराजो निहतान् समीक्ष्य
महात्मना तानथ बन्धुवर्गान्॥ ८॥
रणे पुरस्कृत्य नराधिपांस्तान्
जगाम पार्थं त्वरितो वधाय।

महामना अर्जुनके द्वारा अपने बन्धुसमूहोंको मारा गया देख त्रिगर्तराज सुप्रसिद्ध नरपतियोंको युद्धके लिये आगे करके तुरंत ही अर्जुनका वध करनेके लिये उनके सामने आया॥ ८½॥

अभिद्रुतं चास्त्रभृतां वरिष्ठं
धनंजयं वीक्ष्य शिखण्डिमुख्याः॥ ९॥
अभ्युद्ययुस्ते शितशस्त्रहस्ता
रिरक्षिषन्तो रथमर्जुनस्य।

अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ वीर अर्जुनपर आक्रमण होता देख शिखण्डी आदि महारथी उनके रथकी रक्षा करनेके लिये तीखे अस्त्र-शस्त्र हाथमें लिये आगे बढ़े॥ ९½॥

पार्थोऽपि तानापततः समीक्ष्य
त्रिगर्तराज्ञा सहितान् नृवीरान्॥ १०॥
विध्वंसयित्वा समरे धनुष्मान्
गाण्डीवमुक्तैर्निशितैः पृषत्कैः।
भीष्मं यियासुर्युधि संददर्श
दुर्योधनं सैन्धवादींश्च राज्ञः॥ ११॥

इधर धनुर्धर अर्जुन भी त्रिगर्तराजके साथ उन नरवीरोंको आते देख संग्रामभूमिमें गाण्डीव धनुषसे छोड़े हुए तीखे बाणोंद्वारा उन्हें नष्ट करके भीष्मजीके पास जाना चाहते थे, इतनेहीमें उन्होंने युद्धस्थलमें राजा दुर्योधन और सिन्धुराज जयद्रथ आदिको देखा॥ १०-११॥

संवारयिष्णूनभिवारयित्वा
मुहूर्तमायोध्य बलेन वीरः।
उत्सृज्य राजानमनन्तवीर्यो
जयद्रथादींश्च नृपान् महौजाः॥ १२॥
ययौ ततो भीमबलो मनस्वी
गाङ्गेयमाजौ शरचापपाणिः।

दुर्योधन और जयद्रथ आदि योद्धा अर्जुनको रोकनेके प्रयत्नमें लगे थे; अतः उस समय अनन्त पराक्रमी एवं महातेजस्वी वीर अर्जुनने दो घड़ीतक बलपूर्वक युद्ध करके उन सबको रोक दिया। तत्पश्चात् राजा दुर्योधन और जयद्रथ आदि नरेशोंको वहीं छोड़कर भयंकर बलसे सम्पन्न एवं मनस्वी अर्जुन हाथमें धनुष-बाण ले युद्धस्थलमें गंगानन्दन भीष्मकी ओर चल दिये॥ १२½॥

(भीष्मोऽपि दृष्ट्वा समरे कृतास्त्रान्
स पाण्डवानां रथिनो ह्युदारान्।

विहाय संग्राममुखे धनंजयं
जवेन पार्थं पुनराजगाम॥)

भीष्म भी अस्त्र-विद्याके विद्वान् एवं उदार पाण्डवरथियोंको युद्धस्थलमें अपने सामने देखते हुए भी उन सबको वहीं छोड़कर बड़े वेगसे पुनः अर्जुनके पास आये।

युधिष्ठिरश्च प्रबलो महात्मा
समाययौ त्वरितो जातकोपः॥ १३॥
मद्राधिपं समभित्यज्य संख्ये
स्वभागमाप्तं तमनन्तकीर्तिः।
सार्धं स माद्रीसुतभीमसेनै-
र्भीष्मं ययौ शान्तनवं रणाय॥ १४॥

उस समय उत्कृष्ट बलशाली अनन्तकीर्ति महात्मा युधिष्ठिर भी युद्धमें अपने भागके रूपमें प्राप्त हुए मद्रराज शल्यको छोड़कर नकुल, सहदेव और भीमसेनके साथ क्रोधपूर्वक तुरंत वहाँसे चल दिये और युद्धके लिये शान्तनुनन्दन भीष्मके पास जा पहुँचे॥ १३-१४॥

तैः सम्प्रयुक्तैः स महारथाग्र्यै-
र्गङ्गासुतः समरे चित्रयोधी।
न विव्यथे शान्तनवो महात्मा
समागतैः पाण्डुसुतैः समस्तैः॥ १५॥

महारथियोंमें श्रेष्ठ समस्त पाण्डव संगठित होकर वहाँ आ पहुँचे थे तो भी उनसे समरांगणमें विचित्र युद्ध करनेवाले गंगापुत्र शान्तनुनन्दन महात्मा भीष्मको व्यथा नहीं हुई॥ १५॥

अथैत्य राजा युधि सत्यसंधो
जयद्रथोऽत्युग्रबलो मनस्वी।
चिच्छेद चापानि महारथानां
प्रसह्य तेषां धनुषा वरेण॥ १६॥

तत्पश्चात् सत्यप्रतिज्ञ अत्यन्त भयंकर शक्तिशाली और मनस्वी राजा जयद्रथने रणमें सामने आकर अपने उत्तम धनुषद्वारा बलपूर्वक उन महारथियोंके धनुष काट डाले॥ १६॥

युधिष्ठिरं भीमसेनं यमौ च
पार्थं कृष्णं युधि संजातकोपः।
दुर्योधनः क्रोधविषो महात्मा
जघान बाणैरनलप्रकाशैः॥ १७॥

क्रोधरूपी विष उगलनेवाले महामनस्वी दुर्योधनने युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल, सहदेव, अर्जुन तथा श्रीकृष्णपर युद्धमें कुपित हो अग्निके समान तेजस्वी बाणोंका प्रहार किया॥ १७॥

कृपेण शल्येन शलेन चैव
तथा विभो चित्रसेनेन चाजौ।
विद्धाः शरैस्तेऽतिविवृद्धकोपै-
र्देवा यथा दैत्यगणैः समेतैः॥ १८॥

प्रभो! जैसे क्रोधमें भरे हुए दैत्यगण एकत्र हो देवताओंपर प्रहार करते हैं, उसी प्रकार कृपाचार्य, शल्य, शल तथा चित्रसेनने युद्धस्थलमें अत्यन्त क्रोधमें भरकर समस्त पाण्डवोंको अपने बाणोंसे घायल कर दिया॥ १८॥

छिन्नायुधं शान्तनवेन राजा
शिखण्डिनं प्रेक्ष्य च जातकोपः।
अजातशत्रुः समरे महात्मा
शिखण्डिनं क्रुद्ध उवाच वाक्यम्॥ १९॥

शान्तनुनन्दन भीष्मने जब शिखण्डीका धनुष काट दिया,* तब समरांगणमें अजातशत्रु महात्मा युधिष्ठिर शिखण्डीकी ओर देखकर कुपित हो उठे और उससे क्रोधपूर्वक इस प्रकार बोले—॥ १९॥

उक्त्वा तथा त्वं पितुरग्रतो मा-
महं हनिष्यामि महाव्रतं तम्।
भीष्मं शरौघैर्विमलार्कवर्णैः
सत्यं वदामीति कृता प्रतिज्ञा॥ २०॥
त्वया च नैनां सफलां करोषि
देवव्रतं यन्न निहंसि युद्धे।
मिथ्याप्रतिज्ञो भव मात्र वीर
रक्ष स्वधर्मं स्वकुलं यशश्च॥ २१॥

'वीर! तुमने अपने पिताके सामने प्रतिज्ञापूर्वक मुझसे यह कहा था कि 'मैं महान् व्रतधारी भीष्मको निर्मल सूर्यके समान तेजस्वी बाणसमूहोंद्वारा अवश्य मार डालूँगा, यह बात मैं सत्य कहता हूँ।' ऐसी प्रतिज्ञा तुमने की थी; परंतु तुम इस प्रतिज्ञाको सफल नहीं करते हो। कारण कि युद्धमें देवव्रत भीष्मका वध नहीं कर रहे हो। झूठी प्रतिज्ञा करनेवाला न बनो। अपने धर्म, कुल और यशकी रक्षा करो॥ २०-२१॥

प्रेक्षस्व भीष्मं युधि भीमवेगं
सर्वांस्तपन्तं मम सैन्यसंघान्।

---

* भीष्मपितामहने शिखण्डीको अपने ऊपर प्रहार करनेके लिये आया देखकर ही उसके धनुषको काट दिया था, उसके शरीरपर कोई प्रहार नहीं किया। अतः कोई दोष नहीं है।

शरौघजालैरतितिग्मवेगैः
कालं यथा कालकृतं क्षणेन॥ २२॥

'देखो! जैसे यमराज समयानुसार उपस्थित होकर क्षणभरमें देहधारीका विनाश कर देते हैं, उसी प्रकार ये युद्धमें भयंकर वेगशाली भीष्म अत्यन्त प्रचण्ड वेगवाले बाणसमूहोंके द्वारा मेरी समस्त सेनाओंको कितना संताप दे रहे हैं॥ २२॥

निकृत्तचापः समरेऽनपेक्षः
पराजितः शान्तनवेन चाजौ।
विहाय बन्धूनथ सोदरांश्च
क्व यास्यसे नानुरूपं तवेदम्॥ २३॥

'युद्धमें शान्तनुनन्दन भीष्मने तुम्हारा धनुष काटकर तुम्हें पराजित कर दिया; फिर भी तुम उनकी ओरसे निरपेक्ष हो रहे हो। अपने सगे भाइयोंको छोड़कर कहाँ जाओगे? यह कायदा तुम्हारे अनुरूप नहीं है॥ २३॥

दृष्ट्वा हि भीष्मं तमनन्तवीर्यं
भग्नं च सैन्यं द्रवमाणमेवम्।
भीतोऽसि नूनं द्रुपदस्य पुत्र
तथा हि ते मुखवर्णोऽप्रहृष्टः॥ २४॥

'द्रुपदकुमार! अनन्त पराक्रमी भीष्मको तथा उनके डरसे इस प्रकार हतोत्साह होकर भागती हुई मेरी इस सेनाको देखकर निश्चय ही तुम डर गये हो; क्योंकि तुम्हारे मुखकी कान्ति कुछ ऐसी ही अप्रसन्न दिखायी देती है॥ २४॥

अज्ञायमाने च धनंजयेऽपि
महाहवे सम्प्रसक्ते नृवीरे।
कथं हि भीष्मात् प्रथितः पृथिव्यां
भयं त्वमद्य प्रकरोषि वीर॥ २५॥

'वीर! नरवीर अर्जुन कहीं महायुद्धमें फँसे हुए हैं। उनका इस समय पता नहीं है। ऐसे समयमें तुम आज भूमण्डलके विख्यात वीर होकर भीष्मसे भय कैसे कर रहे हो?'॥ २५॥

स धर्मराजस्य वचो निशम्य
रूक्षाक्षरं विप्रलापानुबद्धम्।
प्रत्यादेशं मन्यमानो महात्मा
प्रतत्वरे भीष्मवधाय राजन्॥ २६॥

राजन्! धर्मराजके इस वचनमें प्रत्येक अक्षर रूखेपनसे भरा हुआ था। उसके द्वारा उन्होंने कितनी ही मनके विपरीत बातें कही थीं, तथापि उस वचनको सुनकर महामना शिखण्डीने इसे अपने लिये आदेश माना और तुरंत ही भीष्मका वध करनेके लिये सचेष्ट हो गया॥ २६॥

तमापतन्तं महता जवेन
शिखण्डिनं भीष्ममभिद्रवन्तम्।
निवारयामास हि शल्य एन-
मस्त्रेण घोरेण सुदुर्जयेन॥ २७॥

शिखण्डीको बड़े वेगसे आते और भीष्मपर धावा करते देख शल्यने अत्यन्त दुर्जय एवं भयंकर अस्त्रसे उसे रोक दिया!॥ २७॥

स चापि दृष्ट्वा समुदीर्यमाण-
मस्त्रं युगान्ताग्निसमप्रकाशम्।
न सम्मुमोह द्रुपदस्य पुत्रो
राजन् महेन्द्रप्रतिमप्रभावः॥ २८॥

राजन्! प्रलयकालकी अग्निके समान तेजस्वी उस अस्त्रको प्रकट हुआ देखकर देवराज इन्द्रके समान प्रभावशाली द्रुपदकुमार शिखण्डी घबराया नहीं॥ २८॥

तस्थौ च तत्रैव महाधनुष्मान्-
शरैस्तदस्त्रं प्रतिबाधमानः।
अथाददे वारुणमन्यदस्त्रं
शिखण्ड्यथोग्रं प्रतिघातमस्य॥ २९॥

वह महाधनुर्धर वीर अपने बाणोंद्वारा शल्यके अस्त्रका निवारण करता हुआ वहीं डटा रहा। फिर शिखण्डीने शल्यके अस्त्रका प्रतिघात करनेवाले अन्य भयंकर वारुणास्त्रको हाथमें लिया॥ २९॥

तदस्त्रमस्त्रेण विदार्यमाणं
खस्थाः सुरा ददृशुः पार्थिवाश्च।
भीष्मस्तु राजन् समरे महात्मा
धनुश्च चित्रं ध्वजमेव चापि॥ ३०॥
छित्त्वानदत् पाण्डुसुतस्य वीरो
युधिष्ठिरस्याजमीढस्य राज्ञः।

आकाशमें खड़े हुए देवताओं तथा रणक्षेत्रमें आये हुए राजाओंने देखा, शिखण्डीके दिव्यास्त्रसे शल्यका अस्त्र विदीर्ण हो रहा है। राजन्! महात्मा एवं वीर भीष्म युद्धस्थलमें अजमीढ़कुलनन्दन पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिरके विचित्र धनुष और ध्वजको काटकर गर्जना करने लगे॥ ३०½॥

ततः समुत्सृज्य धनुः सबाणं
युधिष्ठिरं वीक्ष्य भयाभिभूतम्॥ ३१॥
गदां प्रगृह्याभिपपात संख्ये
जयद्रथं भीमसेनः पदातिः।

तब धनुष-बाण फेंककर भयसे दबे हुए युधिष्ठिरको देखकर भीमसेन गदा लेकर युद्धमें पैदल ही राजा जयद्रथपर टूट पड़े॥ ३१½॥

तमापतन्तं सहसा जवेन
जयद्रथः सगदं भीमसेनम्॥ ३२॥
विव्याध घोरैर्यमदण्डकल्पैः
शितैःशरैः पञ्चशतैः समन्तात्।

इस प्रकार सहसा हाथमें गदा लिये भीमसेनको वेगपूर्वक आते देख जयद्रथने यमदण्डके समान भयंकर पाँच सौ तीखे बाणोंद्वारा सब ओरसे उन्हें घायल कर दिया॥ ३२½॥

अचिन्तयित्वा स शरांस्तरस्वी
वृकोदरः क्रोधपरीतचेताः॥ ३३॥
जघान वाहान् समरे समन्तात्
पारावतान् सिन्धुराजस्य संख्ये।

वेगशाली भीमसेन उसके बाणोंकी कोई परवा न करते हुए मन-ही-मन क्रोधसे जल उठे। तत्पश्चात् उन्होंने समरभूमिमें सिन्धुराजके कबूतरके समान रंगवाले घोड़ोंको मार डाला॥ ३३½॥

ततोऽभिवीक्ष्याप्रतिमप्रभाव-
स्तवात्मजस्त्वरमाणो रथेन॥ ३४॥
अभ्याययौ भीमसेनं निहन्तुं
समुद्यतास्त्रः सुरराजकल्पः।

यह देखकर आपका अनुपम प्रभावशाली पुत्र देवराजसदृश दुर्योधन भीमसेनको मारनेके लिये हथियार उठाये बड़ी उतावलीके साथ रथके द्वारा वहाँ आ पहुँचा॥ ३४½॥

भीमोऽप्यथैनं सहसा विनद्य
प्रत्युद्ययौ गदया तर्जयानः॥ ३५॥

तब भीमसेन भी सहसा सिंहनाद करके गदाद्वारा गर्जन-तर्जन करते हुए जयद्रथकी ओर बढ़े॥ ३५॥

(जयद्रथो भग्नवाहो रथं तं
त्यक्त्वा ययौ यत्र राजा कुरूणाम्।
स सौबलः सानुगः सानुजश्च
दृष्ट्वा भीमं मूढचेता भयार्तः॥

घोड़ोंके मारे जानेपर जयद्रथ उस रथको छोड़कर जहाँ शकुनि, सेवकवृन्द तथा छोटे भाइयोंसहित कुरुराज दुर्योधन था, वहीं चला गया। भीमसेनको देखकर जयद्रथका मन किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया था। वह भयसे पीड़ित हो रहा था।

भीमोऽप्यथैनं सहसा विनद्य
प्रत्युद्ययौ गदया हन्तुकामः।
स सौबलं तव पुत्रं निरीक्ष्य
दुर्योधनं सानुजं रोषयुक्तः॥)

भीमसेन भी शकुनि और भाइयोंसहित आपके पुत्र दुर्योधनको देखकर रोषमें भर गये और सहसा गर्जना करके गदाद्वारा जयद्रथको मार डालनेकी इच्छासे आगे बढ़े।

समुद्यतां तां यमदण्डकल्पां
दृष्ट्वा गदां ते कुरवः समन्तात्।
विहाय सर्वे तव पुत्रमुग्रं
पातं गदायाः परिहर्तुकामाः॥ ३६॥
अपक्रान्तास्तुमुले सम्प्रमर्दे
सुदारुणे भारत मोहनीये।
अमूढचेतास्त्वथ चित्रसेनो
महागदामापतन्तीं निरीक्ष्य॥ ३७॥

यमदण्डके समान भयंकर उस गदाको उठी हुई देख समस्त कौरव आपके पुत्रको वहीं छोड़कर गदाके उग्र आघातसे बचनेके लिये चारों ओर भाग गये। भारत! मोहमें डालनेवाले उस अत्यन्त दारुण एवं भयंकर जनसंहारमें उस महागदाको आती देख केवल चित्रसेनका चित्त किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं हुआ था॥ ३६-३७॥

रथं स्वमुत्सृज्य पदातिराजौ
प्रगृह्य खड्गं विपुलं च चर्म।
अवप्लुतः सिंह इवाचलाग्रा-
ज्जगामान्यं भूमिप भूमिदेशम्॥ ३८॥

राजन्! वह अपने रथको छोड़कर हाथमें बहुत बड़ी ढाल और तलवार ले पर्वतके शिखरसे सिंहकी भाँति कूद पड़ा और पैदल ही विचरता हुआ युद्धस्थलके दूसरे प्रदेशमें चला गया॥ ३८॥

गदापि सा प्राप्य रथं सुचित्रं
साश्वं ससूतं विनिहत्य संख्ये।
जगाम भूमिं ज्वलिता महोल्का
भ्रष्टाम्बराद् गामिव सम्पतन्ती॥ ३९॥

वह गदा भी चित्रसेनके विचित्र रथपर पहुँचकर उसे घोड़े और सारथिसहित चूर-चूर करके आकाशसे टूटकर पृथ्वीपर गिरनेवाली जलती हुई विशाल उल्काके समान रणभूमिमें जा गिरी॥ ३९॥

आश्चर्यभूतं सुमहत् त्वदीया
दृष्ट्वैव तद् भारत सम्प्रहृष्टाः।
सर्वे विनेदुः सहिताः समन्तात्
पुपूजिरे तव पुत्रस्य शौर्यम्॥ ४०॥

भारत! इस समय आपके समस्त सैनिक चित्रसेनका वह महान् आश्चर्यमय कार्य देखकर बड़े प्रसन्न हुए। वे सभी सब ओरसे एक साथ आपके पुत्रके शौर्यकी प्रशंसा और गर्जना करने लगे॥ ४०॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि सप्तमयुद्धदिवसे पञ्चाशीतितमोऽध्यायः॥ ८५॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें सातवें दिनके युद्धसे सम्बन्ध रखनेवाला पचासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८५॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठके तीन श्लोक मिलाकर कुल ४३ श्लोक हैं।]

षडशीतितमोऽध्यायः

भीष्म और युधिष्ठिरका युद्ध, धृष्टद्युम्न और सात्यकिके साथ विन्द और अनुविन्दका संग्राम, द्रोण आदिका पराक्रम और सातवें दिनके युद्धकी समाप्ति

संजय उवाच

विरथं तं समासाद्य चित्रसेनं यशस्विनम्।
रथमारोपयामास विकर्णस्तनयस्तव॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! रथहीन हुए अपने यशस्वी भाई चित्रसेनके पास जाकर आपके पुत्र विकर्णने उसे अपने रथपर चढ़ा लिया॥ १॥

तस्मिंस्तथा वर्तमाने तुमुले संकुले भृशम्।
भीष्मः शान्तनवस्तूर्णं युधिष्ठिरमुपाद्रवत्॥ २॥

जब इस प्रकार भयंकर और घमासान युद्ध होने लगा, उसी समय शान्तनुनन्दन भीष्मने तुरंत ही राजा युधिष्ठिरपर धावा किया॥ २॥

ततः सरथनागाश्वाः समकम्पन्त सृंजयाः।
मृत्योरास्यमनुप्राप्तं मेनिरे च युधिष्ठिरम्॥ ३॥

यह देख सृंजयवीर रथ, हाथी और घोड़ोंसहित काँप उठे। उन्होंने युधिष्ठिरको मौतके मुखमें पड़ा हुआ ही समझा॥ ३॥

युधिष्ठिरोऽपि कौरव्यो यमाभ्यां सहितः प्रभुः।
महेष्वासं नरव्याघ्रं भीष्मं शान्तनवं ययौ॥ ४॥

कुरुनन्दन राजा युधिष्ठिर भी नकुल और सहदेवके साथ महाधनुर्धर पुरुषसिंह शान्तनुनन्दन भीष्मका सामना करनेके लिये आगे बढ़े॥ ४॥

ततः शरसहस्राणि प्रमुञ्चन् पाण्डवो युधि।
भीष्मं संछादयामास यथा मेघो दिवाकरम्॥ ५॥

जैसे मेघ सूर्यको ढक लेता है, उसी प्रकार युद्धस्थलमें हजारों बाणोंकी वर्षा करते हुए पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरने भीष्मको आच्छादित कर दिया॥ ५॥

तेन सम्यक् प्रणीतानि शरजालानि मारिष।
प्रतिजग्राह गाङ्गेयः शतशोऽथ सहस्रशः॥ ६॥

आर्य! उनके द्वारा अच्छी तरह चलाये हुए सैकड़ों और हजारों बाणोंके समूहको गंगानन्दन भीष्मने ग्रहण कर लिया (अपने बाणोंद्वारा विफल कर दिया)॥ ६॥

तथैव शरजालानि भीष्मेणास्तानि मारिष।
आकाशे समदृश्यन्त खगमानां व्रजा इव॥ ७॥

आर्य! इसी प्रकार भीष्मके चलाये हुए बाणसमूह भी आकाशमें पक्षियोंके झुंडके समान दिखायी देने लगे॥ ७॥

निमेषार्धेन कौन्तेयं भीष्मः शान्तनवो युधि।
अदृश्यं समरे चक्रे शरजालेन भागशः॥ ८॥

शान्तनुनन्दन भीष्मने युद्धस्थलमें आधे निमेषमें ही पृथक्-पृथक् बाणोंका जाल-सा बिछाकर कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरको अदृश्य कर दिया॥ ८॥

ततो युधिष्ठिरो राजा कौरव्यस्य महात्मनः।
नाराचं प्रेषयामास क्रुद्ध आशीविषोपमम्॥ ९॥

तब क्रोधमें भरे हुए राजा युधिष्ठिरने कुरुवंशी महात्मा भीष्मपर विषधर सर्पके समान नाराचका प्रहार किया॥

असम्प्राप्तं ततस्तं तु क्षुरप्रेण महारथः।
चिच्छेद समरे राजन् भीष्मस्तस्य धनुश्च्युतम्॥ १०॥

राजन्! परंतु महारथी भीष्मने युधिष्ठिरके धनुषसे छूटे हुए उस नाराचको अपने पास पहुँचनेसे पहले ही समरभूमिमें एक क्षुरप्रद्वारा काट गिराया॥ १०॥

तं तु छित्त्वा रणे भीष्मो नाराचं कालसम्मितम्।
निजघ्ने कौरवेन्द्रस्य हयान् काञ्चनभूषणान्॥ ११॥

इस प्रकार रणभूमिमें कालके समान भयंकर उस नाराचको काटकर भीष्मने कौरवराज युधिष्ठिरके सुवर्णभूषणोंसे युक्त घोड़ोंको मार डाला॥ ११॥

(हताश्वे तु रथे तिष्ठन् शक्तिं चिक्षेप धर्मराट्।
तामापतन्तीं सहसा कालपाशोपमां शिताम्॥
चिच्छेद समरे भीष्मः शरैः संनतपर्वभिः॥)

घोड़ोंके मारे जानेपर भी उसी रथमें खड़े हुए धर्मराज युधिष्ठिरने भीष्मपर शक्ति चलायी। कालपाशके समान तीखी एवं भयंकर उस शक्तिको सहसा अपनी ओर आती देख भीष्मने झुकी हुई गाँठवाले बाणोंद्वारा उसे रणभूमिमें काट गिराया।

हताश्वं तु रथं त्यक्त्वा धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः।
आरुरोह रथं तूर्णं नकुलस्य महात्मनः॥ १२॥

तदनन्तर जिसके घोड़े मारे गये थे, उस रथको त्यागकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर तुरंत ही महामना नकुलके रथपर आरूढ़ हो गये॥ १२॥

यमावपि हि संक्रुद्धः समासाद्य रणे तदा।
शरैः संछादयामास भीष्मः परपुरंजयः॥ १३॥

उस समय रणक्षेत्रमें नकुल और सहदेवको पाकर शत्रुनगरीपर विजय पानेवाले भीष्मने अत्यन्त कुपित हो उन्हें बाणोंसे आच्छादित कर दिया॥ १३॥

तौ तु दृष्ट्वा महाराज भीष्मबाणप्रपीडितौ।
जगाम परमां चिन्तां भीष्मस्य वधकाङ्क्षया॥ १४॥

महाराज! नकुल और सहदेवको भीष्मके बाणोंसे अत्यन्त पीड़ित देख युधिष्ठिर अपने मनमें भीष्मके वधकी इच्छा लेकर गहन विचार करने लगे॥ १४॥

ततो युधिष्ठिरो वश्यान् राज्ञस्तान् समचोदयत्।
भीष्मं शान्तनवं सर्वे निहतेति सुहृद्गणान्॥ १५॥

तदनन्तर युधिष्ठिरने अपने वशवर्ती नरेशों तथा सुहृद्गणोंको यह आदेश दिया कि सब लोग मिलकर शान्तनुनन्दन भीष्मको मार डालो॥ १५॥

ततस्ते पार्थिवाः सर्वे श्रुत्वा पार्थस्य भाषितम्।
महता रथवंशेन परिवव्रुः पितामहम्॥ १६॥

तब कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरका यह कथन सुनकर समस्त राजाओंने विशाल रथसमूहके द्वारा पितामह भीष्मको चारों ओरसे घेर लिया॥ १६॥

स समन्तात् परिवृतः पिता देवव्रतस्तव।
चिक्रीड धनुषा राजन् पातयानो महारथान्॥ १७॥

राजन्! सब ओरसे घिरे हुए आपके ताऊ देवव्रत सब महारथियोंको धराशायी करते हुए अपने धनुषके द्वारा क्रीड़ा करने लगे॥ १७॥

तं चरन्तं रणे पार्था ददृशुः कौरवं युधि।
मृगमध्यं प्रविश्येव यथा सिंहशिशुं वने॥ १८॥

जैसे सिंहका बच्चा वनके भीतर मृगोंके झुंडमें घुसकर खेल कर रहा हो, उसी प्रकार कुन्तीकुमारोंने युद्धमें विचरते हुए कुरुवंशी भीष्मको वहाँ देखा॥ १८॥

तर्जयानं रणे वीरांस्त्रासयानं च सायकैः।
दृष्ट्वा त्रेसुर्महाराज सिंहं मृगगणा इव॥ १९॥

महाराज! वे रणभूमिमें वीरोंको डाँटते और बाणोंके द्वारा उन्हें त्रास देते थे। जैसे मृगोंके समूह सिंहको देखकर डर जाते हैं, उसी प्रकार सब राजा भीष्मको देखकर भयभीत हो गये॥ १९॥

रणे भारतसिंहस्य ददृशुः क्षत्रिया गतिम्।
अग्नेर्वायुसहायस्य यथा कक्षं दिधक्षतः॥ २०॥

जैसे वायुकी सहायतासे घास-फूसको जलानेकी इच्छावाली अग्नि अत्यन्त प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार भरतवंशके सिंह भीष्मके स्वरूपको रणक्षेत्रमें क्षत्रियोंने अत्यन्त तेजस्वी देखा॥ २०॥

शिरांसि रथिनां भीष्मः पातयामास संयुगे।
तालेभ्यः परिपक्वानि फलानि कुशलो नरः॥ २१॥

भीष्म उस युद्धस्थलमें रथियोंके मस्तक काट-काटकर उसी प्रकार गिराने लगे, जैसे कोई कुशल मनुष्य ताड़के वृक्षोंसे पके हुए फलोंको गिरा रहा हो॥ २१॥

पतद्भिश्च महाराज शिरोभिर्धरणीतले।
बभूव तुमुलः शब्दः पततामश्मनामिव॥ २२॥

महाराज! भूतलपर पटापट गिरते हुए मस्तकोंका आकाशसे पृथ्वीपर पड़नेवाले पत्थरोंके समान भयंकर शब्द हो रहा था॥ २२॥

तस्मिन् सुतुमुले युद्धे वर्तमाने भयानके।
सर्वेषामेव सैन्यानामासीद् व्यतिकरो महान्॥ २३॥

उस भयानक तुमुल युद्धके होते समय सभी सेनाओंका आपसमें भारी संघर्ष हो गया॥ २३॥

भिन्नेषु तेषु व्यूहेषु क्षत्रिया इतरेतरम्।
एकमेकं समाहूय युद्धायैवावतस्थिरे॥ २४॥

उन सबका व्यूह भंग हो जानेपर भी सम्पूर्ण क्षत्रिय परस्पर एक-एकको ललकारते हुए युद्धके लिये डटे ही रहे॥ २४॥

शिखण्डी तु समासाद्य भरतानां पितामहम्।
अभिदुद्राव वेगेन तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत्॥ २५॥

शिखण्डी भरतवंशके पितामह भीष्मके पास पहुँचकर उनकी ओर बड़े वेगसे दौड़ा और बोला—'खड़ा रह, खड़ा रह'॥ २५॥

अनादृत्य ततो भीष्मस्तं शिखण्डिनमाहवे।
प्रययौ सृंजयान् क्रुद्धः स्त्रीत्वं चिन्त्य शिखण्डिनः॥ २६॥

किंतु भीष्मने शिखण्डीके स्त्रीत्वका चिन्तन करके युद्धमें उसकी अवहेलना कर दी और सृंजयवंशी क्षत्रियोंपर क्रोधपूर्वक आक्रमण किया॥ २६॥

सृंजयास्तु ततो दृष्ट्वा हृष्टं भीष्मं महारणे।
सिंहनादांश्च विविधांश्चक्रुः शङ्खविमिश्रितान्॥ २७॥

तब सृंजयगण उस महायुद्धमें हर्ष और उत्साहसे भरे हुए भीष्मको देखकर शंखध्वनिके साथ नाना प्रकारसे सिंहनाद करने लगे॥ २७॥

ततः प्रववृते युद्धं व्यतिषक्तरथद्विपम्।
पश्चिमां दिशमासाद्य स्थिते सवितरि प्रभो॥ २८॥

प्रभो! जब सूर्य पश्चिम दिशामें ढलने लगे, उस समय युद्धका रूप और भी भयंकर हो गया। रथ-से-रथ और हाथी-से-हाथी भिड़ गये॥ २८॥

धृष्टद्युम्नोऽथ पाञ्चाल्यः सात्यकिश्च महारथः।
पीडयन्तौ भृशं सैन्यं शक्तितोमरवृष्टिभिः॥ २९॥

पांचालराजकुमार धृष्टद्युम्न तथा महारथी सात्यकि—ये दोनों शक्ति और तोमरोंकी वर्षासे कौरव-सेनाको अत्यन्त पीड़ा देने लगे॥ २९॥

शस्त्रैश्च बहुभी राजन् जघ्नतुस्तावकान् रणे।
ते हन्यमानाः समरे तावका भरतर्षभ॥ ३०॥
आर्यां युद्धे मतिं कृत्वा न त्यजन्ति स्म संयुगम्।
यथोत्साहं तु समरे निजघ्नुस्तावका रणे॥ ३१॥

राजन्! उन दोनोंने युद्धमें अनेक प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंद्वारा आपके सैनिकोंका संहार करना आरम्भ किया। भरतश्रेष्ठ! उनके द्वारा समरमें मारे जाते हुए आपके सैनिक युद्धविषयक श्रेष्ठ बुद्धिका सहारा लेकर ही संग्राम छोड़कर भाग नहीं रहे थे। आपके योद्धा भी रणक्षेत्रमें पूर्ण उत्साहके साथ शत्रुओंका संहार करते थे॥ ३०-३१॥

तत्राक्रन्दो महानासीत् तावकानां महात्मनाम्।
वध्यतां समरे राजन् पार्षतेन महात्मना॥ ३२॥

राजन्! महामना धृष्टद्युम्न समरांगणमें जब आपके योद्धाओंका वध कर रहे थे, उस समय उन महामनस्वी वीरोंका आर्तक्रन्दन बड़े जोरसे सुनायी देता था॥ ३२॥

तं श्रुत्वा निनदं घोरं तावकानां महारथौ।
विन्दानुविन्दावावन्त्यौ पार्षतं प्रत्युपस्थितौ॥ ३३॥

आपके सैनिकोंका वह घोर आर्तनाद सुनकर अवन्तीके राजकुमार विन्द और अनुविन्द धृष्टद्युम्नका सामना करनेके लिये उपस्थित हुए॥ ३३॥

तौ तस्य तुरगान् हत्वा त्वरमाणौ महारथौ।
छादयामासतुरुभौ शरवर्षेण पार्षतम्॥ ३४॥

उन दोनों महारथियोंने बड़ी उतावलीके साथ धृष्टद्युम्नके घोड़ोंको मारकर उन्हें भी अपने बाणोंकी वर्षासे ढक दिया॥

अवप्लुत्याथ पाञ्चाल्यो रथात् तूर्णं महाबलः।
आरुरोह रथं तूर्णं सात्यकेस्तु महात्मनः॥ ३५॥

तब महाबली धृष्टद्युम्न तुरंत ही अपने रथसे कूदकर महामना सात्यकिके रथपर शीघ्रतापूर्वक चढ़ गये॥ ३५॥

ततो युधिष्ठिरो राजा महत्या सेनया वृतः।
आवन्त्यौ समरे क्रुद्धावभ्ययात् स परंतपौ॥ ३६॥

तदनन्तर विशाल सेनासे घिरे हुए राजा युधिष्ठिरने शत्रुओंको तपानेवाले और क्रोधमें भरे हुए विन्द-अनुविन्दपर आक्रमण किया॥ ३६॥

तथैव तव पुत्रोऽपि सर्वोद्योगेन मारिष।
विन्दानुविन्दौ समरे परिवार्यावतस्थिवान्॥ ३७॥

आर्य! इसी प्रकार आपका पुत्र दुर्योधन भी सम्पूर्ण उद्योगसे समरभूमिमें विन्द और अनुविन्दकी रक्षाके लिये उन्हें सब ओरसे घेरकर खड़ा हो गया॥ ३७॥

अर्जुनश्चापि संक्रुद्धः क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभः।
अयोधयत संग्रामे वज्रपाणिरिवासुरान्॥ ३८॥

क्षत्रियशिरोमणि अर्जुन भी अत्यन्त कुपित होकर क्षत्रियोंके साथ संग्रामभूमिमें उसी प्रकार युद्ध करने लगे, जैसे वज्रधारी इन्द्र असुरोंके साथ करते हैं॥ ३८॥

द्रोणस्तु समरे क्रुद्धः पुत्रस्य प्रियकृत् तव।
व्यधमत् सर्वपञ्चालांस्तूलराशिमिवानलः॥ ३९॥

आपके पुत्रका प्रिय करनेवाले द्रोणाचार्य भी युद्धमें कुपित होकर समस्त पांचालोंका विनाश करने लगे, मानो आग रूईके ढेरको जला रही हो॥ ३९॥

दुर्योधनपुरोगास्तु पुत्रास्तव विशाम्पते।
परिवार्य रणे भीष्मं युयुधुः पाण्डवैः सह॥ ४०॥

प्रजानाथ! आपके दुर्योधन आदि पुत्र रणक्षेत्रमें भीष्मको घेरकर पाण्डवोंके साथ युद्ध करने लगे॥ ४०॥

ततो दुर्योधनो राजा लोहितायति भास्करे।
अब्रवीत् तावकान् सर्वांस्त्वरध्वमिति भारत॥ ४१॥

भारत! तदनन्तर जब सूर्यदेवपर संध्याकी लाली छाने लगी, तब राजा दुर्योधनने आपके सभी योद्धाओंसे कहा—जल्दी करो॥ ४१॥

युध्यतां तु तथा तेषां कुर्वतां कर्म दुष्करम्।
अस्तं गिरिमथारूढे अप्रकाशति भास्करे॥ ४२॥
प्रावर्तत नदी घोरा शोणितौघतरङ्गिणी।
गोमायुगणसंकीर्णा क्षणेन क्षणदामुखे॥ ४३॥

फिर तो वे सब योद्धा वेगसे युद्ध करते हुए दुष्कर पराक्रम प्रकट करने लगे। उसी समय सूर्य अस्ताचलको चले गये और उनका प्रकाश लुप्त हो गया। इस प्रकार संध्या होते-होते क्षणभरमें रक्तके प्रवाहसे परिपूर्ण भयानक नदी बह चली और उसके तटपर गीदड़ोंकी

भीड़ जमा हो गयी॥ ४२-४३॥

शिवाभिरशिवाभिश्च रुवद्भिर्भैरवं रवम्।
घोरमायोधनं जज्ञे भूतसंघैः समाकुलम्॥ ४४॥

भैरव रव फैलानेवाली अमंगलमयी सियारिनों तथा भूतगणोंसे व्याप्त होकर वह युद्धका मैदान अत्यन्त भयानक हो गया॥ ४४॥

राक्षसाश्च पिशाचाश्च तथान्ये पिशिताशिनः।
समन्ततो व्यदृश्यन्त शतशोऽथ सहस्रशः॥ ४५॥

चारों ओर राक्षस, पिशाच तथा अन्य मांसाहारी जन्तु सैकड़ों और हजारोंकी संख्यामें दिखायी देने लगे॥ ४५॥

अर्जुनोऽथ सुशर्मादीन् राज्ञस्तान् सपदानुगान्।
विजित्य पृतनामध्ये ययौ स्वशिबिरं प्रति॥ ४६॥

तदनन्तर अर्जुन राजा दुर्योधनके पीछे चलनेवाले सुशर्मा आदिको सेनामें पराजित करके अपने शिविरको चले गये॥

युधिष्ठिरोऽपि कौरव्यो भ्रातृभ्यां सहितस्तथा।
ययौ स्वशिबिरं राजा निशायां सेनया वृतः॥ ४७॥

तथा सेनासे घिरे हुए कुरुकुलनन्दन राजा युधिष्ठिर भी दोनों भाई नकुल-सहदेवके साथ रातमें अपने शिविरमें पधारे॥ ४७॥

भीमसेनोऽपि राजेन्द्र दुर्योधनमुखान् रथान्।
अवजित्य ततः संख्ये ययौ स्वशिबिरं प्रति॥ ४८॥

राजेन्द्र! तब भीमसेन भी दुर्योधन आदि रथियोंको युद्धमें जीतकर अपने शिविरको लौट गये॥ ४८॥

दुर्योधनोऽपि नृपतिः परिवार्य महारणे।
भीष्मं शान्तनवं तूर्णं प्रयातः शिबिरं प्रति॥ ४९॥

राजा दुर्योधन भी महायुद्धमें शान्तनुनन्दन भीष्मको घेरकर तुरंत ही अपने शिविरको लौट गया॥ ४९॥

द्रोणो द्रौणिः कृपः शल्यः कृतवर्मा च सात्वतः।
परिवार्य चमूं सर्वां प्रययुः शिबिरं प्रति॥ ५०॥

द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, शल्य तथा यदुवंशी कृतवर्मा—ये सारी सेनाको घेरकर अपने शिविरकी ओर चल दिये॥ ५०॥

तथैव सात्यकी राजन् धृष्टद्युम्नश्च पार्षतः।
परिवार्य रणे योधान् ययतुः शिबिरं प्रति॥ ५१॥

राजन्! इसी प्रकार सात्यकि और द्रुपदकुमार धृष्टद्युम्न भी युद्धमें अपने योद्धाओंको घेरकर शिविरकी ओर प्रस्थित हुए॥ ५१॥

एवमेते महाराज तावकाः पाण्डवैः सह।
पर्यवर्तन्त सहिता निशाकाले परंतप॥ ५२॥

शत्रुओंको संताप देनेवाले महाराज! इस प्रकार रातके समय आपके योद्धा पाण्डवोंके साथ अपने-अपने शिविरमें लौट आये॥ ५२॥

ततः स्वशिबिरं गत्वा पाण्डवाः कुरवस्तथा।
न्यवसन्त महाराज पूजयन्तः परस्परम्॥ ५३॥

महाराज! तत्पश्चात् पाण्डव तथा कौरव अपने शिविरमें जाकर आपसमें एक-दूसरेकी प्रशंसा करते हुए विश्राम करने लगे॥ ५३॥

रक्षां कृत्वा ततः शूरान्यस्य गुल्मान् यथाविधि।
अपनीय च शल्यानि स्नात्वा च विविधैर्जलैः॥ ५४॥
कृतस्वस्त्ययनाः सर्वे संस्तूयन्तश्च वन्दिभिः।
गीतवादित्रशब्देन व्यक्रीडन्त यशस्विनः॥ ५५॥

तदनन्तर उभय पक्षके शूरवीरोंने सब ओर सैनिक गुल्मोंको* नियुक्त करके विधिपूर्वक अपने-अपने शिविरोंकी रक्षाकी व्यवस्था की। फिर अपने शरीरसे बाणोंको निकालकर भाँति-भाँतिके जलसे स्नान करके स्वस्तिवाचन करानेके अनन्तर बन्दीजनोंके मुखसे अपनी स्तुति सुनते हुए वे सभी यशस्वी वीर गीत और वाद्योंके शब्दोंसे क्रीड़ा-विनोद करने लगे॥ ५४-५५॥

मुहूर्तादिव तत् सर्वमभवत् स्वर्गसंनिभम्।
न हि युद्धकथां कांचित् तत्राकुर्वन् महारथाः॥ ५६॥

दो घड़ीतक वहाँका सब कुछ स्वर्गसदृश जान पड़ा। उस समय वहाँ महारथियोंने युद्धकी कोई बातचीत नहीं की॥ ५६॥

ते प्रसुप्ते बले तत्र परिश्रान्तजने नृप।
हस्त्यश्वबहुले रात्रौ प्रेक्षणीये बभूवतुः॥ ५७॥

नरेश्वर! जिनमें हाथी और घोड़ोंकी अधिकता थी, उन दोनों पक्षकी सेनाओंमें सब लोग परिश्रमसे चूर-चूर हो रहे थे। रातके समय जब दोनों सेनाएँ सो गयीं, उस समय वे देखनेयोग्य हो गयीं॥ ५७॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि सप्तमदिवसयुद्धावहारे षडशीतितमोऽध्यायः॥ ८६॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें सातवें दिनके युद्धका विरामविषयक छियासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८६॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका १ $\frac{१}{२}$ श्लोक मिलाकर कुल ५८ $\frac{१}{२}$ श्लोक हैं।]

* गुल्मका अर्थ है—प्रधान पुरुषोंसे युक्त रक्षकदल, जिसमें ९ हाथी, ९ रथ, २७ घुड़सवार और ४५ पैदल सैनिक होते हैं।

सप्ताशीतितमोऽध्यायः

आठवें दिन व्यूहबद्ध कौरव-पाण्डव-सेनाओंकी रणयात्रा और उनका परस्पर घमासान युद्ध

संजय उवाच

परिणाम्य निशां तां तु सुखं प्राप्ता जनेश्वराः।
कुरवः पाण्डवाश्चैव पुनर्युद्धाय निर्ययुः॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! नरेश्वर कौरव और पाण्डव निद्रासुखका अनुभव करके वह रात बिताकर पुनः युद्धके लिये निकले॥ १॥

ततः शब्दो महानासीत् सैन्ययोरुभयोर्नृप।
निर्गच्छमानयोः संख्ये सागरप्रतिमो महान्॥ २॥

महाराज! वे दोनों सेनाएँ जब युद्धके लिये शिविरसे बाहर निकलने लगीं, उस समय संग्रामभूमिमें महासागरकी गर्जनाके समान महान् घोष होने लगा॥ २॥

ततो दुर्योधनो राजा चित्रसेनो विविंशतिः।
भीष्मश्च रथिनां श्रेष्ठो भारद्वाजश्च वै नृप॥ ३॥
एकीभूताः सुसंयत्ताः कौरवाणां महाचमूम्।
व्यूहाय विदधू राजन् पाण्डवान् प्रति दंशिताः॥ ४॥

नरेश्वर! तत्पश्चात् राजा दुर्योधन, चित्रसेन, विविंशति, रथियोंमें श्रेष्ठ भीष्म तथा द्रोणाचार्य—ये सब संगठित एवं सावधान होकर पाण्डवोंसे युद्ध करनेके लिये कवच बाँधकर कौरवोंके विशाल सैन्यकी व्यूह-रचना करने लगे॥ ३-४॥

भीष्मः कृत्वा महाव्यूहं पिता तव विशाम्पते।
सागरप्रतिमं घोरं वाहनोर्मितरङ्गिणम्॥ ५॥

प्रजानाथ! आपके ताऊ भीष्मने समुद्रके समान विशाल एवं भयंकर महाव्यूहका निर्माण किया, जिसमें हाथी, घोड़े आदि वाहन उत्ताल तरंगोंके समान प्रतीत होते थे॥ ५॥

अग्रतः सर्वसैन्यानां भीष्मः शान्तनवो ययौ।
मालवैर्दाक्षिणात्यैश्च आवन्त्यैश्च समन्वितः॥ ६॥

शान्तनुनन्दन भीष्म सम्पूर्ण सेनाओंके आगे-आगे चले। उनके साथ मालवा, दक्षिण प्रान्त तथा अवन्तीदेशके योद्धा थे॥ ६॥

ततोऽनन्तरमेवासीद् भारद्वाजः प्रतापवान्।
पुलिन्दैः पारदैश्चैव तथा क्षुद्रकमालवैः॥ ७॥

उनके पीछे पुलिन्द, पारद, क्षुद्रक तथा मालवदेशीय वीरोंके साथ प्रतापी द्रोणाचार्य थे॥ ७॥

द्रोणादनन्तरं यत्तो भगदत्तः प्रतापवान्।
मगधैश्च कलिङ्गैश्च पिशाचैश्च विशाम्पते॥ ८॥

प्रजेश्वर! द्रोणके पीछे मागध, कलिंग और पिशाच सैनिकोंके साथ प्रतापी राजा भगदत्त जा रहे थे, जो बड़े सावधान थे॥ ८॥

प्राग्ज्योतिषादनु नृपः कौसल्योऽथ बृहद्बलः।
मेकलैः कुरुविन्दैश्च त्रैपुरैश्च समन्वितः॥ ९॥

प्राग्ज्योतिषपुरनरेशके पीछे कोसलदेशके राजा बृहद्बल थे, जो मेकल, कुरुविन्द तथा त्रिपुराके सैनिकोंके साथ थे॥ ९॥

बृहद्बलात् ततः शूरस्त्रिगर्तः प्रस्थलाधिपः।
काम्बोजैर्बहुभिः सार्धं यवनैश्च सहस्रशः॥ १०॥

बृहद्बलके बाद शूरवीर त्रिगर्त थे, जो प्रस्थलाके अधिपति थे। उनके साथ बहुत-से काम्बोज और सहस्रों यवन योद्धा थे॥ १०॥

द्रौणिस्तु रभसः शूरस्त्रैगर्तादनु भारत।
प्रययौ सिंहनादेन नादयानो धरातलम्॥ ११॥

भारत! त्रिगर्तके पीछे वेगशाली वीर अश्वत्थामा चल रहे थे, जो अपने सिंहनादसे समस्त धरातलको निनादित कर रहे थे॥ ११॥

तथा सर्वेण सैन्येन राजा दुर्योधनस्तदा।
द्रौणेरनन्तरं प्रायात् सौदर्यैः परिवारितः॥ १२॥

अश्वत्थामाके पीछे सम्पूर्ण सेना तथा भाइयोंसे घिरा हुआ राजा दुर्योधन चल रहा था॥ १२॥

दुर्योधनादनु ततः कृपः शारद्वतो ययौ।
एवमेष महाव्यूहः प्रययौ सागरोपमः॥ १३॥

दुर्योधनके पीछे शरद्वान्के पुत्र कृपाचार्य चल रहे थे। इस प्रकार यह सागरके समान महाव्यूह युद्धके लिये प्रस्थान कर रहा था॥ १३॥

रेजुस्तत्र पताकाश्च श्वेतच्छत्राणि वा विभो।
अंगदान्यत्र चित्राणि महार्हाणि धनूंषि च॥ १४॥

प्रभो! उस सेनामें बहुत-सी पताकाएँ और श्वेतच्छत्र शोभा पा रहे थे। विचित्र रंगके बहुमूल्य बाजूबन्द और धनुष सुशोभित होते थे॥ १४॥

तं तु दृष्ट्वा महाव्यूहं तावकानां महारथः।
युधिष्ठिरोऽब्रवीत् तूर्णं पार्षतं पृतनापतिम्॥ १५॥

राजन्! आपके सैनिकोंका वह महाव्यूह देखकर महारथी युधिष्ठिरने तुरंत ही सेनापति धृष्टद्युम्नसे कहा— ॥ १५॥

पश्य व्यूहं महेष्वास निर्मितं सागरोपमम्।
प्रतिव्यूहं त्वमपि हि कुरु पार्षत सत्वरम्॥ १६॥

'महाधनुर्धर द्रुपदकुमार! देखो, शत्रुसेनाका व्यूह सागरके समान बनाया गया है। तुम भी उसके मुकाबिलेमें शीघ्र ही अपनी सेनाका व्यूह बना लो'॥ १६॥

ततः स पार्षतः क्रूरो व्यूहं चक्रे सुदारुणम्।
शृङ्गाटकं महाराज परव्यूहविनाशनम्॥ १७॥

महाराज! तदनन्तर क्रूर स्वभाववाले धृष्टद्युम्नने अत्यन्त दारुण शृंगाटक (सिंघाड़े)-के आकारवाला व्यूह बनाया, जो शत्रुके व्यूहका विनाश करनेवाला था॥ १७॥

शृङ्गाभ्यां भीमसेनश्च सात्यकिश्च महारथः।
रथैरनेकसाहस्रैस्तथा हयपदातिभिः॥ १८॥

उसके दोनों शृंगोंके स्थानमें भीमसेन और महारथी सात्यकि कई हजार रथियों, घुड़सवारों और पैदलोंके साथ मौजूद थे॥ १८॥

ताभ्यां बभौ नरश्रेष्ठः श्वेताश्वः कृष्णसारथिः।
मध्ये युधिष्ठिरो राजा माद्रीपुत्रौ च पाण्डवौ॥ १९॥

भीमसेन और सात्यकिके बीचमें यानी उस व्यूहके अग्रभागमें नरश्रेष्ठ श्वेतवाहन अर्जुन खड़े हुए, जिनके सारथि साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण थे। मध्य-देशमें राजा युधिष्ठिर तथा माद्रीकुमार पाण्डुनन्दन नकुल-सहदेव थे॥ १९॥

अथोत्तरे महेष्वासाः सहसैन्या नराधिपाः।
व्यूहं तं पूरयामासुर्व्यूहशास्त्रविशारदाः॥ २०॥

इनके बाद सेनासहित अनेक महाधनुर्धर नरेश खड़े थे, जो व्यूहशास्त्रके पूर्ण विद्वान् थे। उन्होंने उस व्यूहको प्रत्येक अंग और उपांगसे परिपूर्ण किया था॥ २०॥

अभिमन्युस्ततः पश्चाद् विराटश्च महारथः।
द्रौपदेयाश्च संहृष्टा राक्षसश्च घटोत्कचः॥ २१॥

उस व्यूहके पिछले भागमें अभिमन्यु, महारथी विराट, हर्षमें भरे हुए द्रौपदीके पाँचों पुत्र तथा राक्षस घटोत्कच विद्यमान थे॥ २१॥

एवमेतं महाव्यूहं व्यूह्य भारत पाण्डवाः।
अतिष्ठन् समरे शूरा योद्धुकामा जयैषिणः॥ २२॥

भरतनन्दन! इस प्रकार अपनी सेनाके इस महाव्यूहका निर्माण करके युद्धकी कामना और विजयकी अभिलाषा रखनेवाले शूरवीर पाण्डव समरभूमिमें खड़े थे॥ २२॥

भेरीशब्दैश्च विमलैर्विमिश्रैः शङ्खनिःस्वनैः।
क्ष्वेडितास्फोटितोत्क्रुष्टैर्नादिताः सर्वतो दिशः॥ २३॥

उस समय रणभेरियाँ बज रही थीं। उनके निर्मल शब्दोंसे मिली हुई शंख-ध्वनियों तथा गर्जनसे, ताल ठोंकने और उच्चस्वरसे पुकारने आदिके शब्दोंसे सम्पूर्ण दिशाएँ गूँज उठी थीं॥ २३॥

ततः शूराः समासाद्य समरे ते परस्परम्।
नेत्रैरनिमिषैः राजन्नवैक्षन्त परस्परम्॥ २४॥

राजन्! तदनन्तर समस्त शूरवीर समरभूमिमें पहुँचकर परस्पर एक-दूसरेको एकटक नेत्रोंसे देखने लगे॥ २४॥

नामभिस्ते मनुष्येन्द्र पूर्वं योधाः परस्परम्।
युद्धाय समवर्तन्त समाहूयेतरेतरम्॥ २५॥

नरेन्द्र! पहले उन योद्धाओंने एक-दूसरेके नाम ले-लेकर पुकार-पुकारकर युद्धके लिये परस्पर आक्रमण किया॥ २५॥

ततः प्रववृते युद्धं घोररूपं भयावहम्।
तावकानां परेषां च निघ्नतामितरेतरम्॥ २६॥

तत्पश्चात् आपके और पाण्डवोंके सैनिक एक-दूसरेपर अस्त्रोंद्वारा आघात-प्रत्याघात करने लगे। उस समय उनमें अत्यन्त भयंकर घोर युद्ध होने लगा॥ २६॥

नाराचा निशिताः संख्ये सम्पतन्ति स्म भारत।
व्यात्तानना भयकरा उरगा इव संघशः॥ २७॥

भारत! उस समय युद्धमें तीखे नाराच नामक बाण इस प्रकार पड़ते थे, मानो मुख फैलाये हुए भयंकर नाग झुंड-के-झुंड गिर रहे हों॥ २७॥

निष्पेतुर्विमलाः शक्त्यस्तैलधौताः सुतेजनाः।
अम्बुदेभ्यो यथा राजन् भ्राजमानाः शतह्रदाः॥ २८॥

राजन्! तेलकी धोयी चमचमाती हुई तीखी शक्तियाँ बादलोंसे गिरनेवाली कान्तिमती बिजलियोंके समान सब ओर गिर रही थीं॥ २८॥

गदाश्च विमलैः पट्टैः पिनद्धाः स्वर्णभूषितैः।
पतन्त्यस्तत्र दृश्यन्ते गिरिशृङ्गोपमाः शुभाः॥ २९॥

सुवर्णभूषित निर्मल लोहपत्रसे जड़ी हुई सुन्दर गदाएँ पर्वत-शिखरोंके समान वहाँ गिरती दिखायी देती थीं॥ २९॥

निस्त्रिंशाश्च व्यदृश्यन्त विमलाम्बरसंनिभाः।
आर्षभाणि विचित्राणि शतचन्द्राणि भारत॥ ३०॥
अशोभन्त रणे राजन् पात्यमानानि सर्वशः।

भारत! स्वच्छ आकाशके सदृश खड्ग और सौ चन्द्राकार चिह्नोंसे विभूषित ऋषभचर्मकी विचित्र ढालें दृष्टिगोचर हो रही थीं। राजन्! रणभूमिमें गिरायी जाती हुई वे सब-की-सब तलवारें और ढालें बड़ी शोभा पा रही थीं॥ ३०½॥

तेऽन्योन्यं समरे सेने युध्यमाने नराधिप॥ ३१॥
अशोभेतां यथा देवदैत्यसेने समुद्यते।

नरेश्वर! दोनों पक्षोंकी सेनाएँ समरभूमिमें एक-दूसरीसे जूझ रही थीं। उस समय परस्पर युद्धके लिये उद्यत हुई देवसेना और दैत्यसेनाके समान उनकी शोभा हो रही थी॥ ३१ १/२ ॥

अभ्यद्रवन्त समरे तेऽन्योन्यं वै समन्ततः॥ ३२॥

वे कौरव-पाण्डव सैनिक सब ओर समरांगणमें एक-दूसरेपर धावा करने लगे॥ ३२॥

रथास्तु रथिभिस्तूर्णं प्रेषिताः परमाहवे।
युगैर्युगानि संश्लिष्य युयुधुः पार्थिवर्षभाः॥ ३३॥

रथी अपने रथोंको तुरंत ही उस महायुद्धमें दौड़ाकर ले आये। श्रेष्ठ नरेश रथके जुओंसे जुए भिड़ाकर युद्ध करने लगे॥ ३३॥

दन्तिनां युध्यमानानां संघर्षात् पावकोऽभवत्।
दन्तेषु भरतश्रेष्ठ सधूमः सर्वतोदिशम्॥ ३४॥

भरतश्रेष्ठ! सम्पूर्ण दिशाओंमें परस्पर जूझते हुए दन्तार हाथियोंके दाँतोंके आपसमें टकरानेसे उनमें धूमसहित अग्नि प्रकट हो जाती थी॥ ३४॥

प्रासैरभिहताः केचिद् गजयोधाः समन्ततः।
पतमानाः स्म दृश्यन्ते गिरिशृङ्गान्नगा इव॥ ३५॥

कितने ही हाथीसवार प्रासोंसे घायल होकर पर्वतशिखरसे गिरनेवाले वृक्षोंके समान सब ओर हाथियोंकी पीठोंसे गिरते दिखायी देते थे॥ ३५॥

पादाताश्चाप्यदृश्यन्त निघ्नन्तोऽथ परस्परम्।
चित्ररूपधराः शूरा नखरप्रासयोधिनः॥ ३६॥

बघनखों एवं प्रासोंद्वारा युद्ध करनेवाले शूरवीर पैदल सैनिक एक-दूसरेपर प्रहार करते हुए विचित्र रूपधारी दिखायी देते थे॥ ३६॥

अन्योन्यं ते समासाद्य कुरुपाण्डवसैनिकाः।
अस्त्रैर्नानाविधैर्घोरै रणे निन्युर्यमक्षयम्॥ ३७॥

इस प्रकार कौरव तथा पाण्डव-सैनिक रणक्षेत्रमें एक-दूसरेसे भिड़कर नाना प्रकारके भयंकर अस्त्रोंद्वारा विपक्षियोंको यमलोक पहुँचाने लगे॥ ३७॥

ततः शान्तनवो भीष्मो रथघोषेण नादयन्।
अभ्यागमद् रणे पार्थान् धनुःशब्देन मोहयन्॥ ३८॥

इतनेहीमें शान्तनुनन्दन भीष्म अपने रथकी घर-घराहटसे सम्पूर्ण दिशाओंको गुँजाते और धनुषकी टंकारसे लोगोंको मूर्च्छित करते हुए समरभूमिमें पाण्डव-सैनिकोंपर चढ़ आये॥ ३८॥

पाण्डवानां रथाश्चापि नदन्तो भैरवं स्वनम्।
अभ्यद्रवन्त संयत्ता धृष्टद्युम्नपुरोगमाः॥ ३९॥

उस समय धृष्टद्युम्न आदि पाण्डव महारथी भी भयंकर नाद करते हुए युद्धके लिये संनद्ध होकर उनका सामना करनेको दौड़े॥ ३९॥

ततः प्रववृते युद्धं तव तेषां च भारत।
नराश्वरथनागानां व्यतिषक्तं परस्परम्॥ ४०॥

भरतनन्दन! फिर तो आपके और पाण्डवोंके योद्धाओंमें परस्पर घमासान युद्ध छिड़ गया। पैदल, घुड़सवार, रथी और हाथी एक-दूसरेसे गुँथ गये॥ ४०॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि अष्टमदिवसयुद्धारम्भे सप्ताशीतितमोऽध्यायः॥ ८७॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें आठवें दिनके युद्धसे सम्बन्ध रखनेवाला सतासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८७॥

अष्टाशीतितमोऽध्यायः

भीष्मका पराक्रम, भीमसेनके द्वारा धृतराष्ट्रके आठ पुत्रोंका वध तथा दुर्योधन और भीष्मकी युद्धविषयक बातचीत

संजय उवाच

भीष्मं तु समरे क्रुद्धं प्रतपन्तं समन्ततः।
न शेकुः पाण्डवा द्रष्टुं तपन्तमिव भास्करम्॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! जैसे तपते हुए सूर्यकी ओर देखना कठिन होता है, उसी प्रकार जब भीष्म उस समरमें कुपित हो सब ओर अपना प्रताप प्रकट करने लगे, उस समय पाण्डवसैनिक उनकी ओर देख न सके॥ १॥

ततः सर्वाणि सैन्यानि धर्मपुत्रस्य शासनात्।
अभ्यद्रवन्त गाङ्गेयं मर्दयन्तं शितैः शरैः॥ २॥

तदनन्तर धर्मपुत्र युधिष्ठिरकी आज्ञासे समस्त सेनाएँ गंगानन्दन भीष्मपर टूट पड़ीं, जो अपने तीखे बाणोंसे पाण्डव-सेनाका मर्दन कर रहे थे॥ २॥

स तु भीष्मो रणश्लाघी सोमकान् सहसृञ्जयान्।
पञ्चालांश्च महेष्वासान् पातयामास सायकैः॥ ३॥

युद्धकी स्पृहा रखनेवाले भीष्म अपने बाणोंके द्वारा

सोमक, सृंजय और पांचाल महाधनुर्धरोंको रणभूमिमें गिराने लगे॥ ३॥

ते वध्यमाना भीष्मेण पञ्चालाः सोमकैः सह।
भीष्ममेवाभ्ययुस्तूर्णं त्यक्त्वा मृत्युकृतं भयम्॥ ४॥

भीष्मके द्वारा घायल किये जाते हुए वे सोमक (सृंजय) और पांचाल भी मृत्युका भय छोड़कर तुरंत भीष्मपर ही टूट पड़े॥ ४॥

स तेषां रथिनां वीरो भीष्मः शान्तनवो युधि।
चिच्छेद सहसा राजन् बाहूनथ शिरांसि च॥ ५॥

राजन्! वीर शान्तनुनन्दन भीष्म उस युद्धके मैदानमें सहसा उन रथियोंकी भुजाओं और मस्तकोंको काट-काटकर गिराने लगे॥ ५॥

विरथान् रथिनश्चक्रे पिता देवव्रतस्तव।
पतितान्युत्तमाङ्गानि हयेभ्यो हयसादिनाम्॥ ६॥

आपके ताऊ देवव्रतने बहुत-से रथियोंको रथहीन कर दिया। घोड़ोंसे घुड़सवारोंके मस्तक कट-कटकर गिरने लगे॥ ६॥

निर्मनुष्यांश्च मातङ्गान् शयानान् पर्वतोपमान्।
अपश्याम महाराज भीष्मास्त्रेण प्रमोहितान्॥ ७॥

महाराज! हमने देखा, भीष्मके अस्त्रसे मूर्च्छित हो बहुत-से पर्वताकार गजराज रणभूमिमें पड़े हैं और उनके पास कोई मनुष्य नहीं है॥ ७॥

न तत्रासीत् पुमान् कश्चित् पाण्डवानां विशाम्पते।
अन्यत्र रथिनां श्रेष्ठाद् भीमसेनान्महाबलात्॥ ८॥

प्रजानाथ! उस समय वहाँ रथियोंमें श्रेष्ठ महाबली भीमसेनके सिवा पाण्डवपक्षका कोई भी वीर भीष्मके सामने नहीं ठहर सका॥ ८॥

स हि भीष्मं समासाद्य ताडयामास संयुगे।
ततो निष्ठानको घोरो भीष्मभीमसमागमे॥ ९॥
बभूव सर्वसैन्यानां घोररूपो भयानकः।
तथैव पाण्डवा हृष्टाः सिंहनादमथानदन्॥ १०॥

वे ही युद्धमें भीष्मका सामना करते हुए उनपर अपने बाणोंका प्रहार कर रहे थे। भीष्म और भीमसेनमें युद्ध होते समय सम्पूर्ण सेनाओंमें भयंकर कोलाहल मच गया और पाण्डव हर्षमें भरकर जोर-जोरसे सिंहनाद करने लगे॥ ९-१०॥

ततो दुर्योधनो राजा सोदर्यैः परिवारितः।
भीष्मं जुगोप समरे वर्तमाने जनक्षये॥ ११॥

जिस समय युद्धमें वह जनसंहार हो रहा था, उसी समय राजा दुर्योधन अपने भाइयोंसे घिरा हुआ वहाँ आ पहुँचा और भीष्मकी रक्षा करने लगा॥ ११॥

भीमस्तु सारथिं हत्वा भीष्मस्य रथिनां वरः।
प्रद्रुताश्वे रथे तस्मिन् द्रवमाणे समन्ततः॥ १२॥

इसी समय रथियोंमें श्रेष्ठ भीमसेनने भीष्मके सारथिको मार डाला। फिर तो उनके घोड़े उस रथको लेकर रणभूमिमें चारों ओर दौड़ लगाने लगे॥ १२॥

(चचार युधि राजेन्द्र भीमो भीमपराक्रमः।
सुनाभस्तव पुत्रो वै भीमसेनमुपाद्रवत्॥
जघान निशितैर्बाणैर्भीमं विव्याध सप्तभिः।
भीमसेनः सुसंक्रुद्धः शरेण नतपर्वणा॥)
सुनाभस्य शरेणाशु शिरश्चिच्छेद भारत।
क्षुरप्रेण सुतीक्ष्णेन स हतो न्यपतद् भुवि॥ १३॥

राजेन्द्र! भयंकर पराक्रमी भीमसेन युद्धमें सब ओर विचरने लगे। उस समय आपके पुत्र सुनाभने भीमसेनपर धावा किया और उन्हें सात तीखे बाणोंसे बींध डाला। भारत! तब भीमसेनने भी अत्यन्त कुपित होकर झुकी हुई गाँठवाले क्षुरप्र नामक बाणसे शीघ्र ही सुनाभका सिर काट दिया। उस तीखे क्षुरप्रसे मारा जाकर वह पृथ्वीपर गिर पड़ा॥ १३॥

हते तस्मिन् महाराज तव पुत्रे महारथे।
नामृष्यन्त रणे शूराः सोदराः सप्त संयुगे॥ १४॥

महाराज! आपके उस महारथी पुत्रके मारे जानेपर उसके सात रणवीर भाई, जो वहीं मौजूद थे, भीमसेनका यह अपराध सहन न कर सके॥ १४॥

आदित्यकेतुर्बह्वाशी कुण्डधारो महोदरः।
अपराजितः पण्डितको विशालाक्षः सुदुर्जयः॥ १५॥
पाण्डवं चित्रसंनाहा विचित्रकवचध्वजाः।
अभ्यद्रवन्त संग्रामे योद्धुकामारिमर्दनाः॥ १६॥

आदित्यकेतु, बह्वाशी, कुण्डधार, महोदर, अपराजित, पण्डितक और अत्यन्त दुर्जय वीर विशालाक्ष—ये सातों शत्रुमर्दन भाई विचित्र वेशभूषासे सुसज्जित हो विचित्र कवच और ध्वज धारण किये संग्राम-भूमिमें युद्धकी इच्छासे पाण्डुपुत्र भीमसेनपर टूट पड़े॥ १५-१६॥

महोदरस्तु समरे भीमं विव्याध पत्रिभिः।
नवभिर्वज्रसंकाशैर्नमुचिं वृत्रहा यथा॥ १७॥

जैसे वृत्रविनाशक इन्द्रने नमुचि नामक दैत्यपर प्रहार किया था, उसी प्रकार महोदरने समरभूमिमें अपने वज्रसरीखे नौ बाणोंसे भीमसेनको घायल कर दिया॥ १७॥

आदित्यकेतुः सप्तत्या बह्वाशी चापि पञ्चभिः।
नवत्या कुण्डधारश्च विशालाक्षश्च पञ्चभिः॥ १८॥
अपराजितो महाराज पराजिष्णुर्महारथम्।
शरैर्बहुभिरानर्च्छद् भीमसेनं महाबलम्॥ १९॥

महाराज! आदित्यकेतुने सत्तर, बह्वाशीने पाँच, कुण्डधारने नब्बे, विशालाक्षने पाँच और अपराजितने महारथी महाबली भीमसेनको पराजित करनेके लिये उन्हें बहुत-से बाणोंद्वारा पीड़ित किया॥ १८-१९॥

रणे पण्डितकश्चैनं त्रिभिर्बाणैः समार्पयत्।
स तन्न ममृषे भीमः शत्रुभिर्वधमाहवे॥ २०॥

पण्डितकने उस युद्धमें तीन बाणोंसे भीमसेनको घायल कर दिया। तब भीम उस रणक्षेत्रमें शत्रुओंद्वारा किये हुए प्रहारको सहन न कर सके॥ २०॥

धनुः प्रपीड्य वामेन करेणामित्रकर्शनः।
शिरश्चिच्छेद समरे शरेणानतपर्वणा॥ २१॥
अपराजितस्य सुनसं तव पुत्रस्य संयुगे।

उन शत्रुसूदन वीरने बायें हाथसे धनुषको अच्छी तरह दबाकर झुकी हुई गाँठवाले बाणसे समरभूमिमें आपके पुत्र अपराजितका सुन्दर नासिकासे युक्त मस्तक काट डाला॥ २१ १/२॥

पराजितस्य भीमेन निपपात शिरो महीम्॥ २२॥
अथापरेण भल्लेन कुण्डधारं महारथम्।
प्राहिणोन्मृत्युलोकाय सर्वलोकस्य पश्यतः॥ २३॥

भीमसेनसे पराजित हुए अपराजितका मस्तक धरतीपर जा गिरा। तत्पश्चात् भीमसेनने एक-दूसरे भल्लके द्वारा सब लोगोंके देखते-देखते महारथी कुण्डधारको यमराजके लोकमें भेज दिया॥ २२-२३॥

ततः पुनरमेयात्मा प्रसंधाय शिलीमुखम्।
प्रेषयामास समरे पण्डितं प्रति भारत॥ २४॥

भरतनन्दन! तब अमेय आत्मबलसे सम्पन्न भीमने समरमें पुनः एक बाणका संधान करके उसे पण्डितककी ओर चलाया॥ २४॥

स शरः पण्डितं हत्वा विवेश धरणीतलम्।
यथा नरं निहत्याशु भुजगः कालचोदितः॥ २५॥

जैसे कालप्रेरित सर्प किसी मनुष्यको शीघ्र ही डँसकर लापता हो जाता है, उसी प्रकार वह बाण पण्डितककी हत्या करके धरतीमें समा गया॥ २५॥

विशालाक्षशिरश्छित्त्वा पातयामास भूतले।
त्रिभिः शरैरदीनात्मा स्मरन् क्लेशं पुरातनम्॥ २६॥

उसके बाद उदार हृदयवाले भीमने अपने पूर्व-क्लेशोंका स्मरण करके तीन बाणोंद्वारा विशालाक्षके मस्तकको काटकर धरतीपर गिरा दिया॥ २६॥

महोदरं महेष्वासं नाराचेन स्तनान्तरे।
विव्याध समरे राजन् स हतो न्यपतद् भुवि॥ २७॥

राजन्! तत्पश्चात् उन्होंने महाधनुर्धर महोदरकी छातीमें एक नाराचसे प्रहार किया। उससे मारा जाकर वह युद्धमें धरतीपर गिर पड़ा॥ २७॥

आदित्यकेतोः केतुं च छित्त्वा बाणेन संयुगे।
भल्लेन भृशतीक्ष्णेन शिरश्चिच्छेद भारत॥ २८॥

भारत! तदनन्तर भीमने रणक्षेत्रमें एक बाणसे आदित्यकेतुकी ध्वजा काटकर अत्यन्त तीखे भल्लके द्वारा उसका मस्तक भी काट दिया॥ २८॥

बह्वाशिनं ततो भीमः शरेणानतपर्वणा।
प्रेषयामास संक्रुद्धो यमस्य सदनं प्रति॥ २९॥

इसके बाद क्रोधमें भरे हुए भीमसेनने झुकी हुई गाँठवाले बाणसे मारकर बह्वाशीको यमलोक भेज दिया॥ २९॥

प्रदुद्रुवुस्ततस्तेऽन्ये पुत्रास्तव विशाम्पते।
मन्यमाना हि तत् सत्यं सभायां तस्य भाषितम्॥ ३०॥

प्रजानाथ! तब आपके दूसरे पुत्र भीमसेनके द्वारा सभामें की हुई उस प्रतिज्ञाको सत्य मानकर वहाँसे भाग खड़े हुए॥ ३०॥

ततो दुर्योधनो राजा भ्रातृव्यसनकर्शितः।
अब्रवीत् तावकान् योधान् भीमोऽयं युधि वध्यताम्॥ ३१॥

भाइयोंके मरनेसे राजा दुर्योधनको बड़ा कष्ट हुआ। अतः उसने आपके समस्त सैनिकोंको आज्ञा दी कि इस भीमसेनको युद्धमें मार डालो॥ ३१॥

एवमेते महेष्वासाः पुत्रास्तव विशाम्पते।
भ्रातॄन् संदृश्य निहतान् प्रास्मरंस्ते हि तद् वचः॥ ३२॥
यदुक्तवान् महाप्राज्ञः क्षत्ता हितमनामयम्।
तदिदं समनुप्राप्तं वचनं दिव्यदर्शिनः॥ ३३॥

प्रजानाथ! इस प्रकार ये आपके महाधनुर्धर पुत्र अपने भाइयोंको मारा गया देख उन बातोंकी याद करने लगे, जिन्हें महाज्ञानी विदुरने कहा था। वे सोचने लगे—दिव्यदर्शी विदुरने हमारे कुशल एवं हितके लिये जो बात कही थी, वह आज सिरपर आ गयी॥ ३२-३३॥

लोभमोहसमाविष्टः पुत्रप्रीत्या जनाधिप।
न बुध्यसे पुरा यत् तत् तथ्यमुक्तं वचो महत्॥ ३४॥

जनेश्वर! आपने अपने पुत्रोंके प्रति प्रेमके कारण लोभ और मोहके वशीभूत हो, विदुरने पहले जो सत्य एवं हितकी महत्त्वपूर्ण बात बतायी थी, उसपर ध्यान नहीं दिया॥ ३४॥

तथैव च वधार्थाय पुत्राणां पाण्डवो बली।
नूनं जातो महाबाहुर्यथा हन्ति स्म कौरवान्॥ ३५॥

उनके कथनानुसार ही बलवान् पाण्डुपुत्र महाबाहु भीम आपके पुत्रोंके वधका कारण बनते जा रहे हैं और उसी प्रकार वे कौरवोंका सर्वनाश कर रहे हैं॥ ३५॥

ततो दुर्योधनो राजा भीष्ममासाद्य संयुगे।
दुःखेन महताऽऽविष्टो विललाप सुदुःखितः॥ ३६॥

उस समय राजा दुर्योधन युद्धभूमिमें भीष्मके पास जाकर महान् दुःखसे व्याप्त एवं अत्यन्त शोकमग्न होकर विलाप करने लगा—॥ ३६॥

निहता भ्रातरः शूरा भीमसेनेन मे युधि।
यतमानास्तथान्येऽपि हन्यन्ते सर्वसैनिकाः॥ ३७॥

'पितामह! भीमसेनने युद्धमें मेरे शूरवीर बन्धुओंको मार डाला और दूसरे भी समस्त सैनिक विजयके लिये पूर्ण प्रयत्न करते हुए भी असफल हो उनके हाथसे मारे जा रहे हैं॥ ३७॥

भवांश्च मध्यस्थतया नित्यमस्मानुपेक्षते।
सोऽहं कुपथमारूढः पश्य दैवमिदं मम॥ ३८॥

'आप मध्यस्थ बने रहनेके कारण सदा हम-लोगोंकी उपेक्षा करते हैं। मैं बड़े बुरे मार्गपर चढ़ आया। मेरे इस दुर्भाग्यको देखिये'॥ ३८॥

एतच्छ्रुत्वा वचः क्रूरं पिता देवव्रतस्तव।
दुर्योधनमिदं वाक्यमब्रवीत् साश्रुलोचनः॥ ३९॥

यह क्रूरतापूर्ण वचन सुनकर आपके ताऊ भीष्म अपने नेत्रोंसे आँसू बहाते हुए वहाँ दुर्योधनसे इस प्रकार बोले—॥ ३९॥

उक्तमेतन्मया पूर्वं द्रोणेन विदुरेण च।
गान्धार्या च यशस्विन्या तत् त्वं तात न बुद्धवान्॥ ४०॥

'तात! मैंने, द्रोणाचार्यने, विदुरने तथा यशस्विनी गान्धारी देवीने भी पहले ही यह सब बात कह दी थी, परंतु तुमने इसपर ध्यान नहीं दिया॥ ४०॥

समयश्च मया पूर्वं कृतो वै शत्रुकर्शन।
नाहं युधि नियोक्तव्यो नाप्याचार्यः कथंचन॥ ४१॥

'शत्रुसूदन! मैंने पहले ही यह निश्चय प्रकट कर दिया था कि तुम्हें मुझे या द्रोणाचार्यको युद्धमें किसी प्रकार भी नहीं लगाना चाहिये (क्योंकि हमलोगोंका कौरवों तथा पाण्डवोंके प्रति समान स्नेह है)॥ ४१॥

यं यं हि धार्तराष्ट्राणां भीमो द्रक्ष्यति संयुगे।
हनिष्यति रणे नित्यं सत्यमेतद् ब्रवीमि ते॥ ४२॥

'मैं तुमसे यह सत्य कहता हूँ कि भीमसेन धृतराष्ट्रके पुत्रोंमेंसे जिस-जिसको युद्धमें (अपने सामने आया हुआ) देख लेंगे, उसे प्रतिदिनके संग्राममें अवश्य मार डालेंगे॥ ४२॥

स त्वं राजन् स्थिरो भूत्वा रणे कृत्वा दृढां मतिम्।
योधयस्व रणे पार्थान् स्वर्गं कृत्वा परायणम्॥ ४३॥

'अतः राजन्! तुम स्थिर होकर युद्धके विषयमें अपना दृढ़ निश्चय बना लो और स्वर्गको ही अन्तिम आश्रय मानकर रणभूमिमें पाण्डवोंके साथ युद्ध करो॥

न शक्याः पाण्डवा जेतुं सेन्द्रैरपि सुरासुरैः।
तस्माद् युद्धे स्थिरां कृत्वा मतिं युद्धयस्व भारत॥ ४४॥

'भारत! इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता और असुर मिलकर भी पाण्डवोंको जीत नहीं सकते। अतः युद्धके लिये पहले अपनी बुद्धिको स्थिर कर लो। उसके बाद युद्ध करो'॥ ४४॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि सुनाभादिधृतराष्ट्रपुत्रवधे अष्टाशीतितमोऽध्यायः॥ ८८॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें सुनाभ आदि धृतराष्ट्रके पुत्रोंका वधविषयक अट्ठासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८८॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठके २ श्लोक मिलाकर कुल ४६ श्लोक हैं]

एकोननवतितमोऽध्यायः

कौरव-पाण्डव-सेनाका घमासान युद्ध और भयानक जनसंहार

धृतराष्ट्र उवाच

दृष्ट्वा मे निहतान् पुत्रान् बहूनेकेन संजय।
भीष्मो द्रोणः कृपश्चैव किमकुर्वत संयुगे॥ १॥

धृतराष्ट्र बोले—संजय! एकमात्र भीमसेनके द्वारा युद्धमें मेरे बहुत-से पुत्रोंको मारा गया देख भीष्म, द्रोण और कृपाचार्यने क्या किया?॥ १॥

अहन्यहनि मे पुत्राः क्षयं गच्छन्ति संजय।
मन्येऽहं सर्वथा सूत दैवेनोपहता भृशम्॥ २॥

मेरे पुत्र प्रतिदिन नष्ट होते जा रहे हैं। सूत! मेरा तो ऐसा विश्वास है कि हमलोग सर्वथा अत्यन्त

दुर्भाग्यके मारे हुए हैं॥ २॥

यत्र मे तनयाः सर्वे जीयन्ते न जयन्त्युत।
यत्र भीष्मस्य द्रोणस्य कृपस्य च महात्मनः॥ ३॥
सौमदत्तेश्च वीरस्य भगदत्तस्य चोभयोः।
अश्वत्थाम्नस्तथा तात शूराणामनिवर्तिनाम्॥ ४॥
अन्येषां चैव शूराणां मध्यगास्तनया मम।
यदहन्यन्त संग्रामे किमन्यद् भागधेयतः॥ ५॥

दुर्भाग्यके अधीन होनेके कारण ही मेरे पुत्र हारते जा रहे हैं; विजयी नहीं हो रहे हैं। जहाँ भीष्म, द्रोण, महामना कृपाचार्य, वीरवर भूरिश्रवा, भगदत्त, अश्वत्थामा तथा युद्धमें पीठ न दिखानेवाले अन्य शूरवीरोंके बीचमें रहकर भी मेरे पुत्र प्रतिदिन संग्राममें मारे जाते हैं, वहाँ दुर्भाग्यके सिवा और क्या कारण हो सकता है?॥ ३—५॥

न हि दुर्योधनो मन्दः पुरा प्रोक्तमबुध्यत।
वार्यमाणो मया तात भीष्मेण विदुरेण च॥ ६॥
गान्धार्या चैव दुर्मेधाः सततं हितकाम्यया।
नाबुध्यत पुरा मोहात् तस्य प्राप्तमिदं फलम्॥ ७॥
यद् भीमसेनः समरे पुत्रान् मम विचेतसः।
अहन्यहनि संक्रुद्धो नयते यमसादनम्॥ ८॥

मूर्ख दुर्योधनने पहले मेरी कही हुई बातोंपर ध्यान नहीं दिया। तात! मैंने, भीष्मने, विदुरने तथा गान्धारीने भी सदा हितकी इच्छासे दुर्बुद्धि दुर्योधनको बार-बार मना किया; परंतु मोहवश पूर्वकालमें हमारी ये बातें उसके समझमें नहीं आयीं। उसीका यह फल अब प्राप्त हुआ है, जिससे भीमसेन समरांगणमें कुपित होकर मेरे मूर्ख पुत्रोंको प्रतिदिन यमलोक भेज रहा है॥ ६—८॥

संजय उवाच

इदं तत् समनुप्राप्तं क्षत्तुर्वचनमुत्तमम्।
न बुद्धवानसि विभो प्रोच्यमानं हितं तदा॥ ९॥

संजयने कहा—प्रभो! उस समय आपने जो विदुरजीके कहे हुए उत्तम एवं हितकारक वचनको नहीं सुना (सुनकर भी उसपर ध्यान नहीं दिया), उसीका यह फल प्राप्त हुआ है॥ ९॥

निवारय सुतान् द्यूतात् पाण्डवान् मा द्रुहेति च।
सुहृदां हितकामानां ब्रुवतां तत् तदेव च॥ १०॥
न शुश्रूषसि तद् वाक्यं मर्त्यः पथ्यमिवौषधम्।
तदेव त्वामनुप्राप्तं वचनं साधुभाषितम्॥ ११॥

उन्होंने कहा था कि 'आप अपने पुत्रोंको जूआ खेलनेसे रोकिये। पाण्डवोंसे द्रोह न कीजिये।' आपका हित चाहनेवाले अन्यान्य सुहृदोंने भी आपसे वे ही बातें कही थीं; परंतु जैसे मरणासन्न पुरुषको हितकारक ओषधि अच्छी नहीं लगती, उसी प्रकार आप उन हितकर वचनोंको सुनना भी नहीं चाहते थे। अतः श्रेष्ठ विदुरने जैसा बताया था, वैसा ही परिणाम आपके सामने आया है॥ १०-११॥

विदुरद्रोणभीष्माणां तथान्येषां हितैषिणाम्।
अकृत्वा वचनं पथ्यं क्षयं गच्छन्ति कौरवाः॥ १२॥

विदुर, द्रोण, भीष्म तथा अन्य हितैषियोंके हितकर वचनोंको न माननेके कारण इन कौरवोंका विनाश हो रहा है॥ १२॥

तदेतत् समनुप्राप्तं पूर्वमेव विशाम्पते।
तस्मात् त्वं शृणु तत्त्वेन यथा युद्धमवर्तत॥ १३॥

प्रजापालक नरेश! यह सब तो पहलेसे ही प्राप्त है। अब आप जिस प्रकार युद्ध हुआ, उसका यथावत् समाचार सुनिये॥ १३॥

मध्याह्ने सुमहारौद्रः संग्रामः समपद्यत।
लोकक्षयकरो राजंस्तन्मे निगदतः शृणु॥ १४॥

राजन्! उस दिन दोपहर होते-होते बड़ा भयंकर संग्राम होने लगा, जो सम्पूर्ण जगत्के योद्धाओंका विनाश करनेवाला था। वह सब मैं कह रहा हूँ, सुनिये॥ १४॥

ततः सर्वाणि सैन्यानि धर्मपुत्रस्य शासनात्।
संरब्धान्यभ्यवर्तन्त भीष्ममेव जिघांसया॥ १५॥

तदनन्तर धर्मपुत्र युधिष्ठिरके आदेशसे क्रोधमें भरी हुई उनकी सारी सेनाएँ भीष्मपर ही टूट पड़ीं। वे भीष्मको मार डालना चाहती थीं॥ १५॥

धृष्टद्युम्नः शिखण्डी च सात्यकिश्च महारथः।
युक्तानीका महाराज भीष्ममेव समभ्ययुः॥ १६॥

महाराज! धृष्टद्युम्न, शिखण्डी तथा महारथी सात्यकि—इन सबने अपनी सेनाओंके साथ भीष्मपर ही आक्रमण किया॥ १६॥

विराटो द्रुपदश्चैव सहिताः सर्वसोमकैः।
अभ्यद्रवन्त संग्रामे भीष्ममेव महारथम्॥ १७॥

राजा विराट और सम्पूर्ण सोमकोंसहित द्रुपदने संग्राममें महारथी भीष्मपर ही चढ़ाई की॥ १७॥

केकया धृष्टकेतुश्च कुन्तिभोजश्च दंशितः।
युक्तानीका महाराज भीष्ममेव समभ्ययुः॥ १८॥

नरेश्वर! केकय, धृष्टकेतु और कवचधारी कुन्तिभोज—इन सबने अपनी सेनाओंके साथ भीष्मपर ही धावा किया॥ १८॥

अर्जुनो द्रौपदेयाश्च चेकितानश्च वीर्यवान्।
दुर्योधनसमादिष्टान् राज्ञः सर्वान् समभ्ययुः॥ १९॥

अर्जुन, द्रौपदीके पाँचों पुत्र और पराक्रमी

चेकितान—ये दुर्योधनके भेजे हुए समस्त राजाओंपर चढ़ आये॥ १९॥

अभिमन्युस्तथा शूरो हैडिम्बश्च महारथः।
भीमसेनश्च संक्रुद्धस्तेऽभ्यधावन्त कौरवान्॥ २०॥

शूरवीर अभिमन्यु, महारथी घटोत्कच तथा क्रोधमें भरे हुए भीमसेन—इन सबने कौरवोंपर धावा किया॥ २०॥

त्रिधाभूतैरवध्यन्त पाण्डवैः कौरवा युधि।
तथैव कौरवै राजन्नवध्यन्त परे रणे॥ २१॥

राजन्! पाण्डवोंने तीन दलोंमें विभक्त होकर कौरवोंका वध आरम्भ किया। इसी प्रकार कौरव भी रणभूमिमें शत्रुओंका नाश करने लगे॥ २१॥

द्रोणस्तु रथिनः श्रेष्ठान् सोमकान् सृंजयैः सह।
अभ्यधावत संक्रुद्धः प्रेषयिष्यन् यमक्षयम्॥ २२॥

द्रोणाचार्यने श्रेष्ठ रथी सोमकों और सृंजयोंको यमलोक भेजनेके लिये क्रोधपूर्वक उनके ऊपर धावा बोल दिया॥ २२॥

तत्राक्रन्दो महानासीत् सृंजयानां महात्मनाम्।
वध्यतां समरे राजन् भारद्वाजेन धन्विना॥ २३॥

राजन्! धनुर्धर द्रोणाचार्यके द्वारा समरभूमिमें मारे जाते हुए महामना सृंजयोंका महान् आर्तनाद सुनायी देने लगा॥ २३॥

द्रोणेन निहतास्तत्र क्षत्रिया बहवो रणे।
विचेष्टन्तो ह्यदृश्यन्त व्याधिक्लिष्टा नरा इव॥ २४॥

द्रोणाचार्यके मारे हुए बहुत-से क्षत्रिय रणभूमिमें व्याधिग्रस्त मनुष्योंकी भाँति छटपटाते हुए दिखायी देते थे॥ २४॥

कूजतां क्रन्दतां चैव स्तनतां चैव भारत।
अनिशं शुश्रुवे शब्दः क्षुत्क्लिष्टानां नृणामिव॥ २५॥

भरतनन्दन! भूखसे पीड़ित मनुष्योंकी भाँति कूजते, क्रन्दन करते और गरजते हुए योद्धाओंका शब्द निरन्तर सुनायी देता था॥ २५॥

तथैव कौरवेयाणां भीमसेनो महाबलः।
चकार कदनं घोरं क्रुद्धः काल इवापरः॥ २६॥

इसी प्रकार महाबली भीमसेन क्रोधमें भरे हुए दूसरे कालके समान कौरव सैनिकोंका घोर संहार करने लगे॥

वध्यतां तत्र सैन्यानामन्योन्येन महारणे।
प्रावर्तत नदी घोरा रुधिरौघप्रवाहिनी॥ २७॥

उस महायुद्धमें परस्पर मारकाट करनेवाले सैनिकोंकी रक्तराशिको प्रवाहित करनेवाली एक भयंकर नदी बह चली॥ २७॥

स संग्रामो महाराज घोररूपोऽभवन्महान्।
कुरूणां पाण्डवानां च यमराष्ट्रविवर्धनः॥ २८॥

महाराज! कौरवों और पाण्डवोंका वह घोर महा-संग्राम यमलोककी वृद्धि करनेवाला था॥ २८॥

ततो भीमो रणे क्रुद्धो रभसश्च विशेषतः।
गजानीकं समासाद्य प्रेषयामास मृत्यवे॥ २९॥

तब युद्धमें विशेष वेगशाली भीमसेनने कुपित हो हाथियोंकी सेनामें प्रवेशकर उन्हें कालके गालमें भेजना आरम्भ किया॥ २९॥

तत्र भारत भीमेन नाराचाभिहता गजाः।
पेतुर्नेदुश्च सेदुश्च दिशश्च परिबभ्रमुः॥ ३०॥

भारत! वहाँ भीमके नाराचोंसे पीड़ित हुए हाथी गिरते, चिग्घाड़ते, बैठ जाते अथवा सम्पूर्ण दिशाओंमें चक्कर लगाने लगते थे॥ ३०॥

छिन्नहस्ता महानागाश्छिन्नगात्राश्च मारिष।
क्रौञ्चवद् व्यनदन् भीताः पृथिवीमधिशेरते॥ ३१॥

आर्य! सूँड़ तथा दूसरे-दूसरे अंगोंके कट जानेसे हाथी भयभीत हो क्रौंच पक्षीकी भाँति चीत्कार करते और धराशायी हो जाते थे॥ ३१॥

नकुलः सहदेवश्च हयानीकमभिद्रुतौ।
ते हयाः काञ्चनापीडा रुक्मभाण्डपरिच्छदाः॥ ३२॥
वध्यमाना व्यदृश्यन्त शतशोऽथ सहस्रशः।

नकुल और सहदेवने घुड़सवारोंकी सेनापर आक्रमण किया। राजन्! उन घोड़ोंने सोनेकी कलँगी तथा सोनेके ही अन्यान्य आभूषण धारण किये थे। वे सब सैकड़ों और सहस्रोंकी संख्यामें मरकर गिरते दिखायी देते थे॥ ३२½॥

पतद्भिस्तुरगै राजन् समास्तीर्यत मेदिनी॥ ३३॥
निर्जिह्वैश्च श्वसद्भिश्च कूजद्भिश्च गतासुभिः।
हयैर्बभौ नरश्रेष्ठ नानारूपधरैर्धरा॥ ३४॥

राजन्! वहाँ गिरते हुए घोड़ोंकी लाशोंसे सारी पृथ्वी पट गयी। किन्हींकी जीभ निकल आयी थी, कोई लंबी साँस खींच रहे थे, कोई धीरे-धीरे अव्यक्त शब्द करते और कितनोंके प्राण निकल गये थे। नरश्रेष्ठ! इस प्रकार विभिन्न रूपधारी घोड़ोंसे आच्छादित होनेके कारण इस पृथ्वीकी अद्भुत शोभा हो रही थी॥ ३३-३४॥

अर्जुनेन हतैः संख्ये तथा भारत राजभिः।
प्रबभौ वसुधा घोरा तत्र तत्र विशाम्पते॥ ३५॥

भारत! प्रजानाथ! जहाँ-तहाँ अर्जुनके द्वारा युद्धमें मारे गये राजाओंसे भरी हुई वह रणभूमि बड़ी भयानक जान पड़ती थी॥ ३५॥

रथैर्भग्नैर्ध्वजैश्छिन्नैर्निकृत्तैश्च महायुधैः।
चामरैर्व्यजनैश्चैव छत्रैश्च सुमहाप्रभैः॥ ३६॥
हारैर्निष्कैः सकेयूरैः शिरोभिश्च सकुण्डलैः।
उष्णीषैरपविद्धैश्च पताकाभिश्च सर्वशः॥ ३७॥
अनुकर्षैः शुभै राजन् योक्त्रैश्चैव सरश्मिभिः।
संकीर्णा वसुधा भाति वसन्ते कुसुमैरिव॥ ३८॥

राजन्! टूटे हुए रथ, कटे हुए ध्वज, छिन्न-भिन्न हुए बड़े-बड़े आयुध, चँवर, व्यजन, अत्यन्त प्रकाशमान छत्र, सोनेके हार, केयूर, कुण्डलमण्डित मस्तक, गिरे हुए शिरोभूषण (पगड़ी आदि), पताका, सुन्दर अनुकर्ष,* जोत और बागडोर आदिसे आच्छादित हुई वह संग्रामभूमि ऐसी जान पड़ती थी, मानो वसन्तऋतुमें उसपर भाँति-भाँतिके फूल गिरे हुए हों॥ ३६—३८॥

एवमेष क्षयो वृत्तः पाण्डूनामपि भारत।
क्रुद्धे शान्तनवे भीष्मे द्रोणे च रथसत्तमे॥ ३९॥
अश्वत्थाम्नि कृपे चैव तथैव कृतवर्मणि।
तथेतरेषु क्रुद्धेषु तावकानामपि क्षयः॥ ४०॥

भारत! शान्तनुनन्दन भीष्म, रथियोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा—इनके कुपित होनेसे पाण्डव सैनिकोंका भी इस प्रकार यह संहार हुआ था। साथ ही पाण्डवोंके कुपित होनेसे आपके योद्धाओंका भी ऐसा ही विकट विनाश हुआ था॥ ३९-४०॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि अष्टमदिवसयुद्धे एकोननवतितमोऽध्यायः॥ ८९॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें आठवें दिनके युद्धसे सम्बन्ध रखनेवाला नवासीवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ८९॥

नवतितमोऽध्यायः

इरावान्‌के द्वारा शकुनिके भाइयोंका तथा राक्षस अलम्बुषके द्वारा इरावान्‌का वध

संजय उवाच

वर्तमाने तथा रौद्रे राजन् वीरवरक्षये।
शकुनिः सौबलः श्रीमान् पाण्डवान् समुपाद्रवत्॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! जिस समय बड़े-बड़े वीरोंका विनाश करनेवाला वह भयंकर संग्राम चल रहा था, उसी समय सुबलपुत्र श्रीमान् शकुनिने पाण्डवोंपर आक्रमण किया॥ १॥

तथैव सात्वतो राजन् हार्दिक्यः परवीरहा।
अभ्यद्रवत संग्रामे पाण्डवानां वरूथिनीम्॥ २॥

नरेश्वर! इसी प्रकार शत्रुवीरोंका विनाश करनेवाले सात्वतवंशी कृतवर्माने उस संग्राममें पाण्डवोंकी सेनापर आक्रमण किया॥ २॥

ततः काम्बोजमुख्यानां नदीजानां च वाजिनाम्।
आरट्टानां महीजानां सिन्धुजानां च सर्वशः॥ ३॥
वनायुजानां शुभ्राणां तथा पर्वतवासिनाम्।
वाजिनां बहुभिः संख्ये समन्तात् परिवारयन्॥ ४॥
ये चापरे तित्तिरिजा जवना वातरंहसः।
सुवर्णालंकृतैरेतैर्वर्मवद्भिः सुकल्पितैः॥ ५॥
हयैर्वातजवैर्मुख्यैः पाण्डवस्य सुतो बली।
अभ्यवर्तत तत् सैन्यं हृष्टरूपः परंतपः॥ ६॥

तत्पश्चात् काम्बोज देशके अच्छे घोड़े, दरियाई घोड़े, मही, सिन्धु, वनायु, आरट्ट तथा पर्वतीय प्रान्तोंमें होनेवाले सुन्दर घोड़े—इन सबकी बहुत बड़ी सेनाके द्वारा सब ओरसे घिरा हुआ शत्रुओंको संताप देनेवाला पाण्डुनन्दन अर्जुनका बलवान् पुत्र इरावान् हर्षमें भरकर रणभूमिमें कौरवोंकी उस सेनापर चढ़ आया। उसके साथ तित्तिर प्रदेशके शीघ्रगामी घोड़े भी मौजूद थे, जो वायुके समान वेगशाली थे। वे सब-के-सब सोनेके आभूषणोंसे विभूषित थे। उनके शरीरोंमें कवच बँधे हुए थे और उन्हें सुन्दर साज-बाजसे सजाया गया था। वे सभी घोड़े अच्छी जातिके तथा वायुके तुल्य शीघ्रगामी थे॥ ३—६॥

अर्जुनस्य सुतः श्रीमानिरावान् नाम वीर्यवान्।
सुतायां नागराजस्य जातः पार्थेन धीमता॥ ७॥

अर्जुनका पराक्रमी पुत्र श्रीमान् इरावान् नागराज कौरव्यकी पुत्रीके गर्भसे बुद्धिमान् अर्जुनद्वारा उत्पन्न किया गया था॥ ७॥

ऐरावतेन सा दत्ता अनपत्या महात्मना।
पतौ हते सुपर्णेन कृपणा दीनचेतना॥ ८॥
भार्यार्थं तां च जग्राह पार्थः कामवशानुगाम्।
एवमेष समुत्पन्नः परपक्षेऽर्जुनात्मजः॥ ९॥

नागराजकी वह पुत्री संतानहीन थी। उसके

* रथके नीचे रहनेवाली लकड़ीको अनुकर्ष कहते हैं, जिसके सहारे पहिये रहते हैं।

मनोनीत पतिको* गरुड़ने मार डाला था, जिससे वह अत्यन्त दीन एवं दयनीय हो रही थी। ऐरावतवंशी कौरव्यनागने उसे अर्जुनको अर्पित किया और अर्जुनने कामके अधीन हुई उस नागकन्याको भार्यारूपमें ग्रहण किया था। इस प्रकार यह अर्जुनपुत्र उत्पन्न हुआ था। वह सदा मातृकुलमें ही रहा॥ ८-९॥

स नागलोके संवृद्धो मात्रा च परिरक्षितः।
पितृव्येण परित्यक्तः पार्थद्वेषाद् दुरात्मना॥ १०॥

वह नागलोकमें ही माताद्वारा पाल-पोसकर बड़ा किया गया और सब प्रकारसे वहीं उसकी रक्षा की गयी थी। उस बालकके किसी दुरात्मा वयोवृद्ध सम्बन्धीने अर्जुनके प्रति द्वेष होनेके कारण इनके उस पुत्रको त्याग दिया था॥ १०॥

रूपवान् बलसम्पन्नो गुणवान् सत्यविक्रमः।
इन्द्रलोकं जगामाशु श्रुत्वा तत्रार्जुनं गतम्॥ ११॥

इरावान् भी रूपवान्, बलवान्, गुणवान् और सत्यपराक्रमी था, बड़े होनेपर जब उसने सुना कि मेरे पिता अर्जुन इस समय इन्द्रलोकमें गये हुए हैं, तब वह शीघ्र ही वहाँ जा पहुँचा॥ ११॥

सोऽभिगम्य महाबाहुः पितरं सत्यविक्रमः।
अभ्यवादयदव्यग्रो विनयेन कृताञ्जलिः॥ १२॥
न्यवेदयत चात्मानमर्जुनस्य महात्मनः।
इरावानस्मि भद्रं ते पुत्रश्चाहं तव प्रभो॥ १३॥
मातुः समागमो यश्च तत् सर्वं प्रत्यवेदयत्।
तच्च सर्वं यथावृत्तमनुसस्मार पाण्डवः॥ १४॥

उस सत्यपराक्रमी महाबाहु वीरने अपने पिताके पास पहुँचकर शान्तभावसे उन्हें प्रणाम किया और विनयपूर्वक हाथ जोड़ महामना अर्जुनके समक्ष अपना परिचय देते हुए बोला—'प्रभो! आपका कल्याण हो। मैं आपका ही पुत्र इरावान् हूँ।' उसकी माताके साथ अर्जुनका जो समागम हुआ था, वह सब उसने निवेदन किया। पाण्डुनन्दन अर्जुनको वह सब वृत्तान्त यथार्थ-रूपसे स्मरण हो आया॥ १२—१४॥

परिष्वज्य सुतं चापि आत्मनः सदृशं गुणैः।
प्रीतिमाननयत् पार्थो देवराजनिवेशने॥ १५॥

गुणोंमें अपने ही समान उस पुत्रको हृदयसे लगाकर अर्जुन बड़ी प्रसन्नताके साथ उसे देवराजके भवनमें ले गये॥ १५॥

सोऽर्जुनेन समाज्ञप्तो देवलोके तदा नृप।
प्रीतिपूर्वं महाबाहुः स्वकार्यं प्रति भारत॥ १६॥

नरेश्वर! भरतनन्दन! उन दिनों देवलोकमें अर्जुनने प्रेमपूर्वक अपने महाबाहु पुत्रको अपना सब कार्य बताते हुए कहा—॥ १६॥

युद्धकाले त्वयास्माकं साह्यं देयमिति प्रभो।
बाढमित्येवमुक्त्वा तु युद्धकाल इहागतः॥ १७॥

'शक्तिशाली पुत्र! युद्धके अवसरपर तुम हमलोगोंको सहायता देना।' तब बहुत अच्छा कहकर इरावान् चला गया और अब युद्धके अवसरपर यहाँ आया है॥ १७॥

कामवर्णजवैरश्वैर्बहुभिः संवृतो नृप।
ते हयाः काञ्चनापीडा नानावर्णा मनोजवाः॥ १८॥

नरेश्वर! इरावान्के साथ इच्छानुसार रूप-रंग और वेगवाले बहुत-से घोड़े मौजूद थे। वे सब-के-सब सोनेके शिरोभूषण धारण करनेवाले तथा मनके समान वेगशाली थे। उनके रंग अनेक प्रकारके थे॥ १८॥

उत्पेतुः सहसा राजन् हंसा इव महोदधौ।
ते त्वदीयान् समासाद्य हयसंघान् मनोजवान्॥ १९॥
क्रोडैः क्रोडानभिघ्नन्तो घोणाभिश्च परस्परम्।
निपेतुः सहसा राजन् सुवेगाभिहता भुवि॥ २०॥

राजन्! वे घोड़े महासागरमें उड़नेवाले हंसोंके समान सहसा उछले और आपके मनके समान वेगशाली अश्वोंके समुदायमें पहुँचकर छातीसे उनकी छातीमें तथा नासिकासे एक-दूसरेकी नासिकापर चोट करने लगे। वे सहसा वेगपूर्वक टकराकर पृथ्वीपर गिरते थे॥ १९-२०॥

निपतद्भिस्तथा तैश्च हयसंघैः परस्परम्।
शुश्रुवे दारुणः शब्दः सुपर्णपतने यथा॥ २१॥

वे अश्वोंके समुदाय परस्पर टकराकर जब गिरते थे, उस समय गरुड़के वेगपूर्वक उतरनेके समान भयंकर शब्द सुनायी देता था॥ २१॥

तथैव तावका राजन् समेत्यान्योन्यमाहवे।
परस्परवधं घोरं चक्रुस्ते हयसादिनः॥ २२॥

---

* यहाँ मूलमें 'पतौ' पाठ है। व्याकरणके अनुसार 'पति' शब्दका सप्तमीके एक वचनमें 'पत्यौ' रूप होता है। अतः जहाँ 'पतौ' पदका प्रयोग है, वहाँ मुख्य 'पति'का वाचक पति शब्द नहीं है। 'पतिरिवाचरतीति पतिः' इस व्युत्पत्तिके अनुसार आचारक्विबन्त 'पति' शब्दका यहाँ प्रयोग है, जिसका अर्थ है—पतिसदृश। तात्पर्य यह कि जिसके लिये कन्याका वाग्दान किया गया है, वह मनोनीत पति ही विवाहके पहलेतक 'पतितुल्य' है। विवाहके बाद साक्षात् 'पति' होता है। इस नागकन्याके मनोनीत पतिको गरुड़ने मार डाला था, इसीलिये 'नष्टे मृते प्रव्रजिते' इस पाराशर-वचनके अनुसार उसका अर्जुनके साथ सम्बन्ध हुआ और धर्मात्मा अर्जुनने उसे पत्नीरूपसे ग्रहण किया।

राजन्! इसी प्रकार आपके और पाण्डवोंके घुड़सवार युद्धमें एक-दूसरेसे भिड़कर आपसमें भयंकर मार-काट करते थे॥ २२॥

तस्मिंस्तथा वर्तमाने संकुले तुमुले भृशम्।
उभयोरपि संशान्ता हयसङ्घाः समन्ततः॥ २३॥

इस प्रकार अत्यन्त भयानक घमासान युद्ध छिड़ जानेपर दोनों पक्षोंके अश्वसमूह चारों ओर नष्ट हो गये॥ २३॥

प्रक्षीणसायकाः शूरा निहताश्वाः श्रमातुराः।
विलयं समनुप्राप्तास्तक्षमाणाः परस्परम्॥ २४॥

शूरवीर योद्धाओंके पास बाण समाप्त हो गये। उनके घोड़े मारे गये। वे परिश्रमसे पीड़ित हो परस्पर घात-प्रतिघात करते हुए विनष्ट हो गये॥ २४॥

ततः क्षीणे हयानीके किंचिच्छेषे च भारत।
सौबलस्यानुजाः शूरा निर्गता रणमूर्धनि॥ २५॥

भारत! इस प्रकार जब घुड़सवारोंकी सेना नष्ट हो गयी और उसका अल्पभाग ही अवशिष्ट रह गया; उस अवस्थामें शकुनिके शूरवीर भाई युद्धके मुहानेपर निकले॥ २५॥

वायुवेगसमस्पर्शाञ्जवे वायुसमांश्च ते।
आरुह्य बलसम्पन्नान् वयःस्थांस्तुरगोत्तमान्॥ २६॥
गजो गवाक्षो वृषभश्चर्मवानार्जवः शुकः।
षडेते बलसम्पन्ना निर्ययुर्महतो बलात्॥ २७॥

जिनका स्पर्श वायुवेगके समान दुःसह था, जो वेगमें वायुकी समानता करते थे, ऐसे बलसम्पन्न नयी अवस्थावाले उत्तम घोड़ोंपर सवार हो गज, गवाक्ष, वृषभ, चर्मवान्, आर्जव और शुक—ये छः बलवान् वीर अपनी विशाल सेनासे बाहर निकले॥ २६-२७॥

वार्यमाणाः शकुनिना तैश्च योधैर्महाबलैः।
संनद्धा युद्धकुशला रौद्ररूपा महाबलाः॥ २८॥

यद्यपि शकुनिने उन्हें मना किया, अन्यान्य महाबली योद्धाओंने भी उन्हें रोका, तथापि वे युद्धकुशल, महाबली रौद्ररूपधारी क्षत्रिय कवच आदिसे सुसज्जित हो युद्धके लिये निकल पड़े॥ २८॥

तदनीकं महाबाहो भित्त्वा परमदुर्जयम्।
बलेन महता युक्ताः स्वर्गाय विजयैषिणः॥ २९॥
विविशुस्ते तदा हृष्टा गान्धारा युद्धदुर्मदाः।

महाबाहो! उस समय उन युद्धदुर्मद गान्धार-देशीय वीरोंने विजय अथवा स्वर्गकी अभिलाषा लेकर विशाल सेनाके साथ पाण्डव-वाहिनीके परम दुर्जयव्यूहका भेदन करके हर्ष और उत्साहसे परिपूर्ण हो उसके भीतर प्रवेश किया॥ २९½॥

तान् प्रविष्टांस्तदा दृष्ट्वा इरावानपि वीर्यवान्॥ ३०॥
अब्रवीत् समरे योधान् विचित्रान् दारुणायुधान्।
यथैते धार्तराष्ट्रस्य योधाः सानुगवाहनाः॥ ३१॥
हन्यन्ते समरे सर्वे तथा नीतिर्विधीयताम्।

तब उन्हें सेनाके भीतर प्रविष्ट हुआ देख पराक्रमी इरावान्ने भी समरभूमिमें भयंकर अस्त्र-शस्त्रवाले अपने विचित्र योद्धाओंसे कहा—'वीरो! तुम सब लोग संग्राममें ऐसी नीति बना लो, जिससे दुर्योधनके ये समस्त योद्धा अपने सेवकों और सवारियोंसहित मार डाले जायँ'॥ ३०-३१½॥

बाढमित्येवमुक्त्वा ते सर्वे योधा इरावतः॥ ३२॥
जघ्नुस्तेषां बलानीकं दुर्जयं समरे परैः।

तब 'बहुत अच्छा' ऐसा कहकर इरावान्के समस्त सैनिकोंने उन छहों वीरोंके सैन्यसमूहको, जो समरांगणमें दूसरोंके लिये दुर्जय था, मार डाला॥ ३२½॥

तदनीकमनीकेन समरे वीक्ष्य पातितम्॥ ३३॥
अमृष्यमाणास्ते सर्वे सुबलस्यात्मजा रणे।
इरावन्तमभिद्रुत्य सर्वतः पर्यवारयन्॥ ३४॥

अपनी सेनाको समरभूमिमें शत्रुकी सेनाद्वारा मार गिरायी गयी देख सुबलके सभी पुत्र इसे सह न सके। उन्होंने इरावान्पर धावा करके उसे सब ओरसे घेर लिया॥ ३३-३४॥

ताडयन्तः शितैः प्रासैश्चोदयन्तः परस्परम्।
ते शूराः पर्यधावन्त कुर्वन्तो महदाकुलम्॥ ३५॥

वे छहों शूर तीखे प्रासोंसे मारते और एक-दूसरेको बढ़ावा देते हुए इरावान्पर टूट पड़े तथा उसे अत्यन्त व्याकुल करने लगे॥ ३५॥

इरावानथ निर्भिन्नः प्रासैस्तीक्ष्णैर्महात्मभिः।
स्रवता रुधिरेणाक्तस्तोत्रैर्विद्ध इव द्विपः॥ ३६॥

उन महामनस्वी वीरोंके तीखे प्रासोंसे क्षत-विक्षत होकर इरावान् बहते हुए रक्तसे नहा उठा। अंकुशोंसे घायल हुए हाथीके समान व्याकुल हो गया॥ ३६॥

पुरतोऽपि च पृष्ठे च पार्श्वयोश्च भृशाहतः।
एको बहुभिरत्यर्थं धैर्याद् राजन् न विव्यथे॥ ३७॥

राजन्! वह अकेला था और उसपर प्रहार करनेवालोंकी संख्या बहुत थी। वह आगे-पीछे और अगल-बगलमें अत्यन्त घायल हो गया था; तो भी धैर्यके कारण व्यथित नहीं हुआ॥ ३७॥

इरावानपि संक्रुद्धः सर्वांस्तान् निशितैः शरैः।
मोहयामास समरे विद्ध्वा परपुरंजयः॥ ३८॥

अब इरावान्को भी बड़ा क्रोध हुआ। शत्रुनगरीपर

विजय पानेवाले उस वीरने समरमें तीखे बाणोंद्वारा बींधकर उन सबको मूर्च्छित कर दिया॥ ३८॥

प्रासानुत्कृत्य तरसा स्वशरीरादरिंदमः।
तैरेव ताडयामास सुबलस्यात्मजान् रणे॥ ३९॥

शत्रुओंका दमन करनेवाले इरावान्‌ने अपने शरीरसे वेगपूर्वक प्रासोंको निकालकर उन्हींके द्वारा रणभूमिमें सुबलपुत्रोंपर प्रहार किया॥ ३९॥

विकृष्य च शितं खड्गं गृहीत्वा च शरावरम्।
पदातिर्द्रुतमागच्छज्जिघांसुः सौबलान् युधि॥ ४०॥

तत्पश्चात् तीखी तलवार और ढाल निकालकर इरावान्‌ने युद्धमें सुबलपुत्रोंको मार डालनेकी इच्छासे तुरंत उनके ऊपर पैदल ही धावा किया॥ ४०॥

ततः प्रत्यागतप्राणाः सर्वे ते सुबलात्मजाः।
भूयः क्रोधसमाविष्टा इरावन्तमभिद्रुताः॥ ४१॥

तदनन्तर सुबलपुत्रोंमें प्राणशक्ति पुनः लौट आयी। अतः वे सब-के-सब सचेत होनेपर पुनः क्रोधमें भर गये और इरावान्‌पर दौड़े॥ ४१॥

इरावानपि खड्गेन दर्शयन् पाणिलाघवम्।
अभ्यवर्तत तान् सर्वान् सौबलान् बलदर्पितः॥ ४२॥

इरावान् भी बलके अभिमानमें उन्मत्त हो अपने हाथोंकी फुर्ती दिखाता हुआ खड्गके द्वारा उन समस्त सुबलपुत्रोंका सामना करने लगा॥ ४२॥

लाघवेनाथ चरतः सर्वे ते सुबलात्मजाः।
अन्तरं नाभ्यगच्छन्त चरन्तः शीघ्रगैर्हयैः॥ ४३॥

वह अकेला बड़ी फुर्तीसे पैंतरे बदल रहा था और वे सभी सुबलपुत्र शीघ्रगामी घोड़ोंद्वारा विचर रहे थे, तो भी वे अपनेमें उसकी अपेक्षा कोई विशेषता न ला सके॥ ४३॥

भूमिष्ठमथ तं संख्ये सम्प्रदृश्य ततः पुनः।
परिवार्य भृशं सर्वे ग्रहीतुमुपचक्रमुः॥ ४४॥

तदनन्तर इरावान्‌को भूमिपर स्थित देख वे सभी सुबलपुत्र युद्धमें उसे पुनः भलीभाँति घेरकर बन्दी बनानेकी तैयारी करने लगे॥ ४४॥

अथाभ्याशगतानां स खड्गेनामित्रकर्शनः।
असिहस्तापहस्ताभ्यां तेषां गात्राण्यकृन्तत॥ ४५॥

तब शत्रुसूदन इरावान्‌ने निकट आनेपर कभी दाहिने और कभी बायें हाथसे तलवार घुमाकर उसके द्वारा शत्रुओंके अंगोंको छिन्न-भिन्न कर दिया॥ ४५॥

आयुधानि च सर्वेषां बाहूनपि विभूषितान्।
अपतन्त निकृत्ताङ्गा मृता भूमौ गतासवः॥ ४६॥

उन सबके आयुधों और भूषणभूषित भुजाओंको भी उसने काट डाला। इस प्रकार अंग-अंग कट जानेसे वे प्राणशून्य हो मरकर धरतीपर गिर पड़े॥ ४६॥

वृषभस्तु महाराज बहुधा विपरिक्षतः।
अमुच्यत महारौद्रात् तस्माद् वीरावकर्तनात्॥ ४७॥

महाराज! वृषभ बहुत घायल हो गया था तो भी वीरोंका उच्छेद करनेवाले उस महाभयंकर संग्रामसे उसने अपने-आपको किसी प्रकार मुक्त कर लिया॥ ४७॥

तान् सर्वान् पतितान् दृष्ट्वा भीतो दुर्योधनस्ततः।
अभ्यधावत संक्रुद्धो राक्षसं घोरदर्शनम्॥ ४८॥
आर्ष्यशृङ्गिं महेष्वासं मायाविनमरिंदमम्।
वैरिणं भीमसेनस्य पूर्वं बकवधेन वै॥ ४९॥

उन सबको मार गिराया गया देख दुर्योधन भयभीत हो उठा और वह अत्यन्त क्रोधमें भरकर भयंकर दीखनेवाले राक्षस ऋष्यशृंगपुत्र (अलम्बुष)-के पास दौड़ा गया। वह राक्षस शत्रुओंका दमन करनेमें समर्थ, मायावी और महान् धनुर्धर था। पूर्वकालमें किये गये बकासुरवधके कारण वह भीमसेनका वैरी बन बैठा था॥ ४८-४९॥

पश्य वीर यथा ह्येष फाल्गुनस्य सुतो बली।
मायावी विप्रियं कर्तुमकार्षीन्मे बलक्षयम्॥ ५०॥

उसके पास जाकर दुर्योधनने कहा—'वीर! देखो, अर्जुनका यह बलवान् पुत्र बड़ा मायावी है। इसने मेरा अप्रिय करनेके लिये मेरी सेनाका संहार कर डाला है॥ ५०॥

त्वं च कामगमस्तात मायास्त्रे च विशारदः।
कृतवैरश्च पार्थेन तस्मादेनं रणे जहि॥ ५१॥

'तात! तुम इच्छानुसार चलनेवाले तथा मायामय अस्त्रोंके प्रयोगमें कुशल हो। कुन्तीकुमार भीमने तुम्हारे साथ वैर भी किया है। अतः तुम युद्धमें इस इरावान्‌को अवश्य मार डालो'॥ ५१॥

बाढमित्येवमुक्त्वा तु राक्षसो घोरदर्शनः।
प्रययौ सिंहनादेन यत्रार्जुनसुतो युवा॥ ५२॥

'बहुत अच्छा' ऐसा कहकर वह भयानक दिखायी देनेवाला राक्षस सिंहनाद करके जहाँ नवयुवक अर्जुन-कुमार इरावान् था, उस स्थानपर गया॥ ५२॥

आरूढैर्युद्धकुशलैर्विमलप्रासयोधिभिः।
वीरैः प्रहारिभिर्युक्तैः स्वैरनीकैः समावृतः॥ ५३॥
हतशेषैर्महाराज द्विसाहस्रैर्हयोत्तमैः।
निहन्तुकामः समरे इरावन्तं महाबलम्॥ ५४॥

उसके साथ निर्मल प्रास नामक अस्त्रसे युद्ध करनेवाले संग्रामकुशल तथा प्रहार करनेमें समर्थ वीरोंसे युक्त बहुत-सी सेनाएँ थीं। उसके सभी सैनिक सवारियोंपर

बैठे हुए थे। उन सबसे घिरा हुआ वह समरभूमिमें महाबली इरावान्‌को मार डालनेकी इच्छासे युद्धस्थलमें गया। महाराज! मरनेसे बचे हुए दो हजार उत्तम घोड़े उसके साथ थे॥ ५३-५४॥

इरावानपि संक्रुद्धस्त्वरमाणः पराक्रमी।
हन्तुकाममभित्रघ्नो राक्षसं प्रत्यवारयत्॥ ५५॥

शत्रुओंका नाश करनेवाला पराक्रमी इरावान् भी क्रोधमें भरा हुआ था। उसने उसे मारनेकी इच्छा रखनेवाले उस राक्षसका बड़ी उतावलीके साथ निवारण किया॥ ५५॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य राक्षसः सुमहाबलः।
त्वरमाणस्ततो मायां प्रयोक्तुमुपचक्रमे॥ ५६॥

इरावान्‌को आते देख उस महाबली राक्षसने शीघ्रतापूर्वक मायाका प्रयोग आरम्भ किया॥ ५६॥

तेन मायामयाः सृष्टा हयास्तावन्त एव हि।
स्वारूढा राक्षसैर्घोरैः शूलपट्टिशधारिभिः॥ ५७॥

उसने मायामय दो हजार घोड़े उत्पन्न किये, जिनपर शूल और पट्टिश धारण करनेवाले भयंकर राक्षस सवार थे॥ ५७॥

ते संरब्धाः समागम्य द्विसाहस्राः प्रहारिणः।
अचिराद् गमयामासुः प्रेतलोकं परस्परम्॥ ५८॥

वे दो हजार प्रहारकुशल योद्धा क्रोधमें भरे हुए आकर इरावान्‌के सैनिकोंके साथ युद्ध करने लगे। इस प्रकार दोनों ओरके योद्धाओंने परस्पर प्रहार करके शीघ्र ही एक-दूसरेको यमलोक पहुँचा दिया॥ ५८॥

तस्मिंस्तु निहते सैन्ये तावुभौ युद्धदुर्मदौ।
संग्रामे समतिष्ठेतां यथा वै वृत्रवासवौ॥ ५९॥

इस प्रकार जब दोनों ओरकी सेनाएँ मार डाली गयीं, तब युद्धमें उन्मत्त होकर लड़नेवाले वे दोनों वीर इरावान् तथा अलम्बुष राक्षस ही युद्धभूमिमें वृत्रासुर और इन्द्रके समान डटे रहे॥ ५९॥

आद्रवन्तमभिप्रेक्ष्य राक्षसं युद्धदुर्मदम्।
इरावानथ संरब्धः प्रत्यधावन्महाबलः॥ ६०॥

रणदुर्मद राक्षस अलम्बुषको अपने ऊपर धावा करते देख महाबली इरावान् भी क्रोधमें भरकर उसके ऊपर टूट पड़ा॥ ६०॥

समभ्याशगतस्याजौ तस्य खड्गेन दुर्मतेः।
चिच्छेद कार्मुकं दीप्तं शरावापं च सत्वरम्॥ ६१॥

एक बार जब वह दुर्बुद्धि राक्षस बहुत निकट आ गया, तब इरावान्‌ने अपने खड्गसे उसके देदीप्यमान धनुष और भाथेको शीघ्र ही काट डाला॥ ६१॥

स निकृत्तं धनुर्दृष्ट्वा खं जवेन समाविशत्।
इरावन्तमभिक्रुद्धं मोहयन्निव मायया॥ ६२॥

धनुषको कटा हुआ देख वह राक्षस क्रोधमें भरे हुए इरावान्‌को अपनी मायासे मोहित-सा करता हुआ बड़े वेगसे आकाशमें उड़ गया॥ ६२॥

ततोऽन्तरिक्षमुत्पत्य इरावानपि राक्षसम्।
विमोहयित्वा मायाभिस्तस्य गात्राणि सायकैः॥ ६३॥
चिच्छेद सर्वमर्मज्ञः कामरूपो दुरासदः।
तथा स राक्षसश्रेष्ठः शरैः कृत्तः पुनः पुनः॥ ६४॥
सम्बभूव महाराज समवाप च यौवनम्।
माया हि सहजा तेषां वयो रूपं च कामजम्॥ ६५॥

तब इरावान् भी आकाशमें उछलकर उस राक्षसको अपनी मायाओंसे मोहित करके उसके अंगोंको सायकोंद्वारा छिन्न-भिन्न करने लगा। वह कामरूपधारी श्रेष्ठ राक्षस सम्पूर्ण मर्मस्थानोंको जाननेवाला और दुर्जय था। वह बाणोंसे कटनेपर भी पुनः ठीक हो जाता था। महाराज! वह नयी जवानी प्राप्त कर लेता था; क्योंकि राक्षसोंमें मायाका बल स्वाभाविक होता है और वे इच्छानुसार रूप तथा अवस्था धारण कर लेते हैं॥ ६३—६५॥

एवं तद् राक्षसस्याङ्गं छिन्नं छिन्नं बभूव ह।
इरावानपि संक्रुद्धो राक्षसं तं महाबलम्॥ ६६॥
परश्वधेन तीक्ष्णेन चिच्छेद च पुनः पुनः।

इस प्रकार उस राक्षसका जो-जो अंग कटता, वह पुनः नये सिरेसे उत्पन्न हो जाता था। इरावान् भी अत्यन्त कुपित होकर उस महाबली राक्षसको बारंबार तीखे फरसेसे काटने लगा॥ ६६½॥

स तेन बलिना वीरश्छिद्यमान इरावता॥ ६७॥
राक्षसोऽप्यनदद् घोरं स शब्दस्तुमुलोऽभवत्।

बलवान् इरावान्‌के फरसेसे छिन्न-भिन्न हुआ वह वीर राक्षस घोर आर्तनाद करने लगा। उसका वह शब्द बड़ा भयंकर प्रतीत होता था॥ ६७½॥

परश्वधक्षतं रक्षः सुस्राव बहु शोणितम्॥ ६८॥
ततश्चुक्रोध बलवांश्चक्रे वेगं च संयुगे।
आर्ष्यशृङ्गिस्तथा दृष्ट्वा समरे शत्रुमूर्जितम्॥ ६९॥
कृत्वा घोरं महद् रूपं ग्रहीतुमुपचक्रमे।
अर्जुनस्य सुतं वीरमिरावन्तं यशस्विनम्॥ ७०॥

फरसेसे बारंबार छिदनेके कारण राक्षसके शरीरसे बहुत-सा रक्त बह गया। इससे राक्षस ऋष्यशृंगके बलवान् पुत्र अलम्बुषने समरभूमिमें अत्यन्त क्रोध और वेग प्रकट किया। उसने युद्धस्थलमें अपने शत्रुको प्रबल

हुआ देख अत्यन्त भयंकर एवं विशाल रूप धारण करके अर्जुनके वीर एवं यशस्वी पुत्र इरावान्‌को कैद करनेका प्रयत्न आरम्भ किया॥ ६८—७०॥

संग्रामशिरसो मध्ये सर्वेषां तत्र पश्यताम्।
तां दृष्ट्वा तादृशीं मायां राक्षसस्य दुरात्मनः॥ ७१॥
इरावानपि संक्रुद्धो मायां स्रष्टुं प्रचक्रमे।

युद्धके मुहानेपर समस्त योद्धाओंके देखते-देखते वह इरावान्‌को पकड़ना चाहता था। उस दुरात्मा राक्षसकी वैसी माया देखकर क्रोधमें भरे हुए इरावान्‌ने भी मायाका प्रयोग आरम्भ किया॥ ७१ ½॥

तस्य क्रोधाभिभूतस्य समरेष्वनिवर्तिनः॥ ७२॥
योऽन्वयो मातृकस्तस्य स एनमभिपेदिवान्।

संग्राममें पीठ न दिखानेवाला इरावान् जब क्रोधमें भरकर युद्ध कर रहा था, उसी समय उसके मातृकुलके नागोंका समुदाय उसकी सहायताके लिये वहाँ आ पहुँचा॥ ७२ ½॥

स नागैर्बहुभी राजन्निरावान् संवृतो रणे॥ ७३॥
दधार सुमहद् रूपमनन्त इव भोगवान्।

राजन्! रणभूमिमें बहुतेरे नागोंसे घिरे हुए इरावान्‌ने विशाल शरीरवाले शेषनागकी भाँति बहुत बड़ा रूप धारण कर लिया॥ ७३ ½॥

ततो बहुविधैर्नागैश्छादयामास राक्षसम्॥ ७४॥
छाद्यमानस्तु नागैः स ध्यात्वा राक्षसपुङ्गवः।
सौपर्णं रूपमास्थाय भक्षयामास पन्नगान्॥ ७५॥

तदनन्तर उसने बहुत-से नागोंद्वारा राक्षसको आच्छादित कर दिया। नागोंद्वारा आच्छादित होनेपर उस राक्षसराजने कुछ सोच-विचारकर गरुड़का रूप धारण कर लिया और समस्त नागोंको भक्षण करना आरम्भ किया॥ ७४-७५॥

मायया भक्षिते तस्मिन्नन्वये तस्य मातृके।
विमोहितमिरावन्त न्यहनद् राक्षसोऽसिना॥ ७६॥

जब उस राक्षसने इरावान्‌के मातृकुलके सब नागोंको भक्षण कर लिया, तब मोहित हुए इरावान्‌को तलवारसे मार डाला॥ ७६॥

सकुण्डलं समुकुटं पद्मेन्दुसदृशप्रभम्।
इरावतः शिरो रक्षः पातयामास भूतले॥ ७७॥

इरावान्‌के कमल और चन्द्रमाके समान कान्तिमान् तथा कुण्डल एवं मुकुटसे मण्डित मस्तकको काटकर राक्षसने धरतीपर गिरा दिया॥ ७७॥

तस्मिंस्तु विहते वीरे राक्षसेनार्जुनात्मजे।
विशोकाः समपद्यन्त धार्तराष्ट्राः सराजकाः॥ ७८॥

इस प्रकार राक्षसद्वारा अर्जुनके वीर पुत्र इरावान्‌के मारे जानेपर राजा दुर्योधनसहित आपके सभी पुत्र शोकरहित हो गये॥ ७८॥

तस्मिन् महति संग्रामे तादृशे भैरवे पुनः।
महान् व्यतिकरो घोरः सेनयोः समपद्यत॥ ७९॥

फिर तो उस भयंकर एवं महान् संग्राममें दोनों सेनाओंका अत्यन्त भयंकर सम्मिश्रण हो गया॥ ७९॥

गजा हयाः पदाताश्च विमिश्रा दन्तिभिर्हताः।
रथाश्वा दन्तिनश्चैव पत्तिभिस्तत्र सूदिताः॥ ८०॥
तथा पत्तिरथौघाश्च हयाश्च बहवो रणे।
रथिभिर्निहता राजंस्तव तेषां च संकुले॥ ८१॥

राजन्! आपके और पाण्डवोंके सैनिकोंके उस संकुल युद्धमें दोनों पक्षोंके मिले हुए हाथी, घोड़े और पैदल दन्तार हाथियोंद्वारा मारे गये। रथ, घोड़े और हाथियोंको पैदल योद्धाओंने मार गिराया तथा बहुत-से पैदल, रथियोंके समूह और घुड़सवार रथी योद्धाओंके द्वारा मार डाले गये॥ ८०-८१॥

अजानन्नर्जुनश्चापि निहतं पुत्रमौरसम्।
जघान समरे शूरान् राज्ञस्तान् भीष्मरक्षिणः॥ ८२॥

अर्जुनको अपने औरस पुत्र इरावान्‌के मारे जानेका पता नहीं लगा था। वे समरांगणमें भीष्मकी रक्षा करनेवाले शूरवीर नरेशोंका संहार कर रहे थे॥ ८२॥

तथैव तावका राजन् सृंजयाश्च सहस्रशः।
जुह्वतः समरे प्राणान् निजघ्नुरितरेतरम्॥ ८३॥

राजन्! इसी प्रकार आपके पुत्र और सैनिक तथा सहस्रों सृंजय वीर समराग्निमें प्राणोंकी आहुति देते हुए एक-दूसरेको मार रहे थे॥ ८३॥

मुक्तकेशा विकवचा विरथाश्छिन्नकार्मुकाः।
बाहुभिः समयुध्यन्त समवेताः परस्परम्॥ ८४॥

कवच, रथ और धनुषके नष्ट हो जानेपर बाल बिखेरे हुए बहुतेरे योद्धा परस्पर भिड़कर भुजाओंद्वारा मल्लयुद्ध करने लगे॥ ८४॥

तथा मर्मातिगैर्भीष्मो निजघान महारथान्।
कम्पयन् समरे सेनां पाण्डवानां परंतपः॥ ८५॥

दूसरी ओर शत्रुओंको संताप देनेवाले भीष्म समरांगणमें अपने मर्मभेदी बाणोंद्वारा पाण्डव-सेनाको कम्पित करते हुए उसके बड़े-बड़े रथियोंको मार रहे थे॥ ८५॥

तेन यौधिष्ठिरे सैन्ये बहवो मानवा हताः।
दन्तिनः सादिनश्चैव रथिनोऽथ हयास्तथा॥ ८६॥

उन्होंने युधिष्ठिरकी सेनाके बहुत-से पैदलों, सवारोंसहित हाथियों, रथारोहियों और घुड़सवारोंको मार डाला॥ ८६॥

तत्र भारत भीष्मस्य रणे दृष्ट्वा पराक्रमम्।
अत्यद्भुतमपश्याम शक्रस्येव पराक्रमम्॥ ८७॥

भारत! हमने उस युद्धमें भीष्मका इन्द्रके समान अत्यन्त अद्भुत पराक्रम देखा था॥ ८७॥

तथैव भीमसेनस्य पार्षतस्य च भारत।
रौद्रमासीद् रणे युद्धं सात्यकस्य च धन्विनः॥ ८८॥

भरतनन्दन! इसी प्रकार उस रणक्षेत्रमें भीमसेन, धृष्टद्युम्न तथा धनुर्धर सात्यकिका भयानक युद्ध चल रहा था॥ ८८॥

दृष्ट्वा द्रोणस्य विक्रान्तं पाण्डवान् भयमाविशत्।
एक एव रणे शक्तो निहन्तुं सर्वसैनिकान्॥ ८९॥
किं पुनः पृथिवीशूरैर्योधव्रातैः समावृतः।
इत्यब्रुवन् महाराज रणे द्रोणेन पीडिताः॥ ९०॥

द्रोणाचार्यका पराक्रम देखकर तो पाण्डवोंके मनमें भय समा गया। महाराज! वे युद्धस्थलमें द्रोणाचार्यसे पीड़ित होकर कहने लगे कि 'रणभूमिमें अकेले द्रोणाचार्य ही समस्त सैनिकोंको मार डालनेकी शक्ति रखते हैं। फिर जब ये भूमण्डलके सुविख्यात शूरवीर योद्धाओंके समुदायोंसे घिरे हुए हैं, तब तो इनकी विजयके लिये कहना ही क्या है?'॥ ८९-९०॥

वर्तमाने तथा रौद्रे संग्रामे भरतर्षभ।
उभयोः सेनयोः शूरा नामृष्यन्त परस्परम्॥ ९१॥

भरतश्रेष्ठ! उस भयंकर संग्राममें दोनों सेनाओंके शूरवीर एक-दूसरेका उत्कर्ष नहीं सह सके॥ ९१॥

आविष्टा इव युध्यन्ते रक्षोभूता महाबलाः।
तावकाः पाण्डवेयाश्च संरब्धास्तात धन्विनः॥ ९२॥

तात! आपके और पाण्डवपक्षके महाबली धनुर्धर वीर भूतोंसे आविष्ट-से होकर राक्षसोंके समान बनकर क्रोधपूर्वक एक-दूसरेसे जूझ रहे थे॥ ९२॥

न स्म पश्यामहे कंचित् प्राणान् यः परिरक्षति।
संग्रामे दैत्यसंकाशे तस्मिन् वीरवरक्षये॥ ९३॥

बड़े-बड़े वीरोंका विनाश करनेवाले उस दैत्योंके तुल्य संग्राममें हमने किसीको ऐसा नहीं देखा जो अपने प्राणोंकी रक्षा कर रहा हो॥ ९३॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि इरावद्वधे नवतितमोऽध्यायः॥ ९०॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें इरावान्‌का वधविषयक नब्बेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९०॥

एकनवतितमोऽध्यायः

घटोत्कच और दुर्योधनका भयानक युद्ध

धृतराष्ट्र उवाच

इरावन्तं तु निहतं दृष्ट्वा पार्था महारथाः।
संग्रामे किमकुर्वन्त तन्ममाचक्ष्व संजय॥ १॥

धृतराष्ट्रने पूछा—संजय! इरावान्‌को संग्राममें मारा गया देख महारथी कुन्तीपुत्रोंने क्या किया? यह मुझसे कहो॥ १॥

संजय उवाच

इरावन्तं तु निहतं संग्रामे वीक्ष्य राक्षसः।
व्यनदत् सुमहानादं भैमसेनिर्घटोत्कचः॥ २॥

संजय बोले—राजन्! इरावान्‌को युद्धभूमिमें मारा गया देख भीमसेनका पुत्र राक्षस घटोत्कच बड़े जोरसे सिंहनाद करने लगा॥ २॥

नदतस्तस्य शब्देन पृथिवी सागराम्बरा।
सपर्वतवना राजंश्चचाल सुभृशं तदा॥ ३॥
अन्तरिक्षं दिशश्चैव सर्वाश्च प्रदिशस्तथा।

नरेश्वर! उस राक्षसकी गर्जनासे समुद्र, आकाश, पर्वत और वनोंसहित यह सारी पृथ्वी जोर-जोरसे हिलने लगी। अन्तरिक्ष, दिशाएँ तथा समस्त कोणोंके प्रदेश भी काँपने लगे॥ ३½॥

तं श्रुत्वा सुमहानादं तव सैन्यस्य भारत॥ ४॥
ऊरुस्तम्भः समभवद् वेपथुः स्वेद एव च।

भारत! घटोत्कचका महान् सिंहनाद सुनकर आपके सैनिकोंकी जाँघें अकड़ गयीं, शरीर काँपने लगा और सम्पूर्ण अंगोंसे पसीना निकलने लगा॥ ४½॥

सर्व एव महाराज तावका दीनचेतसः॥ ५॥
सर्वतः समचेष्टन्त सिंहभीता गजा इव।

महाराज! आपके सभी सैनिक सब ओरसे दीन-चित्त हो सिंहसे डरे हुए हाथियोंकी भाँति भयपूर्ण चेष्टाएँ करने लगे॥ ५½॥

नर्दित्वा सुमहानादं निर्घातमिव राक्षसः॥ ६॥
ज्वलितं शूलमुद्यम्य रूपं कृत्वा विभीषणम्।
नानारूपप्रहरणैर्वृतो राक्षसपुङ्गवैः॥ ७॥
आजघान सुसंक्रुद्धः कालान्तकयमोपमः।

वज्रकी गड़गड़ाहटके समान भयंकर गर्जना करके

काल, अन्तक और यमके समान क्रोधमें भरे हुए उस राक्षसने भीषणरूप बना प्रज्वलित त्रिशूल हाथमें ले भाँति-भाँतिके अस्त्र-शस्त्रोंसे सम्पन्न बड़े-बड़े राक्षसोंके साथ आकर आपकी सेनाका संहार आरम्भ किया॥ ६-७½॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य संक्रुद्धं भीमदर्शनम्॥ ८॥
स्वबलं च भयात् तस्य प्रायशो विमुखीकृतम्।

अत्यन्त क्रोधमें भरे भयंकर दिखायी देनेवाले उस राक्षसको आक्रमण करते देख उसके भयसे अपनी सेना प्रायः युद्धसे विमुख होकर भाग चली॥ ८½॥

ततो दुर्योधनो राजा घटोत्कचमुपाद्रवत्॥ ९॥
प्रगृह्य विपुलं चापं सिंहवद् विनदन् मुहुः।

तब राजा दुर्योधनने विशाल धनुष लेकर बारंबार सिंहके समान गर्जना करते हुए वहाँ घटोत्कचपर धावा किया॥ ९½॥

पृष्ठतोऽनुययौ चैनं स्रवद्भिः पर्वतोपमैः॥ १०॥
कुञ्जरैर्दशसाहस्रैर्वङ्गानामधिपः स्वयम्।

उसके पीछे मदकी धारा बहानेवाले पर्वताकार दस हजार गजराजोंकी सेना लिये स्वयं वंगदेशका राजा भी गया॥ १०½॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य गजानीकेन संवृतम्॥ ११॥
पुत्रं तव महाराज चुकोप स निशाचरः।

महाराज! हाथियोंकी सेनासे घिरे हुए आपके पुत्र दुर्योधनको आते हुए देख वह निशाचर कुपित हो उठा॥ ११½॥

ततः प्रववृते युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम्॥ १२॥
राक्षसानां च राजेन्द्र दुर्योधनबलस्य च।

राजेन्द्र! फिर तो दुर्योधनकी सेना तथा राक्षसोंमें भयंकर एवं रोमांचकारी युद्ध होने लगा॥ १२½॥

गजानीकं च सम्प्रेक्ष्य मेघवृन्दमिवोदितम्॥ १३॥
अभ्यधावन्त संक्रुद्धा राक्षसाः शस्त्रपाणयः।

घिरी हुई मेघोंकी घटाके समान हाथियोंकी सेनाको देखकर क्रोधमें भरे हुए राक्षस हाथमें अस्त्र-शस्त्र लिये उसकी ओर दौड़े॥ १३½॥

नदन्तो विविधान् नादान् मेघा इव सविद्युतः॥ १४॥
शरशक्त्यृष्टिनाराचैर्निघ्नन्तो गजयोधिनः।
भिन्दिपालैस्तथा शूलैर्मुद्गरैः सपरश्वधैः॥ १५॥
पर्वताग्रैश्च वृक्षैश्च निजघ्नुस्ते महागजान्।

वे भाँति-भाँतिकी गर्जना करते हुए बिजलीसहित मेघोंके समान शोभा पाते थे। बाण, शक्ति, ऋष्टि, नाराच, भिन्दिपाल, शूल, मुद्गर, फरसों, पर्वतशिखर तथा वृक्षोंका प्रहार करके वे गजारोहियों तथा विशाल गजोंका वध करने लगे॥ १४-१५½॥

भिन्नकुम्भान् विरुधिरान् भिन्नगात्रांश्च वारणान्॥ १६॥
अपश्याम महाराज वध्यमानान् निशाचरैः।

महाराज! निशाचरोंद्वारा मारे जानेवाले गजराजोंको हमने देखा था। उनके कुम्भस्थल फट गये थे, शरीर रक्तहीन हो गये और उनके भिन्न-भिन्न अंग छिन्न-भिन्न हो गये थे॥ १६½॥

तेषु प्रक्षीयमाणेषु भग्नेषु गजयोधिषु॥ १७॥
दुर्योधनो महाराज राक्षसान् समुपाद्रवत्।
अमर्षवशमापन्नस्त्यक्त्वा जीवितमात्मनः॥ १८॥

महाराज! इस प्रकार गजारोहियोंके भग्न एवं नष्ट हो जानेपर दुर्योधनने अमर्षके वशीभूत हो अपने जीवनका मोह छोड़कर उन राक्षसोंपर धावा किया॥ १७-१८॥

मुमोच निशितान् बाणान् राक्षसेषु परंतप।
जघान च महेष्वासः प्रधानांस्तत्र राक्षसान्॥ १९॥

शत्रुओंको संताप देनेवाले नरेश! महाधनुर्धर दुर्योधनने राक्षसोंपर तीखे बाणोंका प्रहार किया और उनमेंसे प्रधान-प्रधान राक्षसोंको मार डाला॥ १९॥

संक्रुद्धो भरतश्रेष्ठ पुत्रो दुर्योधनस्तव।
वेगवन्तं महारौद्रं विद्युज्जिह्वं प्रमाथिनम्॥ २०॥
शरैश्चतुर्भिश्चतुरो निजघान महाबलः।

भरतश्रेष्ठ! क्रोधमें भरे हुए आपके महाबली पुत्र दुर्योधनने वेगवान्, महारौद्र, विद्युज्जिह्व और प्रमाथी—इन चार राक्षसोंको चार बाणोंसे मार डाला॥ २०½॥

ततः पुनरमेयात्मा शरवर्षं दुरासदम्॥ २१॥
मुमोच भरतश्रेष्ठो निशाचरबलं प्रति।

तत्पश्चात् अमेय आत्मबलसे सम्पन्न भरतश्रेष्ठ दुर्योधनने उस निशाचरसेनाके ऊपर दुर्धर्ष बाणोंकी वर्षा आरम्भ की॥ २१½॥

तत् तु दृष्ट्वा महत् कर्म पुत्रस्य तव मारिष॥ २२॥
क्रोधेनाभिप्रजज्वाल भैमसेनिर्महाबलः।

आर्य! आपके पुत्रका वह महान् कर्म देखकर भीमसेनका महाबली पुत्र घटोत्कच क्रोधसे जल उठा॥

स विस्फार्य महच्चापमिन्द्राशनिसमप्रभम्॥ २३॥
अभिदुद्राव वेगेन दुर्योधनमरिंदमम्।

उसने इन्द्रके वज्रके समान कान्तिमान् विशाल धनुषको खींचकर शत्रुदमन दुर्योधनपर बड़े वेगसे धावा किया॥

तमापतन्तमुद्वीक्ष्य कालसृष्टमिवान्तकम्॥ २४॥
न विव्यथे महाराज पुत्रो दुर्योधनस्तव।

महाराज! कालप्रेरित मृत्युके समान उस घटोत्कचको आते देख आपका पुत्र दुर्योधन तनिक

भी व्यथित नहीं हुआ॥ २४½ ॥

अथैनमब्रवीत् क्रुद्धः क्रूरः संरक्तलोचनः॥ २५॥
अद्यानृण्यं गमिष्यामि पितॄणां मातुरेव च।
ये त्वया सुनृशंसेन दीर्घकालं प्रवासिताः॥ २६॥
यच्च ते पाण्डवा राजंश्छलद्यूते पराजिताः।
यच्चैव द्रौपदी कृष्णा एकवस्त्रा रजस्वला॥ २७॥
सभामानीय दुर्बुद्धे बहुधा क्लेशिता त्वया।
तव च प्रियकामेन आश्रमस्था दुरात्मना॥ २८॥
सैन्धवेन परामृष्टा परिभूय पितॄन् मम।
एतेषामपमानानामन्येषां च कुलाधम॥ २९॥
अन्तमद्य गमिष्यामि यदि नोत्सृजसे रणम्।

तदनन्तर क्रूर घटोत्कच क्रोधसे लाल आँखें करके दुर्योधनसे बोला—'ओ दुष्ट! आज मैं अपने उन पितरों और माताके ऋणसे उऋण हो जाऊँगा, जिन्हें तूने दीर्घकालतक वनमें रहनेके लिये विवश कर दिया था। तू बड़ा क्रूर है। दुर्बुद्धि नरेश! तूने जो पाण्डवोंको द्यूतमें छलपूर्वक हराया था और जो एक ही वस्त्र धारण करनेवाली द्रुपदकुमारी कृष्णाको रजस्वला-अवस्थामें सभाके भीतर ले जाकर नाना प्रकारके क्लेश दिये थे तथा तेरा ही प्रिय करनेकी इच्छावाले दुरात्मा सिन्धुराजने मेरे पितरोंकी अवहेलना करके आश्रममें रहनेवाली द्रौपदीका अपहरण किया था, कुलाधम! यदि तू युद्ध छोड़कर भाग नहीं जायगा तो इन अपमानोंका और अन्य सब अत्याचारोंका भी आज मैं बदला चुका लूँगा'॥ २५—२९½ ॥

एवमुक्त्वा तु हैडिम्बो महद् विस्फार्य कार्मुकम्॥ ३०॥
संदश्य दशनैरोष्ठं सृक्किणी परिसंलिहन्।
शरवर्षेण महता दुर्योधनमवाकिरत्।
पर्वतं वारिधाराभिः प्रावृषीव बलाहकः॥ ३१॥

ऐसा कहकर हिडिम्बाकुमारने दाँतोंसे ओठ चबाते और जीभसे मुँहके कोनोंको चाटते हुए अपने विशाल धनुषको खींचकर दुर्योधनपर बाणोंकी बड़ी भारी वृष्टि की। ठीक उसी तरह,जैसे वर्षा-ऋतुमें मेघ पर्वतके शिखरपर जलकी धाराएँ गिराता है॥ ३०-३१॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि हैडिम्बयुद्धे एकनवतितमोऽध्यायः॥ ९१॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें घटोत्कच-युद्धविषयक इक्यानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९१॥

द्विनवतितमोऽध्यायः

घटोत्कचका दुर्योधन एवं द्रोण आदि प्रमुख वीरोंके साथ भयंकर युद्ध

संजय उवाच

ततस्तद् बाणवर्षं तु दुःसहं दानवैरपि।
दधार युधि राजेन्द्रो यथा वर्षं महाद्विपः॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! दानवोंके लिये भी दुःसह उस बाण-वर्षाको राजाधिराज दुर्योधनने युद्धमें उसी प्रकार धारण किया, जैसे महान् गजराज जलकी वर्षाको अपने ऊपर धारण करता है॥ १॥

ततः क्रोधसमाविष्टो निःश्वसन्निव पन्नगः।
संशयं परमं प्राप्तः पुत्रस्ते भरतर्षभ॥ २॥

भरतश्रेष्ठ! उस समय क्रोधमें भरकर फुफकारते हुए सर्पके समान लंबी साँस खींचता हुआ आपका पुत्र दुर्योधन जीवन-रक्षाको लेकर भारी संशयमें पड़ गया॥ २॥

मुमोच निशितांस्तीक्ष्णान् नाराचान् पञ्चविंशतिम्।
तेऽपतन् सहसा राजंस्तस्मिन् राक्षसपुङ्गवे॥ ३॥
आशीविषा इव क्रुद्धाः पर्वते गन्धमादने।

उसने अत्यन्त तीखे पचीस नाराच छोड़े। महाराज! वे सब सहसा उस राक्षसराज घटोत्कचपर जाकर गिरे, मानो गन्धमादन पर्वतपर क्रोधमें भरे हुए विषधर सर्प कहींसे आ पड़े हों॥ ३½ ॥

स तैर्विद्धः स्रवन् रक्तं प्रभिन्न इव कुञ्जरः॥ ४॥
दध्रे मतिं विनाशाय राज्ञः स पिशिताशनः।

उन बाणोंसे घायल होकर वह राक्षस कुम्भ-स्थलसे मदकी धारा बहानेवाले गजराजकी भाँति अपने शरीरसे रक्तकी धारा प्रवाहित करने लगा। उसने राजा दुर्योधनका विनाश करनेके लिये दृढ़ निश्चय कर लिया॥ ४½ ॥

जग्राह च महाशक्तिं गिरीणामपि दारिणीम्॥ ५॥
सम्प्रदीप्तां महोल्काभामशनिं ज्वलितामिव।

तत्पश्चात् उसने पर्वतोंको भी विदीर्ण कर डालनेवाली प्रज्वलित उल्का एवं वज्रके समान प्रकाशित होनेवाली एक महाशक्ति हाथमें ली॥ ५½ ॥

समुद्यच्छन् महाबाहुर्जिघांसुस्तनयं तव॥ ६॥
तामुद्यतामभिप्रेक्ष्य वङ्गानामधिपस्त्वरन्।
कुञ्जरं गिरिसंकाशं राक्षसं प्रत्यचोदयत्॥ ७॥

महाबाहु घटोत्कच आपके पुत्रको मार डालनेकी इच्छासे वह शक्ति ऊपरको उठा रहा था। उसे उठी हुई देख वंगदेशके राजाने बड़ी उतावलीके साथ अपने पर्वताकार गजराजको उस राक्षसकी ओर बढ़ाया॥

स नागप्रवरेणाजौ बलिना शीघ्रगामिना।
यतो दुर्योधनरथस्तं मार्गं प्रत्यवर्तत॥ ८॥

वे वंगनरेश उस शीघ्रगामी महाबली गजराजपर आरूढ़ हो युद्धके मैदानमें उसी मार्गपर चले जहाँ दुर्योधनका रथ खड़ा था॥ ८॥

रथं च वारयामास कुञ्जरेण सुतस्य ते।
मार्गमावारितं दृष्ट्वा राज्ञा वङ्गेन धीमता॥ ९॥
घटोत्कचो महाराज क्रोधसंरक्तलोचनः।

उन्होंने अपने हाथीके द्वारा आपके पुत्रका मार्ग रोक दिया। महाराज! बुद्धिमान् वंगनरेशके द्वारा दुर्योधनके रथका मार्ग रुका हुआ देख घटोत्कचके नेत्र क्रोधसे लाल हो गये॥ ९½॥

उद्यतां तां महाशक्तिं तस्मिंश्चिक्षेप वारणे॥ १०॥
स तयाभिहतो राजंस्तेन बाहुप्रमुक्तया।
संजातरुधिरोत्पीडः पपात च ममार च॥ ११॥

उसने उस उठायी हुई महाशक्तिको उस हाथीपर ही चला दिया। राजन्! घटोत्कचकी भुजाओंसे छूटी हुई उस शक्तिके आघातसे हाथीका कुम्भस्थल फट गया और उससे रक्तका स्रोत बहने लगा। फिर वह तत्काल ही भूमिपर गिरा और मर गया॥ १०-११॥

पतत्यथ गजे चापि वङ्गानामीश्वरो बली।
जवेन समभिद्रुत्य जगाम धरणीतलम्॥ १२॥

हाथीके गिरते समय बलवान् वंगनरेश उसकी पीठसे वेगपूर्वक कूदकर धरतीपर आ गये॥ १२॥

दुर्योधनोऽपि सम्प्रेक्ष्य पतितं वरवारणम्।
प्रभग्नं च बलं दृष्ट्वा जगाम परमां व्यथाम्॥ १३॥

उस श्रेष्ठ गजराजको गिरा हुआ देख सारी कौरवसेना भाग खड़ी हुई। यह सब देखकर दुर्योधनके मनमें बड़ी व्यथा हुई॥ १३॥

(अशक्तः प्रतियोद्धुं वै दृष्ट्वा तस्य पराक्रमम्।)
क्षत्रधर्मं पुरस्कृत्य आत्मनश्चाभिमानिताम्।
प्राप्तेऽपक्रमणे राजा तस्थौ गिरिरिवाचलः॥ १४॥

वह घटोत्कचके पराक्रमपर दृष्टिपात करके उसका सामना करनेमें असमर्थ हो गया। क्षत्रियधर्म तथा अपने अभिमानको सामने रखकर पलायनका अवसर प्राप्त होनेपर भी राजा दुर्योधन पर्वतकी भाँति अविचलभावसे खड़ा रहा॥ १४॥

संधाय च शितं बाणं कालाग्निसमतेजसम्।
मुमोच परमक्रुद्धस्तस्मिन् घोरे निशाचरे॥ १५॥

तत्पश्चात् उसने प्रलयकालकी अग्निके समान तेजस्वी एवं तीखे बाणको धनुषपर रखकर उसे अत्यन्त क्रोधपूर्वक उस घोर निशाचरपर छोड़ दिया॥ १५॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य बाणमिन्द्राशनिप्रभम्।
लाघवान्मोचयामास महात्मा वै घटोत्कचः॥ १६॥

इन्द्रके वज्रके समान प्रकाशित होनेवाले उस बाणको अपनी ओर आता देख महामना राक्षस घटोत्कचने अपनी फुर्तीके कारण अपने-आपको उससे बचा लिया॥ १६॥

भूयश्च विननादोग्रं क्रोधसंरक्तलोचनः।
त्रासयामास सैन्यानि युगान्ते जलदो यथा॥ १७॥

इसके बाद क्रोधसे आँखें लाल करके वह पुनः भयंकर गर्जना करने लगा। जैसे प्रलयकालमें संवर्तक मेघकी गर्जना होती है, वैसी ही गर्जना करके उसने सारी कौरवसेनाको दहला दिया॥ १७॥

तं श्रुत्वा निनदं घोरं तस्य भीमस्य रक्षसः।
आचार्यमुपसङ्गम्य भीष्मः शान्तनवोऽब्रवीत्॥ १८॥
यथैष निनदो घोरः श्रूयते राक्षसेरितः।
हैडिम्बो युध्यते नूनं राज्ञा दुर्योधनेन ह॥ १९॥

उस भयानक राक्षसकी वह घोर गर्जना सुनकर शान्तनुनन्दन भीष्मने द्रोणाचार्यके पास जाकर इस प्रकार कहा—'आचार्य! यह राक्षसके मुखसे निकली हुई जैसी घोर गर्जना सुनायी दे रही है, उससे अनुमान होता है कि अवश्य ही हिडिम्बाका पुत्र घटोत्कच राजा दुर्योधनके साथ जूझ रहा है॥ १८-१९॥

नैष शक्यो हि संग्रामे जेतुं भूतेन केनचित्।
तत्र गच्छत भद्रं वो राजानं परिरक्षत॥ २०॥

'इसे कोई भी प्राणी संग्राममें जीत नहीं सकता, अतः आपका कल्याण हो, वहाँ जाइये और राजा दुर्योधनकी रक्षा कीजिये॥ २०॥

अभिद्रुतो महाभागो राक्षसेन महात्मना।
एतद्धि वः परं कृत्यं सर्वेषां नः परंतपाः॥ २१॥

'जान पड़ता है महाभाग दुर्योधन उस महाकाय राक्षसके आक्रमणका शिकार हो रहा है। शत्रुओंको संताप देनेवाले वीरो! आपके तथा हम सब लोगोंके लिये यही सर्वोत्तम कृत्य है'॥ २१॥

पितामहवचः श्रुत्वा त्वरमाणा महारथाः।
उत्तमं जवमास्थाय प्रययुर्यत्र कौरवः॥ २२॥

भीष्मकी यह बात सुनकर सब महारथी उत्तम वेगका आश्रय ले बड़ी उतावलीके साथ उस स्थानपर

गये, जहाँ कुरुराज दुर्योधन मौजूद था॥ २२॥

द्रोणश्च सोमदत्तश्च बाह्लीकोऽथ जयद्रथः।
कृपो भूरिश्रवाः शल्य आवन्त्यः सबृहद्बलः॥ २३॥
अश्वत्थामा विकर्णश्च चित्रसेनो विविंशतिः।
रथाश्चानेकसाहस्रा ये तेषामनुयायिनः॥ २४॥
अभिद्रुतं परीप्सन्तः पुत्रं दुर्योधनं तव।
तदनीकमनाधृष्यं पालितं तु महारथैः॥ २५॥

द्रोणाचार्य, सोमदत्त, बाह्लीक, जयद्रथ, कृपाचार्य, भूरिश्रवा, शल्य, अवन्तीका राजकुमार, बृहद्बल, अश्वत्थामा, विकर्ण, चित्रसेन, विविंशति तथा उनके अनुयायी अनेक सहस्र रथी—ये सब लोग राक्षसके द्वारा आक्रान्त हुए आपके पुत्र दुर्योधनकी रक्षा करनेके लिये गये। उन महारथियोंसे पालित होकर वह सेना अजेय हो गयी॥ २३—२५॥

आततायिनमायान्तं प्रेक्ष्य राक्षससत्तमः।
नाकम्पत महाबाहुर्मैनाक इव पर्वतः॥ २६॥

युद्धमें आततायी दुर्योधनको आते देख राक्षसशिरोमणि महाबाहु घटोत्कच मैनाक पर्वतकी भाँति अविचलभावसे खड़ा रहा॥ २६॥

प्रगृह्य विपुलं चापं ज्ञातिभिः परिवारितः।
शूलमुद्गरहस्तैश्च नानाप्रहरणैरपि॥ २७॥

उसके जाति-बन्धु हाथोंमें शूल, मुद्गर आदि नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्र लेकर उसे सब ओरसे घेरे हुए थे और उसने एक विशाल धनुष ले रखा था॥ २७॥

ततः समभवद् युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम्।
राक्षसानां च मुख्यस्य दुर्योधनबलस्य च॥ २८॥

तदनन्तर राक्षसशिरोमणि घटोत्कच तथा दुर्योधनकी सेनामें रोमांचकारी एवं भयंकर युद्ध होने लगा॥ २८॥

धनुषां कूजतां शब्दः सर्वतस्तुमुलो रणे।
अश्रूयत महाराज वंशानां दह्यतामिव॥ २९॥

महाराज! रणभूमिमें सब ओर बाँसोंके दग्ध होनेके समान धनुषोंकी टंकारका भयंकर शब्द सुनायी देने लगा॥ २९॥

अस्त्राणां पात्यमानानां कवचेषु शरीरिणाम्।
शब्दः समभवद् राजन् गिरीणामिव भिद्यताम्॥ ३०॥

राजन्! देहधारियोंके कवचोंपर पड़नेवाले अस्त्रोंका ऐसा शब्द होता था, मानो पर्वत विदीर्ण हो रहे हों॥ ३०॥

वीरबाहुविसृष्टानां तोमराणां विशाम्पते।
रूपमासीद् वियत्स्थानां सर्पाणामिव सर्पताम्॥ ३१॥

प्रजानाथ! वीरोंकी भुजाओंसे छोड़े गये तोमर जब आकाशमें आते, उस समय उनका स्वरूप तीव्र गतिसे उड़नेवाले सर्पोंके समान जान पड़ता था॥ ३१॥

ततः परमसंक्रुद्धो विस्फार्य सुमहद् धनुः।
राक्षसेन्द्रो महाबाहुर्विनदन् भैरवं रवम्॥ ३२॥
आचार्यस्यार्धचन्द्रेण क्रुद्धश्चिच्छेद कार्मुकम्।
सोमदत्तस्य भल्लेन ध्वजं चोन्मथ्य चानदत्॥ ३३॥

तदनन्तर महाबाहु राक्षसराज घटोत्कचने अत्यन्त क्रुद्ध हो भैरव गर्जना करते हुए अपने विशाल धनुषको खींचकर अर्धचन्द्राकार बाणसे द्रोणाचार्यके धनुषको काट डाला। फिर एक भल्लके द्वारा सोमदत्तके ध्वजको खण्डित करके सिंहनाद किया॥ ३२-३३॥

बाह्लीकं च त्रिभिर्बाणैः प्रत्यविध्यत् स्तनान्तरे।
कृपमेकेन विव्याध चित्रसेनं त्रिभिः शरैः॥ ३४॥

तत्पश्चात् तीन बाणोंसे बाह्लीककी छातीमें गहरी चोट पहुँचायी। एक बाणसे कृपाचार्यको और तीनसे चित्रसेनको भी बींध डाला॥ ३४॥

पूर्णायतविसृष्टेन सम्यक् प्रणिहितेन च।
जत्रुदेशे समासाद्य विकर्णं समताडयत्॥ ३५॥

इसके बाद उसने धनुषको पूर्णरूपसे खींचकर उसपर उत्तम रीतिसे बाणोंका संधान करके विकर्णके गलेकी हँसलीमें गहरी चोट पहुँचायी॥ ३५॥

न्यषीदत् स्वरथोपस्थे शोणितेन परिप्लुतः।
ततः पुनरमेयात्मा नाराचान् दश पञ्च च॥ ३६॥
भूरिश्रवसि संक्रुद्धः प्राहिणोद् भरतर्षभ।

इससे विकर्ण अपने रथके पिछले भागमें व्याकुल होकर बैठ गया, उसका सारा शरीर रक्तसे नहा उठा था। भरतश्रेष्ठ! तत्पश्चात् अमेय आत्मबलसे सम्पन्न घटोत्कचने क्रुद्ध होकर भूरिश्रवापर पंद्रह नाराच चलाये॥ ३६½॥

ते वर्म भित्त्वा तस्याशु विविशुर्धरणीतलम्॥ ३७॥
विविंशतेश्च द्रौणेश्च यन्तारौ समताडयत्।
तौ पेततू रथोपस्थे रश्मीनुत्सृज्य वाजिनाम्॥ ३८॥

वे नाराच उसके कवचको छिन्न-भिन्न करके शीघ्र ही धरतीमें समा गये। साथ ही घटोत्कचने विविंशति और अश्वत्थामाके सारथियोंपर गहरा आघात किया। वे दोनों घोड़ोंकी बागडोर छोड़कर रथकी बैठकमें गिर पड़े॥ ३७-३८॥

सिंधुराज्ञोऽर्धचन्द्रेण वाराहं स्वर्णभूषितम्।
उन्ममाथ महाराज द्वितीयेनाच्छिनद् धनुः॥ ३९॥

महाराज! उसने एक अर्धचन्द्राकार बाणसे सिन्धुराज जयद्रथकी वाराहचिह्नसे युक्त सुवर्णभूषित ध्वजा काट डाली और दूसरे बाणसे उसके धनुषके दो टुकड़े कर दिये॥ ३९॥

चतुर्भिरथ नाराचैरावन्त्यस्य महात्मनः।
जघान चतुरो वाहान् क्रोधसंरक्तलोचनः॥ ४०॥

इसके बाद क्रोधसे लाल आँखें करके घटोत्कचने चार नाराचोंद्वारा महामना अवन्तीनरेशके चारों घोड़ोंको मार डाला॥ ४०॥

पूर्णायतविसृष्टेन पीतेन निशितेन च।
निर्बिभेद महाराज राजपुत्रं बृहद्बलम्॥ ४१॥

राजेन्द्र! तदनन्तर धनुषको पूर्णरूपसे खींचकर छोड़े गये पानीदार तीखे बाणसे उसने राजकुमार बृहद्बलको विदीर्ण कर दिया॥ ४१॥

स गाढविद्धो व्यथितो रथोपस्थ उपाविशत्।
भृशं क्रोधेन चाविष्टो रथस्थो राक्षसाधिपः॥ ४२॥

उस बाणसे वह गहराईतक बिंध गया और व्यथित होकर रथके पिछले भागमें जा बैठा। इधर राक्षसराज घटोत्कच अत्यन्त क्रोधसे आविष्ट हो रथपर बैठा रहा॥

चिक्षेप निशितांस्तीक्ष्णाञ्छरानाशीविषोपमान्।
बिभिदुस्ते महाराज शल्यं युद्धविशारदम्॥ ४३॥

महाराज! रथपर बैठे-ही-बैठे उसने विषधर सर्पोंके समान अत्यन्त तीखे बाण चलाये। उन बाणोंने युद्धविशारद राजा शल्यको पूर्णरूपसे घायल कर दिया॥ ४३॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि हैडिम्बयुद्धे द्विनवतितमोऽध्यायः॥ ९२॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें घटोत्कचका युद्धविषयक बानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९२॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका $\frac{1}{2}$ श्लोक मिलाकर कुल ४३$\frac{1}{2}$ श्लोक हैं]

त्रिनवतितमोऽध्यायः

घटोत्कचकी रक्षाके लिये आये हुए भीम आदि शूरवीरोंके साथ कौरवोंका युद्ध और उनका पलायन

संजय उवाच

विमुखीकृत्य सर्वांस्तु तावकान् युधि राक्षसः।
जिघांसुर्भरतश्रेष्ठ दुर्योधनमुपाद्रवत्॥ १॥

संजय कहते हैं—भरतश्रेष्ठ! वह राक्षस युद्धस्थलमें आपके समस्त सैनिकोंको संग्रामसे विमुख करके दुर्योधनको मार डालनेकी इच्छा रखकर उसकी ओर दौड़ा॥ १॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य राजानं प्रति वेगितम्।
अभ्यधावञ्जिघांसन्तस्तावका युद्धदुर्मदाः॥ २॥

उसे राजा दुर्योधनकी ओर बड़े वेगसे आते देख आपके रणदुर्मद पुत्र और सैनिक मार डालनेकी इच्छासे उसकी ओर दौड़े॥ २॥

तालमात्राणि चापानि विकर्षन्तो महारथाः।
तमेकमभ्यधावन्त नदन्तः सिंहसंघवत्॥ ३॥

उन सभी महारथियोंने चार-चार हाथके धनुष खींचते और सिंहोंके समुदायकी भाँति गर्जना करते हुए उस एकमात्र योद्धा घटोत्कचपर धावा किया॥ ३॥

अथैनं शरवर्षेण समन्तात् पर्यवाकिरन्।
पर्वतं वारिधाराभिः शरदीव बलाहकाः॥ ४॥

जैसे शरद्ऋतुमें बादल पर्वतके शिखरपर जलकी धाराएँ गिराते हैं, उसी प्रकार उन सब कौरव वीरोंने चारों ओरसे घटोत्कचपर बाणोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी॥

स गाढविद्धो व्यथितस्तोत्रार्दित इव द्विपः।
उत्पपात तदाऽऽकाशं समन्ताद् वैनतेयवत्॥ ५॥

उस समय उन बाणोंके गहरे आघातसे वह अंकुशकी मार खाये हुए हाथीकी भाँति व्यथित हो उठा और तुरंत ही गरुड़के समान आकाशमें सब ओर उड़ने लगा॥

व्यनदत् सुमहानादं जीमूत इव शारदः।
दिशः खं विदिशश्चैव नादयन् भैरवस्वनः॥ ६॥

आकाशमें स्थित होकर शरद्ऋतुके बादलकी भाँति वह अपने भयंकर स्वरसे अन्तरिक्ष, दिशाओं तथा विदिशाओंको गुँजाता हुआ जोर-जोरसे गर्जना करने लगा॥ ६॥

राक्षसस्य तु तं शब्दं श्रुत्वा राजा युधिष्ठिरः।
उवाच भरतश्रेष्ठ भीमसेनमरिंदमम्॥ ७॥

भरतश्रेष्ठ! राक्षस घटोत्कचकी उस गर्जनाको सुनकर राजा युधिष्ठिरने शत्रुदमन भीमसेनसे इस प्रकार कहा—॥ ७॥

युध्यते राक्षसो नूनं धार्तराष्ट्रैर्महारथैः।
यथास्य श्रूयते शब्दो नदतो भैरवं स्वनम्॥ ८॥

'राक्षस घटोत्कच कौरव महारथियोंसे निश्चय ही युद्ध कर रहा है। भैरवनाद करते हुए उस राक्षसका जैसा

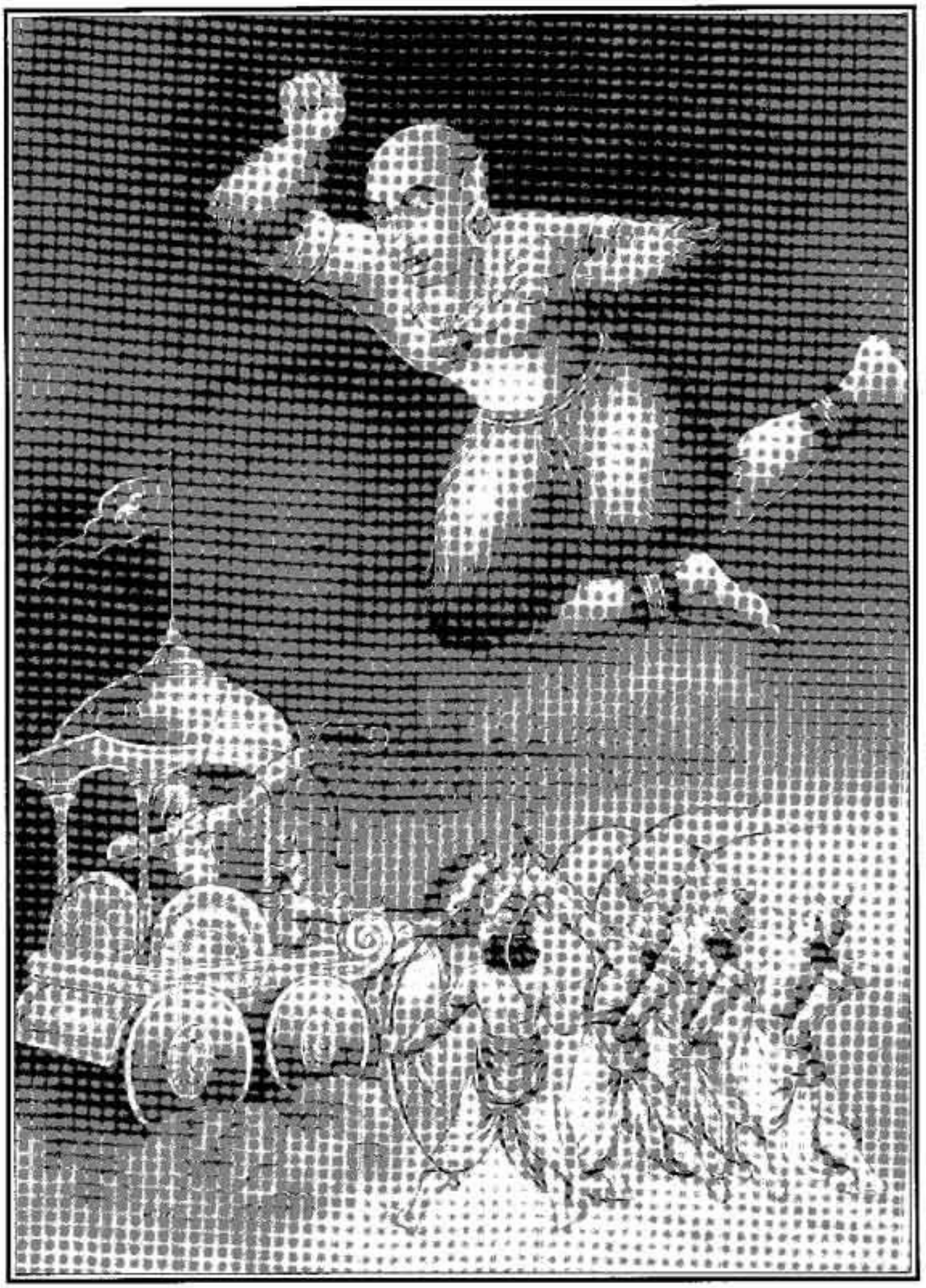

आकाशमें स्थित हुए घटोत्कचकी गर्जना और दुर्योधनके साथ उसका युद्ध

शब्द सुनायी देता है, उससे यही जान पड़ता है॥ ८॥

अतिभारं च पश्यामि तस्मिन् राक्षसपुङ्गवे।
पितामहश्च संक्रुद्धः पञ्चालान् हन्तुमुद्यतः॥ ९॥

'मैं उस राक्षसशिरोमणिपर बहुत बड़ा भार देख रहा हूँ। उधर पितामह भीष्म भी अत्यन्त क्रोधमें भरकर पांचालोंको मार डालनेके लिये उद्यत हैं॥ ९॥

तेषां च रक्षणार्थाय युध्यते फाल्गुनः परैः।
एतज्ज्ञात्वा महाबाहो कार्यद्वयमुपस्थितम्॥ १०॥
गच्छ रक्षस्व हैडिम्बं संशयं परमं गतम्।

'उनकी रक्षाके लिये अर्जुन शत्रुओंसे युद्ध करते हैं। महाबाहो! अपने ऊपर दो कार्य उपस्थित हैं, ऐसा जानकर तुम जाओ और अत्यन्त संशयमें पड़े हुए हिडिम्बाकुमारकी रक्षा करो'॥ १०½॥

भ्रातुर्वचनमाज्ञाय त्वरमाणो वृकोदरः॥ ११॥
प्रययौ सिंहनादेन त्रासयन् सर्वपार्थिवान्।

भाईकी यह आज्ञा मानकर भीमसेन सिंहनादसे सम्पूर्ण नरेशोंको भयभीत करते हुए बड़ी उतावलीके साथ वहाँसे चल दिये॥ ११½॥

वेगेन महता राजन् पर्वकाले यथोदधिः॥ १२॥
तमन्वगात् सत्यधृतिः सौचित्तिर्युद्धदुर्मदः।
श्रेणिमान् वसुदानश्च पुत्रः काश्यस्य चाभिभूः॥ १३॥
अभिमन्युमुखाश्चैव द्रौपदेया महारथाः।
क्षत्रदेवश्च विक्रान्तः क्षत्रधर्मा तथैव च॥ १४॥
अनूपाधिपतिश्चैव नीलः स्वबलमास्थितः।
महता रथवंशेन हैडिम्बं पर्यवारयन्॥ १५॥

राजन्! जैसे पूर्णिमाको समुद्र बड़े वेगसे बढ़ता है, उसी प्रकार भीमसेन अत्यन्त वेगसे आगे बढ़े। उनके पीछे सत्यधृति, रणदुर्मद सौचित्ति, श्रेणिमान्, वसुदान, काशिराजके पुत्र अभिभू, अभिमन्यु आदि योद्धा, द्रौपदीके पाँचों महारथी पुत्र, पराक्रमी क्षत्रदेव, क्षत्रधर्मा, अनूपदेशके राजा नील, जिन्हें अपने बलका पूरा भरोसा था—इन सब वीरोंने विशाल रथसेनाके साथ हिडिम्बाकुमार घटोत्कचको सब ओरसे घेर लिया॥ १२—१५॥

कुञ्जरैश्च सदा मत्तैः षट्सहस्रैः प्रहारिभिः।
अभ्यरक्षन्त सहिता राक्षसेन्द्रं घटोत्कचम्॥ १६॥

सदा उन्मत्त रहनेवाले, प्रहारकुशल छः हजार गजराजोंके साथ आकर उपर्युक्त वीरोंने एक साथ ही राक्षसराज घटोत्कचकी रक्षा की॥ १६॥

सिंहनादेन महता नेमिघोषेण चैव ह।
खुरशब्दनिपातैश्च कम्पयन्तो वसुन्धराम्॥ १७॥

वे महान् सिंहनाद, रथके पहियोंकी घरघराहट और घोड़ोंकी टाप पड़नेसे होनेवाले महान् शब्दके द्वारा वसुधाको कम्पित कर रहे थे॥ १७॥

तेषामापततां श्रुत्वा शब्दं तं तावकं बलम्।
भीमसेनभयोद्विग्नं विवर्णवदनं तथा॥ १८॥

उन सबके आनेसे जो कोलाहल हुआ, उसे सुनकर भीमसेनके भयसे उद्विग्न हुए आपके सैनिकोंका मुख उदास हो गया॥ १८॥

परिवृत्तं महाराज परित्यज्य घटोत्कचम्।
ततः प्रववृते युद्धं तत्र तेषां महात्मनाम्॥ १९॥
तावकानां परेषां च संग्रामेष्वनिवर्तिनाम्।

महाराज! उस समय रक्षकोंद्वारा सब ओरसे घिरे हुए घटोत्कचको छोड़कर संग्राममें कभी पीठ न दिखानेवाले आपके तथा शत्रुपक्षके उन महामनस्वी योद्धाओंमें भारी युद्ध छिड़ गया॥ १९½॥

नानारूपाणि शस्त्राणि विसृजन्तो महारथाः॥ २०॥
अन्योन्यमभिधावन्तः सम्प्रहारं प्रचक्रिरे।

नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंको छोड़ते और एक-दूसरेकी ओर दौड़ते हुए उभय पक्षके महारथी भीषण युद्ध करने लगे॥ २०½॥

व्यतिषक्तं महारौद्रं युद्धं भीरुभयावहम्॥ २१॥
हया गजैः समाजग्मुः पादाता रथिभिः सह।

धीरे-धीरे अत्यन्त भयंकर युद्ध छिड़ गया, जो भीरु मनुष्योंको डरानेवाला था। घुड़सवार हाथीसवारोंके और पैदल रथियोंके साथ भिड़ गये॥ २१½॥

अन्योन्यं समरे राजन् प्रार्थयानाः समभ्ययुः॥ २२॥
सहसा चाभवत् तीव्रं संनिपातान्महद् रजः।
गजाश्वरथपत्तीनां पदनेमिसमुद्धतम्॥ २३॥

राजन्! वे समरांगणमें एक-दूसरेको ललकारते हुए जूझ रहे थे। उस समय उस भीषण संघर्षसे सहसा बड़े जोरकी धूल उठी, जो हाथी, घोड़े और पैदलोंके पैरों तथा रथके पहियोंके धक्केसे उठायी गयी थी॥

धूम्रारुणं रजस्तीव्रं रणभूमिं समावृणोत्।
नैव स्वे न परे राजन् समजानन् परस्परम्॥ २४॥

महाराज! काले और लाल रंगकी उस दुःसह धूलने समस्त रणभूमिको ढक लिया। उस समय अपने और शत्रुपक्षके योद्धा एक-दूसरेको पहचान नहीं पाते थे॥ २४॥

पिता पुत्रं न जानीते पुत्रो वा पितरं तथा।
निर्मर्यादे तथाभूते वैशसे लोमहर्षणे॥ २५॥

उस मर्यादाशून्य रोमांचकारी जनसंहारमें पिता पुत्रको और पुत्र पिताको नहीं पहचान पाता था॥ २५॥

शस्त्राणां भरतश्रेष्ठ मनुष्याणां च गर्जताम्।
सुमहानभवच्छब्दः प्रेतानामिव भारत॥ २६॥

भरतश्रेष्ठ! शस्त्रोंके आघात और मनुष्योंकी गर्जनाका महान् शब्द भूत-प्रेतोंकी गर्जनाके समान जान पड़ता था॥ २६॥

गजवाजिमनुष्याणां शोणितान्त्रतरङ्गिणी।
प्रावर्तत नदी तत्र केशशैवलशाद्वला॥ २७॥

हाथी, घोड़े और मनुष्योंके रक्त और आँतोंकी एक भयंकर नदी बह चली, जिसमें केश सेवार और घासके समान जान पड़ते थे॥ २७॥

नराणां चैव कायेभ्यः शिरसां पततां रणे।
शुश्रुवे सुमहाञ्छब्दः पततामश्मनामिव॥ २८॥

मनुष्योंके शरीरोंसे रणभूमिमें कटकर गिरते हुए मस्तकोंका महान् शब्द पत्थरोंकी वर्षाके समान जान पड़ता था॥ २८॥

विशिरस्कैर्मनुष्यैश्च छिन्नगात्रैश्च वारणैः।
अश्वैः सम्भिन्नदेहैश्च संकीर्णाभूद् वसुन्धरा॥ २९॥

बिना सिरके मनुष्यों, कटे हुए अंगोंवाले हाथियों तथा छिन्न-भिन्न शरीरवाले घोड़ोंसे वहाँकी सारी भूमि पट गयी थी॥ २९॥

नानाविधानि शस्त्राणि विसृजन्तो महारथाः।
अन्योन्यमभिधावन्तः सम्प्रहारार्थमुद्यताः॥ ३०॥

नाना प्रकारके शस्त्रोंको चलाते और एक-दूसरेकी ओर दौड़ते हुए महारथी सर्वथा युद्धके लिये उद्यत थे॥

हया हयान् समासाद्य प्रेषिता हयसादिभिः।
समाहत्य रणेऽन्योन्यं निपेतुर्गतजीविताः॥ ३१॥

घुड़सवारोंद्वारा प्रेरित हुए घोड़े घोड़ोंसे भिड़कर आपसमें टक्कर लेकर प्राणशून्य हो रणक्षेत्रमें गिर पड़ते थे॥ ३१॥

नरा नरान् समासाद्य क्रोधरक्तेक्षणा भृशम्।
उरांस्युरोभिरन्योन्यं समाश्लिष्य निजघ्निरे॥ ३२॥

मनुष्य मनुष्योंपर आक्रमण करके अत्यन्त क्रोधसे लाल आँखें किये छातीसे छाती भिड़ाकर एक-दूसरेको मारने लगे॥ ३२॥

प्रेषिताश्च महामात्रैर्वारणाः परवारणैः।
अभ्यघ्नन्त विषाणाग्रैर्वारणानेव संयुगे॥ ३३॥

महावतोंके द्वारा आगे बढ़ाये हुए हाथी विपक्षी हाथियोंसे टक्कर लेकर युद्धस्थलमें अपने दाँतोंके अग्रभागसे हाथियोंपर ही चोट करते थे॥ ३३॥

ते जातरुधिरोत्पीडाः पताकाभिरलंकृताः।
संसक्ताः प्रत्यदृश्यन्त मेघा इव सविद्युतः॥ ३४॥

उस समय उनके मस्तकसे रक्तकी धारा बहने लगती थी। परस्पर भिड़े हुए वे हाथी पताकाओंसे अलंकृत होनेके कारण विद्युत्सहित मेघोंके समान दिखायी देते थे॥ ३४॥

केचिद् भिन्ना विषाणाग्रैर्भिन्नकुम्भाश्च तोमरैः।
विनदन्तोऽभ्यधावन्त गर्जमाना घना इव॥ ३५॥

कितने ही हाथी दाँतोंके अग्रभागसे विदीर्ण हो रहे थे। कितनोंके कुम्भस्थल तोमरोंकी मारसे फट गये थे और वे गर्जते हुए बादलोंके समान चीत्कार करते हुए इधर-उधर भाग रहे थे॥ ३५॥

केचिद्धस्तैर्द्विधा च्छिन्नैश्छिन्नगात्रास्तथापरे।
निपेतुस्तुमुले तस्मिंश्छिन्नपक्षा इवाद्रयः॥ ३६॥

किन्हींकी सूँड़ोंके दो टुकड़े हो गये थे, किन्हींके सभी अंग छिन्न-भिन्न हो गये थे, ऐसे हाथी पंख कटे पर्वतोंके समान उस भयानक युद्धमें धड़ाधड़ गिर रहे थे॥ ३६॥

पार्श्वैस्तु दारितैरन्ये वारणैर्वरवारणाः।
मुमुचुः शोणितं भूरि धातूनिव महीधराः॥ ३७॥

बहुत-से श्रेष्ठ हाथी हाथियोंके आघातसे ही अपना पार्श्वभाग विदीर्ण हो जानेके कारण उसी प्रकार प्रचुरमात्रामें अपना रक्त बहा रहे थे, जैसे पर्वत गेरु आदि धातुओंसे मिश्रित झरने बहाते हों॥ ३७॥

नाराचनिहतास्त्वन्ये तथा विद्धाश्च तोमरैः।
विनदन्तोऽभ्यधावन्त विशृंगा इव पर्वताः॥ ३८॥

कुछ हाथी नाराचोंसे घायल किये गये थे, कितनोंके शरीरोंमें तोमर धँसे हुए थे और वे सब-के-सब घोर चीत्कार करते हुए इधर-उधर दौड़ रहे थे। उस समय वे शृंगहीन पर्वतोंके समान जान पड़ते थे॥

केचित् क्रोधसमाविष्टा मदान्धा निरवग्रहाः।
रथान् हयान् पदातींश्च ममृदुः शतशो रणे॥ ३९॥

कितने ही मदान्ध गजराज क्रोधमें भरे होनेके कारण काबूमें नहीं आते थे। उन्होंने रणभूमिमें सैकड़ों रथों, घोड़ों और पैदल सिपाहियोंको पैरों तले रौंद डाला॥ ३९॥

तथा हया हयारोहैस्ताडिताः प्रासतोमरैः।
तेन तेनाभ्यवर्तन्त कुर्वन्तो व्याकुला दिशः॥ ४०॥

इसी प्रकार घुड़सवारोंद्वारा प्रास और तोमरोंकी मारसे घायल किये हुए घोड़े सम्पूर्ण दिशाओंको व्याकुल करते हुए इधर-उधर भाग रहे थे॥ ४०॥

रथिनो रथिभिः सार्धं कुलपुत्रास्तनुत्यजः।
परां शक्तिं समास्थाय चक्रुः कर्माण्यभीतवत्॥ ४१॥

कितने ही कुलीन रथी अपने शरीरोंको निछावर करके भारी-से-भारी शक्ति लगाकर विपक्षी रथियोंके साथ निर्भयकी भाँति महान् पराक्रम प्रकट कर रहे थे॥

स्वयंवर इवामर्दे प्रजह्रुरितरेतरम्।
प्रार्थयाना यशो राजन् स्वर्गं वा युद्धशालिनः॥ ४२॥

राजन्! युद्धमें शोभा पानेवाले वीर स्वर्ग अथवा यश पानेकी इच्छा रखकर स्वयंवरकी भाँति उस युद्धमें एक-दूसरेपर प्रहार कर रहे थे॥ ४२॥

तस्मिंस्तथा वर्तमाने संग्रामे लोमहर्षणे।
धार्तराष्ट्रं महत् सैन्यं प्रायशो विमुखीकृतम्॥ ४३॥

इस प्रकार चलनेवाले उस रोमांचकारी संग्राममें दुर्योधनकी विशाल सेना प्रायः युद्धसे विमुख होकर भाग गयी॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि संकुलयुद्धे त्रिनवतितमोऽध्यायः॥ ९३॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें संकुलयुद्धविषयक तिरानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९३॥

चतुर्नवतितमोऽध्यायः

दुर्योधन और भीमसेनका एवं अश्वत्थामा और राजा नीलका युद्ध तथा घटोत्कचकी मायासे मोहित होकर कौरव-सेनाका पलायन

संजय उवाच

स्वसैन्यं निहतं दृष्ट्वा राजा दुर्योधनः स्वयम्।
अभ्यधावत संक्रुद्धो भीमसेनमरिंदमम्॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! अपनी अधिकांश सेनाको मारी गयी देख क्रोधमें भरे हुए स्वयं राजा दुर्योधनने शत्रुदमन भीमसेनपर धावा किया॥ १॥

प्रगृह्य सुमहच्चापमिन्द्राशनिसमस्वनम्।
महता शरवर्षेण पाण्डवं समवाकिरत्॥ २॥

उसने इन्द्रके वज्रकी भाँति भयानक टंकार करनेवाले विशाल धनुषको हाथमें लेकर पाण्डुनन्दन भीमसेनपर बाणोंकी भारी वर्षा आरम्भ की॥ २॥

अर्धचन्द्रं च संधाय सुतीक्ष्णं लोमवाहिनम्।
भीमसेनस्य चिच्छेद चापं क्रोधसमन्वितः॥ ३॥

इतना ही नहीं, उसने कुपित होकर पंखयुक्त अत्यन्त तीखे अर्धचन्द्राकार बाणका प्रयोग करके भीमसेनके धनुषको काट दिया॥ ३॥

तदन्तरं च सम्प्रेक्ष्य त्वरमाणो महारथः।
प्रसंदधे शितं बाणं गिरीणामपि दारणम्॥ ४॥

फिर उसीको उपयुक्त अवसर समझकर महारथी दुर्योधनने बड़ी उतावलीके साथ एक तीखे बाणका संधान किया, जो पर्वतोंको भी विदीर्ण करनेवाला था॥ ४॥

तेनोरसि महाराज भीमसेनमताडयत्।
स गाढविद्धो व्यथितः सृक्किणी परिसंलिहन्॥ ५॥
समाललम्बे तेजस्वी ध्वजं हेमपरिष्कृतम्।

महाराज! उस बाणके द्वारा दुर्योधनने भीमसेनकी छातीपर गहरी चोट पहुँचायी। उससे अत्यन्त घायल होकर तेजस्वी भीमसेन व्यथित हो उठे और मुँहके दोनों कोनोंको चाटते हुए उन्होंने अपने सुवर्णभूषित ध्वजका सहारा ले लिया॥ ५½॥

तथा विमनसं दृष्ट्वा भीमसेनं घटोत्कचः॥ ६॥
क्रोधेनाभिप्रजज्वाल दिधक्षन्निव पावकः।

भीमसेनको इस प्रकार व्यथितचित्त देखकर घटोत्कच जलानेकी इच्छावाले अग्निदेवकी भाँति क्रोधसे प्रज्वलित हो उठा॥ ६½॥

अभिमन्युमुखाश्चापि पाण्डवानां महारथाः॥ ७॥
समभ्यधावन् क्रोशन्तो राजानं जातसम्भ्रमाः।

साथ ही अभिमन्यु आदि पाण्डव महारथी भी बड़े वेगसे राजा दुर्योधनको ललकारते हुए उसकी ओर दौड़े॥ ७½॥

सम्प्रेक्ष्यैतान् सम्पततः संक्रुद्धाञ्जातसम्भ्रमान्॥ ८॥
भारद्वाजोऽब्रवीद् वाक्यं तावकानां महारथान्।
क्षिप्रं गच्छत भद्रं वो राजानं परिरक्षत॥ ९॥
संशयं परमं प्राप्तं मज्जन्तं व्यसनार्णवे।

क्रोधमें भरे हुए इन समस्त योद्धाओंको वेगपूर्वक धावा करते देख द्रोणाचार्यने आपके महारथियोंसे कहा—'वीरो! तुम्हारा कल्याण हो। शीघ्र जाओ और संकटके समुद्रमें डूबकर महान् प्राणसंशयमें पड़े हुए राजा दुर्योधनकी रक्षा करो॥ ८-९½॥

एते क्रुद्धा महेष्वासाः पाण्डवानां महारथाः॥ १०॥
भीमसेनं पुरस्कृत्य दुर्योधनमुपाद्रवन्।
नानाविधानि शस्त्राणि विसृजन्तो जये धृताः॥ ११॥
नदन्तो भैरवान् नादांस्त्रासयन्तश्च भूमिपान्।

'ये महाधनुर्धर पाण्डव महारथी कुपित हो भीमसेनको आगे करके दुर्योधनपर धावा कर रहे हैं और विजयका

दृढ़ संकल्प ले नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा करते हुए भैरव गर्जना करते तथा भूमिपालोंको त्रास पहुँचाते हैं'॥ १०-११½ ॥

तदाचार्यवचः श्रुत्वा सौमदत्तिपुरोगमाः॥ १२॥
तावकाः समवर्तन्त पाण्डवानामनीकिनीम्।

आचार्यका यह वचन सुनकर भूरिश्रवा आदि आपके प्रमुख योद्धाओंने पाण्डवसेनापर आक्रमण किया॥

कृपो भूरिश्रवाः शल्यो द्रोणपुत्रो विविंशतिः॥ १३॥
चित्रसेनो विकर्णश्च सैन्धवोऽथ बृहद्बलः।
आवन्त्यौ च महेष्वासौ कौरवं पर्यवारयन्॥ १४॥

कृपाचार्य, भूरिश्रवा, शल्य, अश्वत्थामा, विविंशति, चित्रसेन, विकर्ण, सिंधुराज जयद्रथ, बृहद्बल तथा अवन्तीके राजकुमार महाधनुर्धर विन्द और अनुविन्द—इन सबने दुर्योधनको उसकी रक्षाके लिये सब ओरसे घेर लिया॥

ते विंशतिपदं गत्वा सम्प्रहारं प्रचक्रिरे।
पाण्डवा धार्तराष्ट्राश्च परस्परजिघांसवः॥ १५॥

वे बीस कदम आगे बढ़कर प्रहार करने लगे, फिर तो पाण्डव तथा कौरव योद्धा एक-दूसरेको मार डालनेकी इच्छासे युद्ध करने लगे॥ १५॥

एवमुक्त्वा महाबाहुर्महद् विस्फार्य कार्मुकम्।
भारद्वाजस्ततो भीमं षड्विंशत्या समार्पयत्॥ १६॥

कौरव महारथियोंसे पूर्वोक्त बात कहनेके पश्चात् महाबाहु भरद्वाजनन्दन द्रोणाचार्यने अपने विशाल धनुषको खींचकर भीमसेनको छब्बीस बाण मारे॥ १६॥

भूयश्चैनं महाबाहुः शरैः शीघ्रमवाकिरत्।
पर्वतं वारिधाराभिः प्रावृषीव बलाहकः॥ १७॥

साथ ही उन महाबाहुने उनके ऊपर शीघ्रतापूर्वक बाणोंकी वर्षा आरम्भ कर दी, मानो वर्षाऋतुमें मेघ पर्वत-शिखरपर जलकी धारा गिरा रहा हो॥ १७॥

तं प्रत्यविध्यद् दशभिर्भीमसेनः शिलीमुखैः।
त्वरमाणो महेष्वासः सव्ये पार्श्वे महाबलः॥ १८॥

तब महाबली महाधनुर्धर भीमसेनने भी बड़ी उतावलीके साथ द्रोणाचार्यकी बायीं पसलीमें दस बाण मारकर उन्हें घायल कर दिया॥ १८॥

स गाढविद्धो व्यथितो वयोवृद्धश्च भारत।
प्रणष्टसंज्ञः सहसा रथोपस्थ उपाविशत्॥ १९॥

भरतनन्दन! उन बाणोंसे उन्हें गहरा आघात लगा। वे वयोवृद्ध तो थे ही, सहसा व्यथित एवं अचेत होकर रथके पिछले भागमें बैठ गये॥ १९॥

गुरुं प्रव्यथितं दृष्ट्वा राजा दुर्योधनः स्वयम्।
द्रौणायनिश्च संक्रुद्धौ भीमसेनमभिद्रुतौ॥ २०॥

आचार्य द्रोणको व्यथासे पीड़ित देख स्वयं राजा दुर्योधन और अश्वत्थामा दोनों अत्यन्त कुपित हो भीमसेनपर टूट पड़े॥ २०॥

तावापतन्तौ सम्प्रेक्ष्य कालान्तकयमोपमौ।
भीमसेनो महाबाहुर्गदामादाय सत्वरम्॥ २१॥
अवप्लुत्य रथात् तूर्णं तस्थौ गिरिरिवाचलः।

प्रलयकालीन यमराजके समान भयंकर उन दोनों महारथियोंको आक्रमण करते देख महाबाहु भीमसेनने तुरंत ही गदा हाथमें ले ली और वे रथसे कूदकर पर्वतके समान अविचल भावसे खड़े हो गये॥ २१½ ॥

समुद्यम्य गदां गुर्वीं यमदण्डोपमां रणे॥ २२॥
तमुद्यतगदं दृष्ट्वा कैलासमिव शृङ्गिणम्।
कौरवो द्रोणपुत्रश्च सहितावभ्यधावताम्॥ २३॥

उन्होंने हाथमें जो भारी गदा उठायी थी, वह रणभूमिमें यमदण्डके समान भयानक जान पड़ती थी। शृंगधारी कैलास पर्वतके समान ऊपर गदा उठाये हुए भीमसेनको देखकर दुर्योधन और अश्वत्थामाने एक साथ उनपर धावा किया॥ २२-२३॥

तावापतन्तौ सहितौ त्वरितौ बलिनां वरौ।
अभ्यधावत वेगेन त्वरमाणो वृकोदरः॥ २४॥

बलवानोंमें श्रेष्ठ उन दोनों वीरोंको एक साथ शीघ्रतापूर्वक आते देख भीमसेन भी उतावले होकर बड़े वेगसे उनकी ओर बढ़े॥ २४॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य संक्रुद्धं भीमदर्शनम्।
समभ्यधावंस्त्वरिताः कौरवाणां महारथाः॥ २५॥

क्रोधमें भरकर भयंकर दिखायी देनेवाले भीमसेनको देखकर कौरव महारथी बड़ी उतावलीके साथ उनकी ओर दौड़े॥ २५॥

भारद्वाजमुखाः सर्वे भीमसेनजिघांसया।
नानाविधानि शस्त्राणि भीमस्योरस्यपातयन्॥ २६॥

द्रोणाचार्य आदि सभी योद्धा भीमसेनके वधकी इच्छासे उनकी छातीपर नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंका प्रहार करने लगे॥ २६॥

सहिताः पाण्डवं सर्वे पीडयन्तः समन्ततः।
तं दृष्ट्वा संशयं प्राप्तं पीड्यमानं महारथम्॥ २७॥
अभिमन्युप्रभृतयः पाण्डवानां महारथाः।
अभ्यधावन् परीप्सन्तः प्राणांस्त्यक्त्वा सुदुस्त्यजान्॥ २८॥

वे सब एक साथ होकर चारों ओरसे पाण्डुकुमार भीमसेनको पीड़ा देने लगे। महारथी भीमसेनको पीड़ित और उनके प्राणोंको संकटमें पड़ा देख अभिमन्यु आदि

पाण्डव महारथी अपने दुस्त्यज प्राणोंका मोह छोड़कर उनकी रक्षाके लिये दौड़े आये॥ २७-२८॥

अनूपाधिपतिः शूरो भीमस्य दयितः सखा।
नीलो नीलाम्बुदप्रख्यः संक्रुद्धो द्रौणिमभ्ययात्॥ २९॥

अनूप देशका शूरवीर राजा नील भीमसेनका प्रिय सखा था। उसकी अंगकान्ति श्याम मेघके समान सुन्दर थी। उसने अत्यन्त कुपित होकर अश्वत्थामापर आक्रमण किया॥ २९॥

स्पर्धते हि महेष्वासो नित्यं द्रोणसुतेन सः।
स विस्फार्य महच्चापं द्रौणिं विव्याध पत्रिणा॥ ३०॥
यथा शक्रो महाराज पुरा विव्याध दानवम्।
विप्रचित्तिं दुराधर्षं देवतानां भयंकरम्॥ ३१॥
येन लोकत्रयं क्रोधात् त्रासितं स्वेन तेजसा।

वह महाधनुर्धर वीर प्रतिदिन द्रोणपुत्र अश्वत्थामाके साथ स्पर्धा रखता था। महाराज! उसने अपने विशाल धनुषको खींचकर एक पंखयुक्त बाणसे अश्वत्थामाको उसी प्रकार घायल कर दिया, जैसे इन्द्रने पूर्वकालमें देवताओंके लिये भयंकर विप्रचित्ति नामक दुर्धर्ष दानवको घायल किया था, उस दानवने अपने क्रोध एवं तेजसे तीनों लोकोंको भयभीत कर रखा था॥ ३०-३१½॥

तथा नीलेन निर्भिन्नः सुमुक्तेन पतत्त्रिणा॥ ३२॥
संजातरुधिरोत्पीडो द्रौणिः क्रोधसमन्वितः।

नीलके छोड़े हुए उस पंखयुक्त बाणसे विदीर्ण होकर अश्वत्थामाके शरीरसे रक्तका प्रवाह बह चला। इससे अश्वत्थामाको बड़ा क्रोध हुआ॥ ३२½॥

स विस्फार्य धनुश्चित्रमिन्द्राशनिसमस्वनम्॥ ३३॥
दध्रे नीलविनाशाय मतिं मतिमतां वरः।

तदनन्तर बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ अश्वत्थामाने इन्द्रके वज्रकी भाँति भयंकर टंकार करनेवाले अपने विचित्र धनुषको खींचकर नीलको मार डालनेका विचार किया॥ ३३½॥

ततः संधाय विमलान् भल्लान् कर्मारमार्जितान्॥ ३४॥
जघान चतुरो वाहान् सारथिं ध्वजमेव च।
सप्तमेन च भल्लेन नीलं विव्याध वक्षसि॥ ३५॥

तत्पश्चात् उसने लोहारके माँजे हुए सात चमकीले भल्लोंको धनुषपर रखकर चलाया। उनमेंसे चारके द्वारा उसने नीलके चारों घोड़ोंको और पाँचवेंसे सारथिको मार डाला। छठेसे ध्वजको काट गिराया और सातवें भल्लसे नीलकी छातीमें प्रहार किया॥ ३४-३५॥

स गाढविद्धो व्यथितो रथोपस्थ उपाविशत्।
मोहितं वीक्ष्य राजानं नीलमभ्रचयोपमम्॥ ३६॥
घटोत्कचोऽभिसंक्रुद्धो ज्ञातिभिः परिवारितः।
अभिदुद्राव वेगेन द्रौणिमाहवशोभिनम्॥ ३७॥
तथेतरे चाभ्यधावन् राक्षसा युद्धदुर्मदाः।

उस बाणसे अधिक घायल हो जानेके कारण वे व्यथित हो रथके पिछले भागमें बैठ गये। नील मेघसमूहके समान श्याम वर्णवाले राजा नीलको अचेत हुआ देख अपने भाई-बन्धुओंसे घिरा हुआ घटोत्कच अत्यन्त कुपित हो युद्धमें शोभा पानेवाले अश्वत्थामाकी ओर बड़े वेगसे दौड़ा। उसके साथ ही दूसरे-दूसरे रणदुर्मद राक्षसोंने भी उसपर धावा किया॥ ३६-३७½॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य राक्षसं घोरदर्शनम्॥ ३८॥
अभ्यधावत तेजस्वी भारद्वाजात्मजस्त्वरन्।

देखनेमें अत्यन्त भयंकर राक्षस घटोत्कचको धावा करते देख तेजस्वी अश्वत्थामाने बड़ी उतावलीके साथ उसपर आक्रमण किया॥ ३८½॥

निजघान च संक्रुद्धो राक्षसान् भीमदर्शनान्॥ ३९॥
येऽभवन्नग्रतः क्रुद्धा राक्षसस्य पुरःसराः।

उसने कुपित हो उन भयंकर राक्षसोंको मारना आरम्भ किया, जो घटोत्कचके आगे खड़े होकर क्रोधपूर्वक युद्ध कर रहे थे॥ ३९½॥

विमुखांश्चैव तान् दृष्ट्वा द्रौणिचापच्युतैःशरैः॥ ४०॥
अक्रुद्ध्यत महाकायो भैमसेनिर्घटोत्कचः।

अश्वत्थामाके धनुषसे छूटे हुए बाणोंद्वारा घायल हो उन राक्षसोंको भागते देख विशालकाय भीमसेनकुमार घटोत्कच कुपित हो उठा॥ ४०½॥

प्रादुश्चक्रे ततो मायां घोररूपां सुदारुणाम्॥ ४१॥
मोहयन् समरे द्रौणिं मायावी राक्षसाधिपः।

तत्पश्चात् उस मायावी राक्षसराजने समरांगणमें अश्वत्थामाको मोहित करते हुए अत्यन्त दारुण घोर माया प्रकट की॥ ४१½॥

ततस्ते तावकाः सर्वे मायया विमुखीकृताः॥ ४२॥
अन्योन्यं समपश्यन्त निकृत्ता मेदिनीतले।
विचेष्टमानाः कृपणाः शोणितेन परिप्लुताः॥ ४३॥
द्रोणं दुर्योधनं शल्यमश्वत्थामानमेव च।
प्रायशश्च महेष्वासा ये प्रधानाः स्म कौरवाः॥ ४४॥
विध्वस्ता रथिनः सर्वे राजानश्च निपातिताः।
हयाश्चैव हयारोहाः संनिकृत्ताः सहस्रशः॥ ४५॥

तब उस मायासे डरकर आपके सभी सैनिक युद्धसे विमुख हो गये। उन्होंने एक-दूसरेको तथा द्रोण, दुर्योधन, शल्य और अश्वत्थामाको भी इस प्रकार देखा—सब-के-सब छिन्न-भिन्न हो पृथ्वीपर गिरकर छटपटा रहे

हैं और खूनसे लथपथ होकर दयनीय दशाको पहुँच गये हैं। कौरवोंमें जो महान् धनुर्धर एवं प्रधान वीर हैं, प्रायः वे सभी रथी विध्वंसको प्राप्त हो गये हैं। सब राजा मार गिराये गये हैं तथा हजारों घोड़े और घुड़सवार टुकड़े-टुकड़े होकर पड़े हैं॥४२—४५॥

तद् दृष्ट्वा तावकं सैन्यं विद्रुतं शिबिरं प्रति।
मम प्राक्रोशतो राजंस्तथा देवव्रतस्य च॥ ४६॥
युध्यध्वं मा पलायध्वं मायैषा राक्षसी रणे।
घटोत्कचप्रमुक्तेति नातिष्ठन्त विमोहिताः॥ ४७॥

यह सब देखकर आपकी सेना शिविरकी ओर भाग चली। राजन्! उस समय मैं और देवव्रत भीष्म भी पुकार-पुकारकर कह रहे थे—'वीरो! युद्ध करो। भागो मत। रणभूमिमें तुम जो कुछ देख रहे हो, वह घटोत्कचद्वारा छोड़ी हुई राक्षसी माया है।' परंतु वे अचेत होनेके कारण ठहर न सके॥४६-४७॥

नैव ते श्रद्दधुर्भीता वदतोरावयोर्वचः।
तांश्च प्रद्रवतो दृष्ट्वा जयं प्राप्ताश्च पाण्डवाः॥ ४८॥
घटोत्कचेन सहिताः सिंहनादान् प्रचक्रिरे।

वे इतने डर गये थे कि हम दोनोंकी बातोंपर विश्वास नहीं करते थे। उन्हें भागते देख विजयी पाण्डव घटोत्कचके साथ सिंहनाद करने लगे॥४८½॥

शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषैः समन्तान्नेदिरे भृशम्॥ ४९॥
एवं तव बलं सर्वं हैडिम्बेन दुरात्मना।
सूर्यास्तमनवेलायां प्रभग्नं विद्रुतं दिशः॥ ५०॥

चारों ओर शंख और दुन्दुभि आदि बाजे जोर-जोरसे बजने लगे। इस प्रकार सूर्यास्तके समय दुरात्मा घटोत्कचसे खदेड़ी गयी आपकी सारी सेना सम्पूर्ण दिशाओंमें भाग गयी॥ ४९-५०॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि अष्टमयुद्धदिवसे घटोत्कचयुद्धे चतुर्नवतितमोऽध्यायः॥ ९४॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें आठवें दिनके युद्धमें घटोत्कचका युद्धविषयक चौरानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९४॥

पञ्चनवतितमोऽध्यायः

दुर्योधनके अनुरोध और भीष्मजीकी आज्ञासे भगदत्तका घटोत्कच, भीमसेन और पाण्डव-सेनाके साथ घोर युद्ध

संजय उवाच

तस्मिन् महति संक्रन्दे राजा दुर्योधनस्तदा।
(पराजयं राक्षसेन नामृष्यत परंतपः।)
गाङ्गेयमुपसंगम्य विनयेनाभिवाद्य च॥ १॥
तस्य सर्वं यथावृत्तमाख्यातुमुपचक्रमे।
घटोत्कचस्य विजयमात्मनश्च पराजयम्॥ २॥
कथयामास दुर्धर्षो विनिःश्वस्य पुनः पुनः।

संजय कहते हैं—महाराज! शत्रुओंको संताप देनेवाला राजा दुर्योधन उस महान् युद्धमें एक राक्षसके द्वारा प्राप्त हुई अपनी पराजयको नहीं सह सका। उसने गंगानन्दन भीष्मजीके पास जाकर उन्हें विनीतभावसे प्रणाम करनेके पश्चात् सारा वृत्तान्त यथावत् रूपसे कह सुनाया। उस दुर्धर्ष वीरने बारंबार लम्बी साँस खींचकर घटोत्कचकी विजय और अपनी पराजयकी कथा कही॥ १-२½॥

अब्रवीच्च तदा राजन् भीष्मं कुरुपितामहम्॥ ३॥
भवन्तं समुपाश्रित्य वासुदेवं यथा परैः।
पाण्डवैर्विग्रहो घोरः समारब्धो मया प्रभो॥ ४॥

राजन्! फिर उसने कुरुकुलके वृद्ध पितामह भीष्मसे कहा—'प्रभो! जैसे मेरे शत्रु वसुदेवनन्दन श्रीकृष्णका आश्रय लेकर युद्ध करते हैं, उसी प्रकार मैंने केवल आपका सहारा लेकर पाण्डवोंके साथ भयंकर युद्ध छेड़ा है॥३-४॥

एकादश समाख्याता अक्षौहिण्यश्च या मम।
निदेशे तव तिष्ठन्ति मया सार्धं परंतप॥ ५॥

'परंतप! मेरे साथ ही मेरी ये प्रसिद्ध ग्यारह अक्षौहिणी सेनाएँ आपकी आज्ञाके अधीन हैं॥५॥

सोऽहं भरतशार्दूल भीमसेनपुरोगमैः।
घटोत्कचं समाश्रित्य पाण्डवैर्युधि निर्जितः॥ ६॥

'भरतश्रेष्ठ! ऐसा शक्तिशाली होनेपर भी मुझे भीमसेन आदि पाण्डवोंने घटोत्कचका सहारा लेकर युद्धमें परास्त कर दिया है॥६॥

तन्मे दहति गात्राणि शुष्कवृक्षमिवानलः।
यदिच्छामि महाभाग त्वत्प्रसादात् परंतप॥ ७॥
राक्षसापसदं हन्तुं स्वयमेव पितामह।
त्वां समाश्रित्य दुर्धर्षं तन्मे कर्तुं त्वमर्हसि॥ ८॥

'महाभाग! जैसे आग सूखे पेड़को जलाकर भस्म कर देती है, उसी प्रकार यह अपमान मेरे अंग-अंगको दग्ध कर रहा है। शत्रुओंको संताप देनेवाले पितामह! मैं आपकी कृपासे स्वयं ही उस नीच एवं दुर्धर्ष राक्षसको मारना चाहता हूँ। आपका सहारा लेकर उसपर विजयी होना चाहता हूँ। अतः आप मेरे इस मनोरथको पूर्ण करें'॥ ७-८॥

एतच्छ्रुत्वा तु वचनं राज्ञो भरतसत्तम।
दुर्योधनमिदं वाक्यं भीष्मः शान्तनवोऽब्रवीत्॥ ९॥

भरतश्रेष्ठ! राजा दुर्योधनका यह वचन सुनकर शान्तनुनन्दन भीष्मने उससे इस प्रकार कहा—॥ ९॥

शृणु राजन् मम वचो यत् त्वां वक्ष्यामि कौरव।
यथा त्वया महाराज वर्तितव्यं परंतप॥ १०॥

'राजन्! कुरुनन्दन! मैं तुमसे जो कहता हूँ, उसे ध्यान देकर सुनो। शत्रुओंको संताप देनेवाले महाराज! तुम्हें जिस प्रकार बर्ताव करना चाहिये, वह सुनो॥ १०॥'

आत्मा रक्ष्यो रणे तात सर्वावस्थास्वरिंदम।
धर्मराजेन संग्रामस्त्वया कार्यः सदानघ॥ ११॥

'तात! शत्रुदमन! तुम युद्धमें सदा अपनी रक्षा करो। अनघ! तुम्हें सदा धर्मराज युधिष्ठिरसे ही संग्राम करना चाहिये॥ ११॥

अर्जुनेन यमाभ्यां वा भीमसेनेन वा पुनः।
राजधर्मं पुरस्कृत्य राजा राजानमार्छति॥ १२॥

'अर्जुन, नकुल, सहदेव अथवा भीमसेनके साथ भी तुम युद्ध कर सकते हो। राजधर्मको सामने रखकर यह बात कही गयी है। राजा राजासे ही युद्ध करता है॥ १२॥

(न तु कार्यस्त्वया राजन् हैडिम्बेन दुरात्मना॥)
अहं द्रोणः कृपो द्रौणिः कृतवर्मा च सात्वतः।
शल्यश्च सौमदत्तिश्च विकर्णश्च महारथः॥ १३॥
तव च भ्रातरः श्रेष्ठा दुःशासनपुरोगमाः।
त्वदर्थे प्रतियोत्स्यामो राक्षसं तं महाबलम्॥ १४॥

'राजन्! तुम्हें दुरात्मा घटोत्कचके साथ कदापि युद्ध नहीं करना चाहिये। मैं, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, सात्वतवंशी कृतवर्मा, शल्य, भूरिश्रवा, महारथी विकर्ण तथा दुःशासन आदि तुम्हारे अच्छे भ्राता—ये सब लोग तुम्हारे लिये उस महाबली राक्षससे युद्ध करेंगे॥ १३-१४॥

रौद्रे तस्मिन् राक्षसेन्द्रे यदि तेऽनुशयो महान्।
अयं वा गच्छतु रणे तस्य युद्धाय दुर्मतेः॥ १५॥
भगदत्तो महीपालः पुरन्दरसमो युधि।

'यदि उस भयंकर राक्षसराज घटोत्कचपर तुम्हारा अधिक रोष है तो उस दुष्टके साथ युद्ध करनेके लिये राजा भगदत्त जायँ; क्योंकि युद्धमें ये इन्द्रके समान पराक्रमी हैं'॥ १५½॥

एतावदुक्त्वा राजानं भगदत्तमथाब्रवीत्॥ १६॥
समक्षं पार्थिवेन्द्रस्य वाक्यं वाक्यविशारदः।

इतना कहकर बोलनेमें कुशल भीष्मने राजाधिराज दुर्योधनके सामने ही राजा भगदत्तसे यह बात कही—॥ १६½॥

गच्छ शीघ्रं महाराज हैडिम्बं युद्धदुर्मदम्॥ १७॥
वारयस्व रणे यत्तो मिषतां सर्वधन्विनाम्।

'महाराज! तुम रणदुर्मद घटोत्कचका सामना करनेके लिये शीघ्र जाओ और समस्त धनुर्धरोंके देखते-देखते प्रयत्नपूर्वक उसे रणक्षेत्रमें आगे बढ़नेसे रोको॥ १७½॥

राक्षसं क्रूरकर्माणं यथेन्द्रस्तारकं पुरा॥ १८॥
तव दिव्यानि चास्त्राणि विक्रमश्च परंतप।
समागमश्च बहुभिः पुराभूदमरैः सह॥ १९॥

'पूर्वकालमें इन्द्रने जैसे तारकासुरकी प्रगति रोक दी थी, उसी प्रकार तुम भी उस क्रूरकर्मा राक्षसको रोक दो। परंतप! तुम्हारे पास दिव्य अस्त्र हैं। तुममें पराक्रम भी महान् है और पूर्वकालमें बहुत-से देवताओंके साथ तुम्हारा युद्ध भी हो चुका है॥ १८-१९॥

त्वं तस्य नृपशार्दूल प्रतियोद्धा महाहवे।
स्वबलेनोच्छ्रितो राजञ्जहि राक्षसपुङ्गवम्॥ २०॥

'नृपश्रेष्ठ! इस महायुद्धमें घटोत्कचका सामना करनेवाले योद्धा केवल तुम्हीं हो। राजन्! तुम अपने ही बलसे उत्कर्षको प्राप्त होकर राक्षस-शिरोमणि घटोत्कचको मार डालो'॥ २०॥

एतच्छ्रुत्वा तु वचनं भीष्मस्य पृतनापतेः।
प्रययौ सिंहनादेन परानभिमुखो द्रुतम्॥ २१॥

सेनापति भीष्मका यह वचन सुनकर राजा भगदत्त सिंहनाद करते हुए तुरंत ही शत्रुओंका सामना करनेके लिये चल दिये॥ २१॥

तमाद्रवन्तं सम्प्रेक्ष्य गर्जन्तमिव तोयदम्।
अभ्यवर्तन्त संक्रुद्धाः पाण्डवानां महारथाः॥ २२॥
भीमसेनोऽभिमन्युश्च राक्षसश्च घटोत्कचः।
द्रौपदेयाः सत्यधृतिः क्षत्रदेवश्च भारत॥ २३॥
चेदिपो वसुदानश्च दशार्णाधिपतिस्तथा।

भारत! गर्जते हुए मेघके समान राजा भगदत्तको धावा करते देख भीमसेन, अभिमन्यु, राक्षस घटोत्कच, द्रौपदीके पाँचों पुत्र, सत्यधृति, क्षत्रदेव, चेदिराज धृष्टकेतु, वसुदान और दशार्णराज—ये सभी पाण्डवपक्षीय महारथी क्रोधमें भरकर उनका सामना करनेके लिये आये॥

सुप्रतीकेन तांश्चापि भगदत्तोऽप्युपाद्रवत्॥ २४॥
ततः समभवद् युद्धं घोररूपं भयानकम्।
पाण्डूनां भगदत्तेन यमराष्ट्रविवर्धनम्॥ २५॥

भगदत्तने भी सुप्रतीक नामक हाथीपर आरूढ़ होकर उनपर धावा किया। फिर तो पाण्डवोंका भगदत्तके साथ घोर एवं भयानक युद्ध होने लगा, जो यमराजके राष्ट्रकी वृद्धि करनेवाला था॥ २४-२५॥

प्रयुक्ता रथिभिर्बाणा भीमवेगाः सुतेजनाः।
ते निपेतुर्महाराज नागेषु च रथेषु च॥ २६॥

महाराज! रथियोंद्वारा प्रयुक्त हुए भयंकर वेगशाली तेज बाण हाथियों और रथोंपर गिरने लगे॥ २६॥

प्रभिन्नाश्च महानागा विनीता हस्तिसादिभिः।
परस्परं समासाद्य संनिपेतुरभीतवत्॥ २७॥

जिनके मस्तकसे मदकी धारा बहती थी, ऐसे बड़े-बड़े गजराज गजारोहियोंद्वारा प्रेरित हो एक-दूसरेके पास पहुँचकर निर्भीक हो परस्पर भिड़ जाते थे॥ २७॥

मदान्धा रोषसंरब्धा विषाणाग्रैर्महाहवे।
बिभिदुर्दन्तमुसलैः समासाद्य परस्परम्॥ २८॥

उस महायुद्धमें रोषपूर्ण मदान्ध हाथी अपने दाँतोंके अग्रभागसे अथवा दाँतरूपी मूसलोंसे परस्पर भिड़कर एक-दूसरेको विदीर्ण करने लगे॥ २८॥

हयाश्च चामरापीडाः प्रासपाणिभिरास्थिताः।
चोदिताः सादिभिः क्षिप्रं निपेतुरितरेतरम्॥ २९॥

चामरभूषित अश्व प्रासधारी सवारोंसे संचालित हो तुरंत ही एक-दूसरेपर टूट पड़ते थे॥ २९॥

पादाताश्च पदात्योघैस्ताडिताः शक्तितोमरैः।
न्यपतन्त तदा भूमौ शतशोऽथ सहस्रशः॥ ३०॥

उस समय पैदल सिपाही पैदलोंद्वारा ही शक्ति और तोमरोंसे घायल हो सैकड़ों और हजारोंकी संख्यामें धराशायी हो रहे थे॥ ३०॥

रथिनश्च रथै राजन् कर्णिनालीकसायकैः।
निहत्य समरे वीरान् सिंहनादान् विनेदिरे॥ ३१॥

राजन्! रथी लोग रथोंपर आरूढ़ हो कर्णी, नालीक और सायकोंद्वारा समरमें वीरोंका वध करके सिंहनाद कर रहे थे॥ ३१॥

तस्मिंस्तथा वर्तमाने संग्रामे लोमहर्षणे।
भगदत्तो महेष्वासो भीमसेनमथाद्रवत्॥ ३२॥

जब इस प्रकार रोंगटे खड़े कर देनेवाला भयंकर संग्राम चल रहा था, उसी समय महाधनुर्धर भगदत्तने भीमसेनपर धावा किया॥ ३२॥

कुञ्जरेण प्रभिन्नेन सप्तधा स्रवता मदम्।
पर्वतेन यथा तोयं स्रवमाणेन सर्वशः॥ ३३॥

वे जिस हाथीपर आरूढ़ थे, उसके कुम्भस्थलसे मदकी सात धाराएँ गिर रही थीं। वह सब ओरसे जलके झरने बहानेवाले पर्वतके समान जान पड़ता था॥ ३३॥

किरञ्छरसहस्राणि सुप्रतीकशिरोगतः।
ऐरावतस्थो मघवान् वारिधारा इवानघ॥ ३४॥

निष्पाप नरेश! भगदत्त सुप्रतीककी पीठपर बैठकर सहस्रों बाणोंकी वर्षा करने लगे, मानो देवराज इन्द्र ऐरावतपर आरूढ़ हो जलकी धारा गिरा रहे हों॥ ३४॥

स भीमं शरधाराभिस्ताडयामास पार्थिवः।
पर्वतं वारिधाराभिस्तपान्ते जलदो यथा॥ ३५॥

जैसे वर्षा-ऋतुमें बादल पर्वतके शिखरपर जलकी धारा गिराता है, उसी प्रकार राजा भगदत्त भीमसेनपर बाणोंकी वर्षा करते हुए उन्हें पीड़ित करने लगे॥ ३५॥

भीमसेनस्तु संक्रुद्धः पादरक्षान् परःशतान्।
निजघान महेष्वासः संरब्धः शरवृष्टिभिः॥ ३६॥

तब महाधनुर्धर भीमसेनने अत्यन्त कुपित हो अपने बाणोंकी बौछारसे हाथीके पैरोंकी रक्षा करनेवाले सैकड़ों योद्धाओंको मार गिराया॥ ३६॥

तान् दृष्ट्वा निहतान् क्रुद्धो भगदत्तः प्रतापवान्।
चोदयामास नागेन्द्रं भीमसेनरथं प्रति॥ ३७॥

उन सबको मारा गया देख प्रतापी भगदत्तने कुपित हो उस गजराजको भीमसेनके रथकी ओर बढ़ाया॥ ३७॥

स नागः प्रेषितस्तेन बाणो ज्याचोदितो यथा।
अभ्यधावत वेगेन भीमसेनमरिंदमम्॥ ३८॥

उनके द्वारा प्रेरित होकर वह गजराज धनुषकी प्रत्यंचासे छोड़े हुए बाणकी भाँति शत्रुदमन भीमसेनकी ओर बड़े वेगसे दौड़ा॥ ३८॥

तमापतन्तं सम्प्रेक्ष्य पाण्डवानां महारथाः।
अभ्यवर्तन्त वेगेन भीमसेनपुरोगमाः॥ ३९॥

उस हाथीको आते देख भीमसेन आदि पाण्डव महारथी शीघ्रतापूर्वक उसके चारों ओर खड़े हो गये॥ ३९॥

केकयाश्चाभिमन्युश्च द्रौपदेयाश्च सर्वशः।
दशार्णाधिपतिः शूरः क्षत्रदेवश्च मारिष॥ ४०॥
चेदिपश्चित्रकेतुश्च संरब्धाः सर्व एव ते।
उत्तमास्त्राणि दिव्यानि दर्शयन्तो महाबलाः॥ ४१॥
तमेकं कुञ्जरं क्रुद्धाः समन्तात् पर्यवारयन्।

आर्य! केकयराजकुमार, अभिमन्यु, द्रौपदीके पाँचों पुत्र, शूरवीर दशार्णराज, क्षत्रदेव, चेदिराज धृष्टकेतु तथा चित्रकेतु—ये सभी महाबली वीर रोषावेशमें

भरकर अपने उत्तम दिव्यास्त्रोंका प्रदर्शन करते हुए उस एकमात्र हाथीको क्रोधपूर्वक चारों ओरसे घेरकर खड़े हो गये॥ ४०-४१½॥

स विद्धो बहुभिर्बाणैर्व्यरोचत महाद्विपः॥ ४२॥
संजातरुधिरोत्पीडो धातुचित्र इवाद्रिराट्।

अनेक बाणोंसे घायल हुआ वह महान् गज रक्तरंजित होकर गेरु आदि धातुओंसे विचित्र दिखायी देनेवाले गिरिराजके समान सुशोभित हुआ॥ ४२½॥

दशार्णाधिपतिश्चापि गजं भूमिधरोपमम्॥ ४३॥
समास्थितोऽभिदुद्राव भगदत्तस्य वारणम्।

तदनन्तर दशार्णदेशके राजा भी एक पर्वताकार हाथीपर आरूढ़ हो भगदत्तके हाथीकी ओर बढ़े॥ ४३½॥

तमापतन्तं समरे गजं गजपतिः स च॥ ४४॥
दधार सुप्रतीकोऽपि वेलेव मकरालयम्।

समरभूमिमें अपनी ओर आते हुए उस हाथीको गजराज सुप्रतीकने उसी प्रकार रोक दिया, जैसे तटकी भूमि समुद्रको आगे बढ़नेसे रोके रहती है॥ ४४½॥

वारितं प्रेक्ष्य नागेन्द्रं दशार्णस्य महात्मनः॥ ४५॥
साधु साध्विति सैन्यानि पाण्डवेयान्यपूजयन्।

महामना दशार्णनरेशके गजराजको रोका गया देख समस्त पाण्डव सैनिक भी साधु-साधु कहकर सुप्रतीककी प्रशंसा करने लगे॥ ४५½॥

ततः प्राग्ज्योतिषः क्रुद्धस्तोमरान् वै चतुर्दश॥ ४६॥
प्राहिणोत् तस्य नागस्य प्रमुखे नृपसत्तम।

नृपश्रेष्ठ! तदनन्तर प्राग्ज्योतिषनरेशने कुपित होकर दशार्णनरेशके हाथीको सामनेसे चौदह तोमर मारे॥ ४६½॥

वर्म मुख्यं तनुत्राणं शातकुम्भपरिष्कृतम्॥ ४७॥
विदार्य प्राविशन् क्षिप्रं वल्मीकमिव पन्नगाः।

जैसे सर्प बाँबीमें प्रवेश करते हैं, उसी प्रकार वे तोमर हाथीपर पड़े हुए सुवर्णभूषित श्रेष्ठ कवचको छिन्न-भिन्न करके शीघ्र ही उसके शरीरमें घुस गये॥ ४७½॥

स गाढविद्धो व्यथितो नागो भरतसत्तम॥ ४८॥
उपावृत्तमदः क्षिप्रमभ्यवर्तत वेगितः।

भरतश्रेष्ठ! उन तोमरोंसे अत्यन्त घायल हो वह हाथी व्यथित हो उठा। उसका सारा मद उतर गया और वह बड़े वेगसे पीछेकी ओर लौट पड़ा॥ ४८½॥

स प्रदुद्राव वेगेन प्रणदन् भैरवं रवम्॥ ४९॥
सम्मर्दयानः स्वबलं वायुर्वृक्षानिवौजसा।

जैसे वायु अपनी शक्तिसे वृक्षोंको उखाड़ फेंकती है, उसी प्रकार वह हाथी भयानक स्वरमें चिग्घाड़ता और अपनी ही सेनाको रौंदता हुआ बड़े वेगसे भाग चला॥

तस्मिन् पराजिते नागे पाण्डवानां महारथाः॥ ५०॥
सिंहनादं विनद्योच्चैर्युद्धायैवावतस्थिरे।

उस हाथीके पराजित हो जानेपर भी पाण्डव महारथी उच्च स्वरसे सिंहनाद करके युद्धके लिये ही खड़े रहे॥ ५०½॥

ततो भीमं पुरस्कृत्य भगदत्तमुपाद्रवन्॥ ५१॥
किरन्तो विविधान् बाणान् शस्त्राणि विविधानि च।

तत्पश्चात् पाण्डव-सैनिक भीमसेनको आगे करके नाना प्रकारके बाणों तथा अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा करते हुए भगदत्तपर टूट पड़े॥ ५१½॥

तेषामापततां राजन् संक्रुद्धानाममर्षिणाम्॥ ५२॥
श्रुत्वा स निनदं घोरममर्षाद् गतसाध्वसः।
भगदत्तो महेष्वासः स्वनागं प्रत्यचोदयत्॥ ५३॥

राजन्! क्रोधमें भरकर आक्रमण करनेवाले, अमर्षशील उन पाण्डवोंका वह घोर सिंहनाद सुनकर महाधनुर्धर भगदत्तने अमर्षवश बिना किसी भयके अपने हाथीको उनकी ओर बढ़ाया॥ ५२-५३॥

अङ्कुशाङ्गुष्ठनुदितः स गजप्रवरो युधि।
तस्मिन् क्षणे समभवत् सांवर्तक इवानलः॥ ५४॥

उस समय उनके अंकुशों और पैरके अँगूठोंसे प्रेरित हो वह गजराज युद्धस्थलमें संवर्तक* अग्निकी भाँति भयंकर हो उठा॥ ५४॥

रथसंघांस्तथा नागान् हयांश्च हयसादिभिः।
पादातांश्च सुसंक्रुद्धः शतशोऽथ सहस्रशः॥ ५५॥
अमृद्नात् समरे नागः सम्प्रधावंस्ततस्ततः।

उस हाथीने अत्यन्त कुपित होकर रथके समूहों, हाथियों, घुड़सवारोंसहित घोड़ों तथा सैकड़ों-हजारों पैदल सिपाहियोंको भी समरांगणमें इधर-उधर दौड़ते हुए रौंद डाला॥ ५५½॥

तेन संलोड्यमानं तु पाण्डवानां बलं महत्॥ ५६॥
संचुकोच महाराज चर्मेवाग्नौ समाहितम्।

महाराज! उस हाथीके द्वारा आलोडित होकर पाण्डवोंकी वह विशाल सेना आगपर रखे हुए चमड़ेकी भाँति संकुचित हो गयी॥ ५६½॥

---

* प्रलयकालकी अग्निका नाम संवर्तक है।

भग्नं तु स्वबलं दृष्ट्वा भगदत्तेन धीमता॥ ५७॥
घटोत्कचोऽथ संक्रुद्धो भगदत्तमुपाद्रवत्।

बुद्धिमान् भगदत्तके द्वारा अपनी सेनामें भगदड़ पड़ी हुई देख घटोत्कचने अत्यन्त कुपित होकर भगदत्तपर धावा किया॥ ५७½॥

विकटः परुषो राजन् दीप्तास्यो दीप्तलोचनः॥ ५८॥
रूपं विभीषणं कृत्वा रोषेण प्रज्वलन्निव।

राजन्! उस समय वह अत्यन्त भयानक रूप बनाकर रोषसे प्रज्वलित-सा हो उठा। उसकी आकृति विकट एवं निष्ठुर दिखायी देती थी तथा मुख और नेत्र उज्ज्वल एवं प्रकाशित हो रहे थे॥ ५८½॥

जग्राह विमलं शूलं गिरीणामपि दारणम्॥ ५९॥
नागं जिघांसुः सहसा चिक्षेप च महाबलः।

उस महाबली निशाचरने हाथीको मार डालनेकी इच्छासे एक निर्मल त्रिशूल हाथमें लिया, जो पर्वतोंको भी विदीर्ण करनेवाला था। फिर सहसा उसे चला दिया॥ ५९½॥

स विस्फुलिङ्गमालाभिः समन्तात् परिवेष्टितः॥ ६०॥
तमापतन्तं सहसा दृष्ट्वा प्राग्ज्योतिषो नृपः।
चिक्षेप रुचिरं तीक्ष्णमर्धचन्द्रं सुदारुणम्॥ ६१॥

वह त्रिशूल चारों ओरसे आगकी चिनगारियोंके समूहसे घिरा हुआ था। उसे सहसा अपने ऊपर आते देख प्राग्ज्योतिषपुरके नरेश भगदत्तने अत्यन्त भयंकर तीक्ष्ण और सुन्दर एक अर्धचन्द्राकार बाण चलाया॥ ६०-६१॥

चिच्छेद तन्महच्छूलं तेन बाणेन वेगवान्।
उत्पपात द्विधा च्छिन्नं शूलं हेमपरिष्कृतम्॥ ६२॥
महाशनिर्यथा भ्रष्टा शक्रमुक्ता नभोगता।

उन वेगवान् नरेशने उक्त बाणके द्वारा उस महान् त्रिशूलको काट डाला। वह सुवर्णभूषित त्रिशूल दो टुकड़ोंमें कटकर ऊपरकी ओर उछला। उस समय वह इन्द्रके हाथसे छूटकर आकाशसे गिरते हुए महान् वज्रके समान सुशोभित हुआ॥ ६२½॥

शूलं निपतितं दृष्ट्वा द्विधा कृत्तं च पार्थिवः॥ ६३॥
रुक्मदण्डां महाशक्तिं जग्राहाग्निशिखोपमाम्।
चिक्षेप तां राक्षसस्य तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत्॥ ६४॥

त्रिशूलको दो टुकड़ोंमें कटकर गिरा हुआ देख राजा भगदत्तने आगकी लपटोंसे वेष्टित तथा सुवर्णमय दण्डसे विभूषित एक महाशक्ति हाथमें ली और उसे राक्षसपर चला दिया। फिर वे बोले—खड़ा रह, खड़ा रह॥ ६३-६४॥

तामापतन्तीं सम्प्रेक्ष्य वियत्स्थामशनीमिव।
उत्पत्य राक्षसस्तूर्णं जग्राह च ननाद च॥ ६५॥

आकाशमें प्रकाशित होनेवाली अशनि (वज्र)-के समान उस महाशक्तिको गिरती हुई देख राक्षस घटोत्कचने उछलकर तुरंत ही उसे पकड़ लिया और सिंहके समान गर्जना की॥ ६५॥

बभञ्ज चैनां त्वरितो जानुन्यारोप्य भारत।
पश्यतः पार्थिवेन्द्रस्य तदद्भुतमिवाभवत्॥ ६६॥

भारत! फिर उसने तुरंत ही राजा भगदत्तके देखते-देखते उस शक्तिको घुटनेपर रखकर तोड़ डाला। वह एक अद्भुत-सी बात हुई॥ ६६॥

तदवेक्ष्य कृतं कर्म राक्षसेन बलीयसा।
दिवि देवाः सगन्धर्वा मुनयश्चापि विस्मिताः॥ ६७॥

महाबली राक्षसके द्वारा किये गये इस महान् कर्मको देखकर आकाशमें खड़े हुए देवता, गन्धर्व और मुनि बड़े विस्मित हुए॥ ६७॥

पाण्डवाश्च महाराज भीमसेनपुरोगमाः।
साधु साध्विति नादेन पृथिवीमन्वनादयन्॥ ६८॥

महाराज! उस समय भीमसेन आदि पाण्डवोंने वाह-वाह कहते हुए अपने सिंहनादसे पृथ्वीको गुँजा दिया॥ ६८॥

तं तु श्रुत्वा महानादं प्रहृष्टानां महात्मनाम्।
नामृष्यत महेष्वासो भगदत्तः प्रतापवान्॥ ६९॥

हर्षमें भरे हुए उन महामना वीरोंका महान् सिंहनाद सुनकर महाधनुर्धर एवं प्रतापी राजा भगदत्त न सह सके॥ ६९॥

स विस्फार्य महच्चापमिन्द्राशनिसमप्रभम्।
तर्जयामास वेगेन पाण्डवानां महारथान्॥ ७०॥

उन्होंने इन्द्रके वज्रकी भाँति प्रकाशित होनेवाले अपने विशाल धनुषको खींचकर पाण्डव महारथियोंको वेगपूर्वक डाँट बतायी॥ ७०॥

विसृजन् विमलांस्तीक्ष्णान् नाराचाञ्ज्वलनप्रभान्।
भीममेकेन विव्याध राक्षसं नवभिः शरैः॥ ७१॥

तत्पश्चात् अग्निके समान प्रकाशित होनेवाले निर्मल और तीखे नाराचोंका प्रहार करते हुए एकके द्वारा भीमसेनको घायल किया और नौ बाणोंसे राक्षस घटोत्कचको बींध डाला॥ ७१॥

अभिमन्युं त्रिभिश्चैव केकयान् पञ्चभिस्तथा।
पूर्णायतविसृष्टेन शरेणानतपर्वणा॥ ७२॥
बिभेद दक्षिणं बाहुं क्षत्रदेवस्य चाहवे।
पपात सहसा तस्य सशरं धनुरुत्तमम्॥ ७३॥

फिर तीन बाणोंसे अभिमन्युको और पाँचसे केकयराजकुमारोंको घायल किया। तत्पश्चात् धनुषको

अच्छी तरह खींचकर छोड़े हुए झुकी हुई गाँठवाले बाणके द्वारा उन्होंने युद्धमें क्षत्रदेवकी दाहिनी बाँह काट डाली। उसके कटनेके साथ ही सहसा उनका बाणसहित उत्तम धनुष पृथ्वीपर गिर पड़ा॥ ७२-७३॥

द्रौपदेयांस्ततः पञ्च पञ्चभिः समताडयत्।
भीमसेनस्य च क्रोधान्निजघान तुरङ्गमान्॥ ७४॥

इसके बाद भगदत्तने द्रौपदीके पाँच पुत्रोंको पाँच बाणोंसे घायल कर दिया और क्रोधपूर्वक भीमसेनके घोड़ोंको मार डाला॥ ७४॥

ध्वजं केसरिणं चास्य चिच्छेद विशिखैस्त्रिभिः।
निर्बिभेद त्रिभिश्चान्यैः सारथिं चास्य पत्रिभिः॥ ७५॥

फिर तीन बाणोंसे उनके सिंहचिह्नित ध्वजको काट दिया और अन्य तीन पंखयुक्त बाण मारकर उनके सारथिको भी विदीर्ण कर डाला॥ ७५॥

स गाढविद्धो व्यथितो रथोपस्थ उपाविशत्।
विशोको भरतश्रेष्ठ भगदत्तेन संयुगे॥ ७६॥

भरतश्रेष्ठ! भगदत्तके द्वारा युद्धमें अधिक घायल होकर भीमसेनका सारथि विशोक व्यथित हो उठा और रथके पिछले भागमें चुपचाप बैठ गया॥ ७६॥

ततो भीमो महाबाहुर्विरथो रथिनां वरः।
गदां प्रगृह्य वेगेन प्रचस्कन्द रथोत्तमात्॥ ७७॥

इस प्रकार रथहीन होनेपर रथियोंमें श्रेष्ठ महाबाहु भीमसेन हाथमें गदा लेकर उस उत्तम रथसे वेगपूर्वक कूद पड़े॥ ७७॥

तमुद्यतगदं दृष्ट्वा सशृङ्गमिव पर्वतम्।
तावकानां भयं घोरं समपद्यत भारत॥ ७८॥

भारत! शृंगयुक्त पर्वतके समान उन्हें गदा उठाये आते देख आपके सैनिकोंके मनमें घोर भय समा गया॥ ७८॥

एतस्मिन्नेव काले तु पाण्डवः कृष्णसारथिः।
आजगाम महाराज निघ्नन् शत्रून् समन्ततः॥ ७९॥
यत्र तौ पुरुषव्याघ्रौ पितापुत्रौ महाबलौ।
प्राग्ज्योतिषेण संयुक्तौ भीमसेनघटोत्कचौ॥ ८०॥

महाराज! इसी समय श्रीकृष्ण जिनके सारथि हैं, वे पाण्डुनन्दन अर्जुन सब ओरसे शत्रुओंका संहार करते हुए वहाँ आ पहुँचे, जहाँ वे दोनों पुरुषसिंह महाबली पिता-पुत्र भीमसेन और घटोत्कच भगदत्तके साथ युद्ध कर रहे थे॥ ७९-८०॥

दृष्ट्वा च पाण्डवो भ्रातॄन् युध्यमानान् महारथान्।
त्वरितो भरतश्रेष्ठ तत्रायुध्यत् किरञ्छरान्॥ ८१॥

भरतश्रेष्ठ! पाण्डुनन्दन अर्जुन अपने महारथी भाइयोंको युद्ध करते देख स्वयं भी बाणोंकी वर्षा करते हुए तुरंत ही युद्धमें प्रवृत्त हो गये॥ ८१॥

ततो दुर्योधनो राजा त्वरमाणो महारथः।
सेनामचोदयत् क्षिप्रं रथनागाश्वसंकुलाम्॥ ८२॥

तब महारथी राजा दुर्योधनने बड़ी उतावलीके साथ रथ, हाथी और घोड़ोंसे भरी हुई अपनी सेनाको शीघ्र ही युद्धके लिये प्रेरित किया॥ ८२॥

तामापतन्तीं सहसा कौरवाणां महाचमूम्।
अभिदुद्राव वेगेन पाण्डवः श्वेतवाहनः॥ ८३॥

कौरवोंकी उस विशाल वाहिनीको आती देख श्वेत घोड़ोंवाले पाण्डुपुत्र अर्जुन सहसा बड़े वेगसे उसकी ओर दौड़े॥ ८३॥

भगदत्तश्च समरे तेन नागेन भारत।
विमृद्नन् पाण्डवबलं युधिष्ठिरमुपाद्रवत्॥ ८४॥

भारत! भगदत्तने भी समरभूमिमें उस हाथीके द्वारा पाण्डवसेनाको कुचलते हुए युधिष्ठिरपर धावा किया॥ ८४॥

तदाऽऽसीत् सुमहद् युद्धं भगदत्तस्य मारिष।
पञ्चालैः पाण्डवैश्चैश्च केकयैश्चोद्यतायुधैः॥ ८५॥

आर्य! उस समय हथियार उठाये हुए पांचालों, पाण्डवों तथा केकयोंके साथ भगदत्तका बड़ा भारी युद्ध हुआ॥ ८५॥

भीमसेनोऽपि समरे तावुभौ केशवार्जुनौ।
अश्रावयद् यथावृत्तमिरावद्वधमुत्तमम्॥ ८६॥

भीमसेनने भी समरभूमिमें श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनोंको इरावान्‌के वधका यथावत् वृत्तान्त अच्छी तरह सुना दिया॥ ८६॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि भगदत्तयुद्धे
पञ्चनवतितमोऽध्यायः॥ ९५॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें भगदत्तका युद्धविषयक पंचानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९५॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका १ श्लोक मिलाकर कुल ८७ श्लोक हैं।]

षण्णवतितमोऽध्यायः

इरावान्‌के वधसे अर्जुनका दुःखपूर्ण उद्‌गार, भीमसेनके द्वारा धृतराष्ट्रके नौ पुत्रोंका वध, अभिमन्यु और अम्बष्ठका युद्ध, युद्धकी भयानक स्थितिका वर्णन तथा आठवें दिनके युद्धका उपसंहार

संजय उवाच

पुत्रं विनिहतं श्रुत्वा इरावन्तं धनंजयः।
दुःखेन महताऽऽविष्टो निःश्वसन् पन्नगो यथा॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! अपने पुत्र इरावान्‌के वधका वृत्तान्त सुनकर अर्जुनको बड़ा दुःख हुआ। वे सर्पके समान लंबी साँस खींचने लगे॥ १॥

अब्रवीत् समरे राजन् वासुदेवमिदं वचः।
इदं नूनं महाप्राज्ञो विदुरो दृष्टवान् पुरा॥ २॥

नरेश्वर! तब उन्होंने समरभूमिमें भगवान् वासुदेवसे इस प्रकार कहा—'भगवन्! निश्चय ही महाज्ञानी विदुरने पहले ही यह सब देख लिया था॥ २॥

कुरूणां पाण्डवानां च क्षयं घोरं महामतिः।
स ततो निवारितवान् धृतराष्ट्रं जनेश्वरम्॥ ३॥

'कौरवों और पाण्डवोंका यह भयंकर विनाश परम बुद्धिमान् विदुरकी दृष्टिमें पहले ही आ गया था। इसलिये उन्होंने राजा धृतराष्ट्रको मना किया था॥ ३॥

अन्ये च बहवो वीराः संग्रामे मधुसूदन।
निहताः कौरवैः संख्ये तथास्माभिश्च कौरवाः॥ ४॥

'मधुसूदन! और भी बहुत-से वीरोंको संग्राममें कौरवोंने मारा और हमने कौरव सैनिकोंका संहार किया॥

अर्थहेतोर्नरश्रेष्ठ क्रियते कर्म कुत्सितम्।
धिगर्थान् यत्कृते ह्येवं क्रियते ज्ञातिसंक्षयः॥ ५॥

'नरश्रेष्ठ! धनके लिये यह कुत्सित कर्म किया जा रहा है। धिक्कार है उस धनको, जिसके लिये इस प्रकार जाति-भाइयोंका विनाश किया जाता है॥ ५॥

अधनस्य मृतं श्रेयो न च ज्ञातिवधाद् धनम्।
किं नु प्राप्स्यामहे कृष्ण हत्वा ज्ञातीन् समागतान्॥ ६॥

'मनुष्यका निर्धन रहकर मर जाना अच्छा है, परंतु जाति-भाइयोंके वधसे धन प्राप्त करना कदापि अच्छा नहीं है। कृष्ण! हम यहाँ आये हुए इन जाति-भाइयोंको मारकर क्या प्राप्त कर लेंगे॥ ६॥

दुर्योधनापराधेन शकुनेः सौबलस्य च।
क्षत्रिया निधनं यान्ति कर्णदुर्मन्त्रितेन च॥ ७॥

'दुर्योधनके अपराधसे और सुबलपुत्र शकुनि तथा कर्णकी कुमन्त्रणासे ये क्षत्रिय मारे जा रहे हैं॥ ७॥

इदानीं च विजानामि सुकृतं मधुसूदन।
कृतं राज्ञा महाबाहो याचता च सुयोधनम्॥ ८॥

महाबाहु मधुसूदन! राजा युधिष्ठिरने दुर्योधनसे पहले जो याचना की थी, वही उत्तम कार्य था; यह बात अब मेरी समझमें आ रही है॥ ८॥

राज्यार्धं पञ्च वा ग्रामान् नाकार्षीत् स च दुर्मतिः।
दृष्ट्वा हि क्षत्रियान् शूरान् शयानान् धरणीतले॥ ९॥
निन्दामि भृशमात्मानं धिगस्तु क्षत्रजीविकाम्।

'युधिष्ठिरने आधा राज्य अथवा पाँच गाँव माँगे थे, परंतु दुर्बुद्धि दुर्योधनने उनकी माँग पूरी नहीं की। आज क्षत्रिय वीरोंको रणभूमिमें सोते देख मैं सबसे अधिक अपनी निन्दा करता हूँ। क्षत्रियोंकी इस जीविकाको धिक्कार है॥ ९½॥

अशक्तमिति मामेते ज्ञास्यन्ते क्षत्रिया रणे॥ १०॥
युद्धं तु मे न रुचितं ज्ञातिभिर्मधुसूदन।

'मधुसूदन! रणक्षेत्रमें मेरे मुखसे ऐसी बात सुनकर ये क्षत्रिय मुझे असमर्थ समझेंगे, परंतु इन जाति-भाइयोंके साथ युद्ध करना मुझे अच्छा नहीं लगता है॥ १०½॥

संचोदय हयान् शीघ्रं धार्तराष्ट्रचमूं प्रति॥ ११॥
प्रतरिष्ये महापारं भुजाभ्यां समरोदधिम्।

(तथापि मैं आपके आदेशानुसार युद्ध करूँगा; अतः) 'आप शीघ्र ही अपने घोड़ोंको दुर्योधनकी सेनाकी ओर हाँकिये, जिससे इन दोनों भुजाओंद्वारा अपार सैन्यसागरको पार करूँ॥ ११½॥

नायं यापयितुं कालो विद्यते माधव क्वचित्॥ १२॥
एवमुक्तस्तु पार्थेन केशवः परवीरहा।
चोदयामास तानश्वान् पाण्डुरान् वातरंहसः॥ १३॥

'माधव! यह समयको व्यर्थ बितानेका अवसर नहीं है।' अर्जुनके ऐसा कहनेपर शत्रुवीरोंका विनाश करनेवाले केशवने वायुके समान वेगशाली उन श्वेत घोड़ोंको आगे बढ़ाया॥ १२-१३॥

अथ शब्दो महानासीत् तव सैन्यस्य भारत।
मारुतोद्धतवेगस्य सागरस्येव पर्वणि॥ १४॥

भारत! तदनन्तर जैसे पूर्णिमाको वायुकी प्रेरणासे समुद्रका वेग बढ़ जानेसे उसकी भीषण गर्जना सुनायी

पड़ती है, उसी प्रकार आपकी सेनाका महान् कोलाहल प्रकट हुआ॥ १४॥

अपराह्णे महाराज संग्रामः समपद्यत।
पर्जन्यसमनिर्घोषो भीष्मस्य सह पाण्डवैः॥ १५॥

महाराज! अपराह्णकालमें पाण्डवोंके साथ भीष्मका भीषण संग्राम आरम्भ हुआ, जिसमें मेघकी गर्जनाके समान गम्भीर घोष हो रहा था॥ १५॥

ततो राजंस्तव सुता भीमसेनमुपाद्रवन्।
परिवार्य रणे द्रोणं वसवो वासवं यथा॥ १६॥

राजन्! तब आपके पुत्र, जैसे वसुगण इन्द्रके सब ओर खड़े होते हैं, उसी प्रकार द्रोणाचार्यको चारों ओरसे घेरकर रणभूमिमें भीमसेनपर टूट पड़े॥ १६॥

ततः शान्तनवो भीष्मः कृपश्च रथिनां वरः।
भगदत्तः सुशर्मा च धनंजयमुपाद्रवन्॥ १७॥

तत्पश्चात् शान्तनुनन्दन भीष्म, रथियोंमें श्रेष्ठ कृपाचार्य, भगदत्त और सुशर्माने अर्जुनपर धावा किया॥ १७॥

हार्दिक्यो बाह्लिकश्चैव सात्यकिं समभिद्रुतौ।
अम्बष्ठकस्तु नृपतिरभिमन्युमवस्थितः॥ १८॥

कृतवर्मा और बाह्लीक सात्यकिपर टूट पड़े। राजा अम्बष्ठने अभिमन्युका सामना किया॥ १८॥

शेषास्त्वन्ये महाराज शेषानेव महारथान्।
ततः प्रववृते युद्धं घोररूपं भयावहम्॥ १९॥

महाराज! शेष अन्य महारथियोंने शत्रुपक्षके शेष महारथियोंपर आक्रमण किया। फिर तो उनमें घोर एवं भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ॥ १९॥

भीमसेनस्तु सम्प्रेक्ष्य पुत्रांस्तव जनेश्वर।
प्रजज्वाल रणे क्रुद्धो हविषा हव्यवाडिव॥ २०॥

जनेश्वर! जैसे घीकी आहुति देनेसे अग्निदेव प्रज्वलित हो उठते हैं, उसी प्रकार रणक्षेत्रमें आपके पुत्रोंको देखकर भीमसेन क्रोधसे जल उठे॥ २०॥

पुत्रास्तु तव कौन्तेयं छादयाञ्चक्रिरे शरैः।
प्रावृषीव महाराज जलदा इव पर्वतम्॥ २१॥

परंतु महाराज! आपके पुत्रोंने कुन्तीनन्दन भीमको अपने बाणोंसे उसी प्रकार आच्छादित कर दिया, जैसे वर्षा-ऋतुमें बादल पर्वतको जलकी धाराओंसे ढक लेते हैं॥ २१॥

स च्छाद्यमानो बहुधा पुत्रैस्तव विशाम्पते।
सृक्किणी संलिहन् वीरः शार्दूल इव दर्पितः॥ २२॥
व्यूढोरस्कं ततो भीमः पातयामास भारत।
क्षुरप्रेण सुतीक्ष्णेन सोऽभवद् गतजीवितः॥ २३॥

प्रजानाथ! भरतनन्दन! आपके पुत्रोंद्वारा बारंबार बाणोंकी वर्षासे आच्छादित किये जानेपर क्रोधपूर्वक अपने मुँहके कोनोंको चाटते हुए सिंहके समान शौर्यका अभिमान रखनेवाले वीर भीमसेनने एक अत्यन्त तीखे क्षुरप्रके द्वारा आपके पुत्र व्यूढोरस्कको मार गिराया। उसकी जीवन-लीला समाप्त हो गयी॥ २२-२३॥

अपरेण तु भल्लेन पीतेन निशितेन तु।
अपातयत् कुण्डलिनं सिंहः क्षुद्रमृगं यथा॥ २४॥

तत्पश्चात् जैसे सिंह छोटे-से मृगको दबोच लेता है, उसी प्रकार भीमने दूसरे पानीदार एवं तीखे भल्लसे आपके पुत्र कुण्डलीको धराशायी कर दिया॥ २४॥

ततः सुनिशितान् पीतान् समादत्त शिलीमुखान्।
ससर्ज त्वरया युक्तः पुत्रांस्ते प्राप्य मारिष॥ २५॥

आर्य! इसके बाद भीमने बड़ी उतावलीके साथ बहुत-से तीखे और पानीदार बाण हाथमें लिये और आपके पुत्रोंको लक्ष्य करके छोड़ दिये॥ २५॥

प्रेषिता भीमसेनेन शरास्ते दृढधन्वना।
अपातयन्त पुत्रांस्ते रथेभ्यः सुमहारथान्॥ २६॥

सुदृढ़ धनुर्धर भीमसेनके द्वारा चलाये हुए उन बाणोंने आपके बहुत-से महारथी पुत्रोंको मारकर रथोंसे नीचे गिरा दिया॥ २६॥

अनाधृष्टिं कुण्डभेदिं वैराटं दीर्घलोचनम्।
दीर्घबाहुं सुबाहुं च तथैव कनकध्वजम्॥ २७॥

उनके नाम इस प्रकार हैं—अनाधृष्टि, कुण्डभेदि, वैराट, दीर्घलोचन, दीर्घबाहु, सुबाहु तथा कनकध्वज॥ २७॥

प्रपतन्त स्म वीरास्ते विरेजुर्भरतर्षभ।
वसन्ते पुष्पशबलाश्चूताः प्रपतिता इव॥ २८॥

भरतश्रेष्ठ! वे सभी वीर वहाँ गिरकर वसन्त-ऋतुमें धराशायी हुए पुष्पयुक्त आम्रवृक्षोंकी भाँति सुशोभित हो रहे थे॥ २८॥

ततः प्रदुद्रुवुः शेषास्तव पुत्रा महाहवे।
तं कालमिव मन्यन्तो भीमसेनं महाबलम्॥ २९॥

तब उस महायुद्धमें आपके शेष पुत्र महाबली भीमसेनको कालके समान समझकर वहाँसे भाग चले॥ २९॥

द्रोणस्तु समरे वीरं निर्दहन्तं सुतांस्तव।
यथाद्रिं वारिधाराभिः समन्ताद् व्यकिरच्छरैः॥ ३०॥

तदनन्तर युद्धस्थलमें आपके पुत्रोंको दग्ध करते हुए वीर भीमसेनपर द्रोणाचार्यने सब ओरसे उसी प्रकार बाणोंकी वर्षा आरम्भ की, जैसे बादल पर्वतपर जलकी धाराएँ गिराते हैं॥ ३०॥

तत्राद्भुतमपश्याम कुन्तीपुत्रस्य पौरुषम्।
द्रोणेन वार्यमाणोऽपि निजघ्ने यत् सुतांस्तव॥ ३१॥

महाराज! उस समय हमने कुन्तीपुत्र भीमका अद्भुत पराक्रम देखा। यद्यपि द्रोणाचार्य बाणोंकी वर्षा करके उन्हें रोक रहे थे, तो भी उन्होंने आपके पुत्रोंको मार डाला॥

यथा गोवृषभो वर्षं संधारयति खात् पतत्।
भीमस्तथा द्रोणमुक्तं शरवर्षमदीधरत्॥ ३२॥

जैसे साँड़ आकाशसे गिरती हुई जल-वर्षाको अपने शरीरपर शान्त भावसे धारण और सहन करता है, उसी प्रकार भीमसेन द्रोणाचार्यकी छोड़ी हुई बाण-वर्षाको धारण कर रहे थे॥ ३२॥

अद्भुतं च महाराज तत्र चक्रे वृकोदरः।
यत् पुत्रांस्तेऽवधीत् संख्ये द्रोणं चैव न्यवारयत्॥ ३३॥

महाराज! भीमसेनने उस युद्धस्थलमें आपके पुत्रोंका वध तो किया ही, द्रोणाचार्यको भी आगे बढ़नेसे रोक रखा था। यह उन्होंने अद्भुत पराक्रम किया॥ ३३॥

पुत्रेषु तव वीरेषु चिक्रीडार्जुनपूर्वजः।
मृगेष्विव महाराज चरन् व्याघ्रो महाबलः॥ ३४॥

राजन्! जैसे महाबली व्याघ्र मृगोंके झुंडमें विचरता हो, उसी प्रकार भीमसेन आपके वीर पुत्रोंके समुदायमें खेल रहे थे॥ ३४॥

यथा हि पशुमध्यस्थो दारयेत पशून् वृकः।
वृकोदरस्तव सुतांस्तथा व्यद्रावयद् रणे॥ ३५॥

जैसे भेड़िया पशुओंके बीचमें रहकर भी उन्हें विदीर्ण कर डालता है, उसी प्रकार भीमसेन रणभूमिमें आपके पुत्रोंको भगा रहे थे॥ ३५॥

गाङ्गेयो भगदत्तश्च गौतमश्च महारथाः।
पाण्डवं रभसं युद्धे वारयामासुरर्जुनम्॥ ३६॥

दूसरी ओर गंगानन्दन भीष्म, भगदत्त और कृपाचार्य—ये तीनों महारथी युद्धमें वेगसे आगे बढ़नेवाले पाण्डुकुमार अर्जुनका निवारण कर रहे थे॥ ३६॥

अस्त्रैरस्त्राणि संवार्य तेषां सोऽतिरथो रणे।
प्रवीरांस्तव सैन्येषु प्रेषयामास मृत्यवे॥ ३७॥

परंतु अतिरथी वीर अर्जुनने रणभूमिमें उनके अस्त्रोंका अस्त्रोंद्वारा निवारण करके आपकी सेनाके प्रमुख वीरोंको यमराजके पास भेज दिया॥ ३७॥

अभिमन्युस्तु राजानमम्बष्ठं लोकविश्रुतम्।
विरथं रथिनां श्रेष्ठं वारयामास सायकैः॥ ३८॥

अभिमन्युने रथियोंमें श्रेष्ठ लोकविख्यात राजा अम्बष्ठको सायकोंद्वारा रथहीन करके आगे बढ़नेसे रोक दिया॥ ३८॥

विरथो वध्यमानस्तु सौभद्रेण यशस्विना।
अवप्लुत्य रथात् तूर्णमम्बष्ठो वसुधाधिपः॥ ३९॥
असिं चिक्षेप समरे सौभद्रस्य महात्मनः।
आरुरोह रथं चैव हार्दिक्यस्य महाबलः॥ ४०॥

यशस्वी सुभद्राकुमार अभिमन्युसे पीड़ित एवं रथहीन होकर राजा अम्बष्ठ अपने रथसे कूद पड़े और महामना सुभद्राकुमारपर उन्होंने रणक्षेत्रमें तलवार चलायी। फिर वे महाबली नरेश कृतवर्माके रथपर जा बैठे॥ ३९-४०॥

आपतन्तं तु निस्त्रिंशं युद्धमार्गविशारदः।
लाघवाद् व्यंसयामास सौभद्रः परवीरहा॥ ४१॥

युद्धके पैतरोंको जाननेमें कुशल तथा शत्रुवीरोंका संहार करनेवाले सुभद्राकुमारने अपनी ओर आती हुई अम्बष्ठकी तलवारको अपनी फुर्तीके कारण निष्फल कर दिया॥ ४१॥

व्यंसितं वीक्ष्य निस्त्रिंशं सौभद्रेण रणे तदा।
साधु साध्विति सैन्यानां प्रणादोऽभूद् विशाम्पते॥ ४२॥

प्रजानाथ! उस समय रणक्षेत्रमें अम्बष्ठकी चलायी हुई तलवारको सुभद्राकुमारद्वारा निष्फल की गयी देख समस्त सैनिकोंके मुखसे निकली हुई 'साधु-साधु' (वाह-वाह)-की ध्वनि गूँज उठी॥ ४२॥

धृष्टद्युम्नमुखास्त्वन्ये तव सैन्यमयोधयन्।
तथैव तावकाः सर्वे पाण्डुसैन्यमयोधयन्॥ ४३॥

धृष्टद्युम्न आदि अन्य महारथी आपकी सेनाके साथ तथा आपके प्रमुख सैनिक पाण्डव-सेनाके साथ युद्ध करने लगे॥ ४३॥

तत्राक्रन्दो महानासीत् तव तेषां च भारत।
(पाण्डवानां च राजेन्द्र सैनिकानां सुदारुणः।)
निघ्नतां दृढमन्योन्यं कुर्वतां कर्म दुष्करम्॥ ४४॥

भारत! राजेन्द्र! एक-दूसरेपर सुदृढ़ प्रहार और दुष्कर पराक्रम करनेवाले आपके और पाण्डवोंके सैनिकोंमें अत्यन्त भयंकर महान् संग्राम होने लगा॥ ४४॥

अन्योन्यं हि रणे शूराः केशेष्वाक्षिप्य मानिनः।
नखदन्तैरयुध्यन्त मुष्टिभिर्जानुभिस्तथा॥ ४५॥

कितने ही मानी शूरवीर उस रणक्षेत्रमें एक-दूसरेके केश पकड़कर नखों, दाँतों, मुक्कों और घुटनोंसे प्रहार करते हुए लड़ रहे थे॥ ४५॥

तलैश्चैवाथ निस्त्रिंशैर्बाहुभिश्च सुसंस्थितैः।
विवरं प्राप्य चान्योन्यमनयन् यमसादनम्॥ ४६॥

अवसर पाकर वे थप्पड़ों, तलवारों तथा सुदृढ़ भुजाओंद्वारा भी एक-दूसरेको यमलोक पहुँचा देते थे॥ ४६॥

न्यहनच्च पिता पुत्रं पुत्रश्च पितरं तथा।
व्याकुलीकृतसर्वाङ्गा युयुधुस्तत्र मानवाः॥ ४७॥

उस युद्धमें पिताने पुत्रको और पुत्रने पिताको मार डाला। सबके सभी अंग व्याकुल हो गये थे, तो भी सब लोग युद्ध कर रहे थे॥ ४७॥

रणे चारूणि चापानि हेमपृष्ठानि मारिष।
हतानामपविद्धानि कलापाश्च महाधनाः॥ ४८॥

आर्य! उस रणक्षेत्रमें मारे गये नरेशोंके सुवर्णमय पृष्ठसे विभूषित सुन्दर धनुष तथा बहुमूल्य तरकस जहाँ-तहाँ पड़े हुए थे॥ ४८॥

जातरूपमयैः पुङ्खै राजतैर्निशिताः शराः।
तैलधौता व्यराजन्त निर्मुक्तभुजगोपमाः॥ ४९॥

सोने अथवा चाँदीके पंखोंसे युक्त तथा तेलके धोये हुए तीखे बाण केचुल छोड़कर निकले हुए सर्पोंके समान सुशोभित होते थे॥ ४९॥

हस्तिदन्तत्सरून् खड्गाञ्जातरूपपरिष्कृतान्।
चर्माणि चापविद्धानि रुक्मचित्राणि धन्विनाम्॥ ५०॥

हमने देखा कि रणभूमिमें धनुर्धर वीरोंकी तलवारें और ढालें फेंकी पड़ी हैं। तलवारोंमें हाथीके दाँतकी मूँठें लगी थीं और उनमें यथास्थान सुवर्ण जड़ा हुआ था। इसी प्रकार ढालोंमें सुवर्णमय विचित्र तारक चिह्न दिखायी देते थे॥ ५०॥

सुवर्णविकृतप्रासान् पट्टिशान् हेमभूषितान्।
जातरूपमयाश्चर्ष्टीः शक्तीश्च कनकोज्ज्वलाः॥ ५१॥

सुवर्णभूषित प्रास, स्वर्णजटित पट्टिश, सोनेकी बनी हुई ऋष्टियाँ तथा स्वर्णभूषित चमकीली शक्तियाँ यत्र-तत्र पड़ी हुई थीं॥ ५१॥

सुसंनाहाश्च पतिता मुसलानि गुरूणि च।
परिघान् पट्टिशांश्चैव भिन्दिपालांश्च मारिष॥ ५२॥

आर्य! वहाँ सुन्दर कवच पड़े थे। भारी मूसल, परिघ, पट्टिश और भिन्दिपाल भी इधर-उधर बिखरे दिखायी देते थे॥ ५२॥

पतितान् विविधांश्चापांश्चित्रान् हेमपरिष्कृतान्।
कुथा बहुविधाकाराश्चामरान् व्यजनानि च॥ ५३॥

नाना प्रकारके विचित्र एवं स्वर्णभूषित धनुष गिरे हुए थे। हाथीकी पीठपर बिछाये जानेवाले भाँति-भाँतिके कम्बल तथा चँवर और व्यजन भी यत्र-तत्र गिरे दिखायी देते थे॥ ५३॥

नानाविधानि शस्त्राणि प्रगृह्य पतिता नराः।
जीवन्त इव दृश्यन्ते गतसत्त्वा महारथाः॥ ५४॥

भाँति-भाँतिके अस्त्र-शस्त्रोंको हाथोंमें लेकर पृथ्वीपर पड़े हुए प्राणहीन महारथी सैनिक जीवित-से दिखायी देते थे॥ ५४॥

गदाविमथितैर्गात्रैर्मुसलैर्भिन्नमस्तकाः।
गजवाजिरथक्षुण्णाः शेरते स्म नराः क्षितौ॥ ५५॥

किन्हींके शरीर गदाकी चोटसे चूर-चूर हो गये थे, किन्हींके मस्तक मूसलोंकी मारसे फट गये थे तथा कितने ही मनुष्य घोड़े, हाथी एवं रथोंसे कुचल गये थे। ये सभी वहाँ पृथ्वीपर प्राणहीन होकर सो गये थे॥ ५५॥

तथैवाश्वनृनागानां शरीरैर्विबभौ तदा।
संछन्ना वसुधा राजन् पर्वतैरिव सर्वशः॥ ५६॥

राजन्! इसी प्रकार घोड़े, हाथी और मनुष्योंके मृत शरीरोंसे सारी वसुधा आच्छादित हो उस समय पर्वतोंसे ढकी हुई-सी जान पड़ती थी॥ ५६॥

समरे पतितैश्चैव शक्त्यृष्टिशरतोमरैः।
निस्त्रिंशैः पट्टिशैः प्रासैरयस्कुन्तैः परश्वधैः॥ ५७॥
परिघैर्भिन्दिपालैश्च शतघ्नीभिश्च मारिष।
शरीरैः शस्त्रनिर्भिन्नैः समास्तीर्यत मेदिनी॥ ५८॥

आर्य! समरभूमिमें गिरे हुए बाण, तोमर, शक्ति, ऋष्टि, खड्ग, पट्टिश, प्रास, लोहेके भाले, फरसे, परिघ, भिन्दिपाल तथा शतघ्नी (तोप)—इन अस्त्र-शस्त्रों तथा इनके द्वारा विदीर्ण हुए मृत शरीरोंसे सारी पृथ्वी पट गयी थी॥ ५७-५८॥

विशब्दैरल्पशब्दैश्च शोणितौघपरिप्लुतैः।
गतासुभिरमित्रघ्न विबभौ निचिता मही॥ ५९॥

शत्रुओंका नाश करनेवाले महाराज! वहाँ पृथ्वीपर कुछ ऐसे लोग गिरे थे, जिनके मुखसे शब्द नहीं निकल पाता था। कुछ ऐसे थे, जो बहुत थोड़ा बोल पाते थे। प्रायः सभी लोग खूनसे लथपथ हो रहे थे और बहुत-से ऐसे शरीर पड़े थे, जो सर्वथा प्राणहीन हो चुके थे। इन सबके द्वारा वहाँकी भूमि मानो चुन दी गयी थी॥ ५९॥

सतलत्रैः सकेयूरैर्बाहुभिश्चन्दनोक्षितैः।
हस्तिहस्तोपमैश्छिन्नैरूरुभिश्च तरस्विनाम्॥ ६०॥
बद्धचूडामणिवरैः शिरोभिश्च सकुण्डलैः।
पातितैर्ऋषभाक्षाणां बभौ भारत मेदिनी॥ ६१॥

भारत! रणभूमिमें गिरे हुए बैलके समान विशाल नेत्रोंवाले वेगशाली वीरोंकी दस्तानों और केयूरोंसे युक्त चन्दनचर्चित भुजाओंसे, हाथीकी सूँड़के समान प्रतीत होनेवाली छिन्न-भिन्न हुई जाँघोंसे तथा उत्तम चूड़ामणि (मुकुट)-से आबद्ध कुण्डलमण्डित मस्तकोंसे वहाँकी भूमि अद्भुत शोभा पा रही थी॥ ६०-६१॥

कवचैः शोणितादिग्धैर्विप्रकीर्णैश्च काञ्चनैः।
रराज सुभृशं भूमिः शान्तार्चिभिरिवानलैः॥ ६२॥

रक्तमें सनकर इधर-उधर बिखरे हुए सुवर्णमय कवचोंसे वह युद्धभूमि ऐसे सुशोभित हो रही थी, मानो वहाँ जिसकी लपटें शान्त हो गयी हैं, ऐसी आग जगह-जगह पड़ी हो॥ ६२॥

विप्रविद्धैः कलापैश्च पतितैश्च शरासनैः।
विप्रकीर्णैः शरैश्चैव रुक्मपुङ्खैः समन्ततः॥ ६३॥

चारों ओर तरकस फेंके पड़े थे, धनुष गिरे थे और सोनेके पंखवाले बाण बिखरे हुए थे॥ ६३॥

रथैश्च सर्वतो भग्नैः किङ्किणीजालभूषितैः।
वाजिभिश्च हतैर्बाणैः स्रस्तजिह्वैः सशोणितैः॥ ६४॥

सब ओर क्षुद्रघण्टिकाओंके जालसे विभूषित टूटे-फूटे रथ पड़े थे। बाणोंसे मारे गये घोड़े खूनसे लथपथ हो जीभ निकाले ढेर हो रहे थे॥ ६४॥

अनुकर्षैः पताकाभिरुपासङ्गैर्ध्वजैरपि।
प्रवीराणां महाशङ्खैर्विप्रकीर्णैश्च पाण्डुरैः॥ ६५॥

अनुकर्ष, पताका, उपासंग, ध्वज तथा बड़े-बड़े वीरोंके श्वेत महाशंख बिखरे पड़े थे॥ ६५॥

स्रस्तहस्तैश्च मातङ्गैः शयानैर्विबभौ मही।
नानारूपैरलंकारैः प्रमदेवाभ्यलंकृता॥ ६६॥

जिनकी सूँड़ें कट गयी थीं, ऐसे मतवाले हाथी धराशायी हो रहे थे। उन सबके द्वारा वह रणभूमि भाँति-भाँतिके अलंकारोंसे अलंकृत युवतीके समान सुशोभित हो रही थी॥ ६६॥

दन्तिभिश्चापरैस्तत्र सप्रासैर्गाढवेदनैः।
करैः शब्दं विमुञ्चद्भिः शीकरं च मुहुर्मुहुः॥ ६७॥

कुछ दन्तार हाथी प्रास धँस जानेके कारण गहरी व्यथासे युक्त सूँड़ोंद्वारा बारंबार शब्द करते और पानीके कण फेंकते थे॥ ६७॥

विबभौ तद् रणस्थानं स्यन्दमानैरिवाचलैः।
नानारागैः कम्बलैश्च परिस्तोमैश्च दन्तिनाम्॥ ६८॥
वैदूर्यमणिदण्डैश्च पतितैरङ्कुशैः शुभैः।

उनके कारण वह युद्धस्थल जलके स्रोत बहानेवाले पर्वतोंसे युक्त-सा प्रतीत होता था। वहाँ नाना प्रकारके रंगवाले कम्बल, हाथियोंके झूल तथा वैदूर्यमणिके दण्डवाले सुन्दर अंकुश गिरे हुए थे॥ ६८½॥

घण्टाभिश्च गजेन्द्राणां पतिताभिः समन्ततः॥ ६९॥
विपाटितविचित्राभिः कुथाभिरङ्कुशैस्तथा।
ग्रैवेयैश्चित्ररूपैश्च रुक्मकक्ष्याभिरेव च॥ ७०॥

चारों ओर गजराजोंके घंटे पड़े हुए थे। हाथियोंकी पीठपर बिछाये जानेवाले फटे हुए विचित्र कम्बल और अंकुश सब ओर गिरे हुए थे। गलेके विचित्र आभूषण और सुनहरे रस्से भी जहाँ-तहाँ बिखरे पड़े थे॥ ६९-७०॥

यन्त्रैश्च बहुधाच्छिन्नैस्तोमरैश्चापि काञ्चनैः।
अश्वानां रेणुकपिलै रुक्मच्छन्नैरुरश्छदैः॥ ७१॥
सादिनां भुजगैश्छिन्नैः पतितैः साङ्गदैस्तथा।
प्रासैश्च विमलैस्तीक्ष्णैर्विमलाभिस्तथर्ष्टिभिः॥ ७२॥

अनेक टुकड़ोंमें कटे हुए यन्त्र, सुवर्णमय तोमर, धूलसे कपिल वर्णके दिखायी देनेवाले अश्वोंकी छातीको ढकनेवाले सुनहरे कवच, बाजूबंदसहित घुड़सवारोंके हाथोंमें धारण किये हुए तीखे और चमकीले प्रास तथा चमचमाती हुई ऋष्टियाँ छिन्न-भिन्न होकर यत्र-तत्र पड़ी थीं॥ ७१-७२॥

उष्णीषैश्च तथा चित्रैर्विप्रविद्धैस्ततस्ततः।
विचित्रैर्बाणवर्षैश्च जातरूपपरिष्कृतैः॥ ७३॥
अश्वास्तरपरिस्तोमै राङ्कवैर्मृदितैस्तथा।
नरेन्द्रचूडामणिभिर्विचित्रैश्च महाधनैः॥ ७४॥

जहाँ-तहाँ गिरे हुए विचित्र उष्णीष (पगड़ी आदि), पानीकी तरह बरसाये गये सुवर्णभूषित नाना प्रकारके बाण, घोड़ोंकी जीन, झूल और उनकी पीठपर बिछाने योग्य रंकु नामक मृगोंके कोमल चर्ममय आसन, जो पैरोंसे कुचलकर धूलमें सन गये थे तथा नरेशोंके मुकुटमें आबद्ध बहुमूल्य एवं विचित्र मणिरत्न सब ओर बिखरे पड़े थे॥ ७३-७४॥

छत्रैस्तथापविद्धैश्च चामरैर्व्यजनैरपि।
पद्मेन्दुद्युतिभिश्चैव वदनैश्चारुकुण्डलैः॥ ७५॥
क्लृप्तश्मश्रुभिरत्यर्थं वीराणां समलंकृतैः।
अपविद्धैर्महाराज सुवर्णोज्ज्वलकुण्डलैः॥ ७६॥
ग्रहनक्षत्रशबला द्यौरिवासीद् वसुन्धरा।

इधर-उधर गिरे हुए राजाओंके छत्र, चँवर, व्यजन, वीर योद्धाओंके मनोहर कुण्डलोंसे विभूषित, कमल एवं चन्द्रमाके समान कान्तिमान् तथा मूँछोंसे युक्त और अत्यन्त अलंकृत कटे हुए मस्तक, जिनमें सोनेके सुन्दर कुण्डल जगमगा रहे थे, फेंके हुए-से पड़े थे। महाराज! इन सब वस्तुओंसे आच्छादित हुई वहाँकी भूमि ग्रहों और नक्षत्रोंसे भरे हुए आकाशके समान विचित्र शोभा धारण कर रही थी॥ ७५-७६½॥

एवमेते महासेने मृदिते तत्र भारत॥ ७७॥
परस्परं समासाद्य तव तेषां च संयुगे।

भारत! इस प्रकार आपकी और पाण्डवोंकी वे दोनों विशाल सेनाएँ एक-दूसरीसे भिड़कर युद्धस्थलमें रौंदी जा रही थी॥ ७७½॥

तेषु श्रान्तेषु भग्नेषु मृदितेषु च भारत॥ ७८॥
रात्रिः समभवत् तत्र नापश्याम ततोऽनुगान्।
ततोऽवहारं सैन्यानां प्रचक्रुः कुरुपाण्डवाः॥ ७९॥

भरतनन्दन! उस समय जब अधिकांश सैनिक परिश्रमसे चूर-चूर हो रहे थे, कितने ही भाग गये थे और बहुतेरे योद्धा रौंद डाले गये थे, रात हो गयी थी एवं हमें अपने सेवक नहीं दिखायी दे रहे थे, तब कौरवों और पाण्डवोंने अपनी-अपनी सेनाको युद्धभूमिसे लौटनेका आदेश दे दिया॥ ७८-७९॥

रजनीमुखे सुरौद्रे तु वर्तमाने महाभये।
अवहारं ततः कृत्वा सहिताः कुरुपाण्डवाः।
न्यविशन्त यथाकालं गत्वा स्वशिबिरं तदा॥ ८०॥

फिर उस महाभयानक तथा अत्यन्त रौद्र रूपवाले प्रदोषकालमें कौरव तथा पाण्डव एक साथ अपनी सेनाओंको लौटाकर यथासमय शिविरमें जा पहुँचे और विश्राम करने लगे॥ ८०॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि अष्टमदिवसयुद्धावहारे षण्णवतितमोऽध्यायः॥ ९६॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें आठवें दिनके युद्धमें सेनाके शिविरमें लौटनेसे सम्बन्ध रखनेवाला छानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९६॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका $\frac{१}{२}$ श्लोक मिलाकर कुल ८०$\frac{१}{२}$ श्लोक हैं।]

सप्तनवतितमोऽध्यायः

दुर्योधनका अपने मन्त्रियोंसे सलाह करके भीष्मसे पाण्डवोंको मारने अथवा कर्णको युद्धके लिये आज्ञा देनेका अनुरोध करना

संजय उवाच

ततो दुर्योधनो राजा शकुनिश्चापि सौबलः।
दुःशासनश्च पुत्रस्ते सूतपुत्रश्च दुर्जयः॥ १॥
समागम्य महाराज मन्त्रं चक्रुर्विवक्षितम्।
कथं पाण्डुसुताः संख्ये जेतव्याः सगणा इति॥ २॥

संजय कहते हैं—महाराज! तदनन्तर राजा दुर्योधन, सुबलपुत्र शकुनि, आपका पुत्र दुःशासन, दुर्जयवीर सूतपुत्र कर्ण—ये सभी मिलकर अभीष्ट कार्यके विषयमें गुप्त परामर्श करने लगे। उनकी मन्त्रणाका मुख्य विषय यह था कि पाण्डवोंको दल-बलसहित युद्धमें कैसे जीता जा सकता है?॥ १-२॥

ततो दुर्योधनो राजा सर्वांस्तानाह मन्त्रिणः।
सूतपुत्रं समाभाष्य सौबलं च महाबलम्॥ ३॥

उस समय राजा दुर्योधनने सूतपुत्र कर्ण तथा महाबली शकुनिको सम्बोधित करके उन सब मन्त्रियोंसे कहा—॥ ३॥

द्रोणो भीष्मः कृपः शल्यः सौमदत्तिश्च संयुगे।
न पार्थान् प्रतिबाधन्ते न जाने तच्च कारणम्॥ ४॥

'मित्रो! द्रोणाचार्य, भीष्म, कृपाचार्य, शल्य तथा भूरिश्रवा—ये लोग युद्धमें कुन्तीके पुत्रोंको कभी कोई बाधा नहीं पहुँचाते हैं। इसका क्या कारण है, यह मैं नहीं जानता॥ ४॥

अवध्यमानास्ते चापि क्षपयन्ति बलं मम।
सोऽस्मि क्षीणबलः कर्ण क्षीणशस्त्रश्च संयुगे॥ ५॥

'वे पाण्डव स्वयं अवध्य रहकर मेरी सेनाका संहार कर रहे हैं। कर्ण! इस प्रकार मेरी सेना तथा अस्त्र-शस्त्रोंका युद्धमें क्षय होता चला जा रहा है॥ ५॥

(त्वयि युद्धविमुखे चापि जितश्चास्मि हि पाण्डवैः।
द्रोणस्य प्रमुखे वीरा हतास्ते भ्रातरो मम॥
भीमसेनेन राधेय मम चैवानुपश्यतः।)

'राधानन्दन! तुम युद्धसे मुँह मोड़कर बैठ रहे हो, इसलिये पाण्डवोंने मुझे परास्त कर दिया। द्रोणाचार्यके सामने ही मेरे देखते-देखते भीमसेनने मेरे वीर भाइयोंको मार डाला।

निकृतः पाण्डवैः शूरैरवध्यैर्दैवतैरपि।
सोऽहं संशयमापन्नः प्रहरिष्ये कथं रणे॥ ६॥

'पाण्डव शूरवीर और देवताओंके लिये भी अवध्य हैं। उनके द्वारा पराजित होकर मैं जीवनके संशयमें पड़ गया हूँ। ऐसी दशामें रणक्षेत्रमें मैं कैसे युद्ध करूँगा?'॥ ६॥

(एवमुक्तस्तु राधेयो दुर्योधनमरिंदमम्।)
तमब्रवीन्महाराजं सूतपुत्रो नराधिपम्।

यह सुनकर सूत्रपुत्र कर्णने शत्रुदमन नरनाथ महाराज दुर्योधनसे इस प्रकार कहा॥ ६½॥

कर्ण उवाच

मा शोच भरतश्रेष्ठ करिष्येऽहं प्रियं तव॥ ७॥
भीष्मः शान्तनवस्तूर्णमपयातु महारणात्।

कर्ण बोला—भरतश्रेष्ठ! शोक न करो। मैं तुम्हारा प्रिय कार्य करूँगा, परंतु शान्तनुनन्दन भीष्म शीघ्र ही महायुद्धसे हट जायँ॥ ७½॥

निवृत्ते युधि गाङ्गेये न्यस्तशस्त्रे च भारत॥ ८॥
अहं पार्थान् हनिष्यामि सहितान् सर्वसोमकैः।
पश्यतो युधि भीष्मस्य शपे सत्येन ते नृप॥ ९॥

भरतवंशी नरेश! जब युद्धमें गंगानन्दन भीष्म हथियार डाल देंगे और उससे सर्वथा निवृत्त हो जायँगे, उस समय मैं युद्धमें भीष्मके देखते-देखते सोमकोंसहित समस्त कुन्तीपुत्रोंको एक साथ मार डालूँगा, यह मैं तुमसे सत्यकी शपथ खाकर कहता हूँ॥ ८-९॥

पाण्डवेषु दयां नित्यं स हि भीष्मः करोति वै।
अशक्तश्च रणे भीष्मो जेतुमेतान् महारथान्॥ १०॥

भीष्म सदा ही पाण्डवोंपर दया करते हैं; अतः युद्धमें वे इन महारथियोंको जीतनेमें सर्वथा असमर्थ हैं॥ १०॥

अभिमानी रणे भीष्मो नित्यं चापि रणप्रियः।
स कथं पाण्डवान् युद्धे जेष्यते तात संगतान्॥ ११॥

तात! भीष्म युद्धमें अभिमान रखनेवाले तथा सदा युद्धको प्रिय माननेवाले हैं; तथापि पाण्डवोंपर दया रखनेके कारण वे उन सबको संग्राममें कैसे जीत सकेंगे?॥ ११॥

स त्वं शीघ्रमितो गत्वा भीष्मस्य शिबिरं प्रति।
अनुमान्य गुरुं वृद्धं शस्त्रं न्यासय भारत॥ १२॥

भारत! अतः तुम शीघ्र ही यहाँसे भीष्मजीके शिविरमें जाकर अपने उन पूजनीय वृद्ध पितामहको राजी करके उनसे हथियार रखवा दो॥ १२॥

न्यस्तशस्त्रे ततो भीष्मे निहतान् पश्य पाण्डवान्।
मयैकेन रणे राजन् ससुहृद्गणबान्धवान्॥ १३॥

राजन्! भीष्मके हथियार डाल देनेपर पाण्डवोंको केवल मेरे द्वारा युद्धमें सुहृदों और बान्धवोंसहित मारा गया समझो॥ १३॥

एवमुक्तस्तु कर्णेन पुत्रो दुर्योधनस्तव।
अब्रवीद् भ्रातरं तत्र दुःशासनमिदं वचः॥ १४॥
अनुयात्रं यथा सर्वं सज्जीभवति सर्वशः।
दुःशासन तथा क्षिप्रं सर्वमेवोपपादय॥ १५॥

कर्णके ऐसा कहनेपर आपके पुत्र दुर्योधनने वहीं अपने भाई दुःशासनसे इस प्रकार कहा—'दुःशासन! तुम शीघ्र सब प्रकारसे ऐसी व्यवस्था करो, जिससे यात्रासम्बन्धी सब आवश्यक तैयारी सम्पन्न हो जाय'॥ १४-१५॥

एवमुक्त्वा ततो राजन् कर्णमाह जनेश्वरः।
अनुमान्य रणे भीष्ममेषोऽहं द्विपदां वरम्॥ १६॥
आगमिष्ये ततः क्षिप्रं त्वत्सकाशमरिंदम।
अपक्रान्ते ततो भीष्मे प्रहरिष्यसि संयुगे॥ १७॥

राजन्! दुःशासनसे ऐसा कहकर जनेश्वर दुर्योधनने कर्णसे कहा—'शत्रुदमन! मैं मनुष्योंमें श्रेष्ठ भीष्मको युद्धसे हटनेके लिये राजी करके अभी तुम्हारे पास लौट आता हूँ। फिर भीष्मके हट जानेपर तुम युद्धके मैदानमें शत्रुओंपर प्रहार करना'॥ १६-१७॥

निष्पपात ततस्तूर्णं पुत्रस्तव विशाम्पते।
सहितो भ्रातृभिस्तैस्तु देवैरिव शतक्रतुः॥ १८॥

प्रजानाथ! तदनन्तर आपका पुत्र दुर्योधन तुरंत ही अपने भाइयोंके साथ शिविरसे बाहर निकला, मानो देवताओंके साथ इन्द्र अपने भवनसे बाहर आये हों॥ १८॥

ततस्तं नृपशार्दूलं शार्दूलसमविक्रमम्।
आरोहयद्धयं तूर्णं भ्राता दुःशासनस्तदा॥ १९॥

उस समय भाई दुःशासनने अपने ज्येष्ठ भ्राता

सिंहके समान पराक्रमी नृपश्रेष्ठ दुर्योधनको घोड़ेपर चढ़ाया॥ १९॥

अंगदी बद्धमुकुटो हस्ताभरणवान् नृप।
धार्तराष्ट्रो महाराज विबभौ स पथि व्रजन्॥ २०॥

नरेश्वर! महाराज! माथेपर मुकुट, भुजाओंमें अंगद तथा हाथोंमें वलय आदि आभूषण धारण किये मार्गपर जाता हुआ आपका पुत्र दुर्योधन बड़ी शोभा पा रहा था॥ २०॥

भण्डीपुष्पनिकाशेन तपनीयनिभेन च।
अनुलिप्तः परार्घ्येन चन्दनेन सुगन्धिना॥ २१॥

उसने शिरीषपुष्प एवं सुवर्णके समान पीतवर्णका बहुमूल्य सुगन्धित चन्दन लगा रखा था॥ २१॥

अरजोऽम्बरसंवीतः सिंहखेलगतिर्नृप।
शुशुभे विमलार्चिष्मान् नभसीव दिवाकरः॥ २२॥

राजन्! उसके सारे अंग निर्मल वस्त्रसे ढके हुए थे। वह सिंहके समान मस्तानी चालसे चलता था और अपनी निर्मल प्रभाके कारण आकाशमें प्रकाशित होनेवाले सूर्यके समान शोभा पा रहा था॥ २२॥

तं प्रयान्तं नरव्याघ्रं भीष्मस्य शिबिरं प्रति।
अनुजग्मुर्महेष्वासाः सर्वलोकस्य धन्विनः॥ २३॥
भ्रातरश्च महेष्वासास्त्रिदशा इव वासवम्।

भीष्मके शिविरकी ओर जाते हुए पुरुषश्रेष्ठ दुर्योधनके पीछे सारे जगत्के महाधनुर्धर कौरवपक्षीय नरेश तथा विशाल धनुष धारण करनेवाले उसके भाई उसी प्रकार जा रहे थे, जैसे इन्द्रके पीछे देवता चलते हैं॥ २३½॥

हयानन्ये समारुह्य गजानन्ये च भारत॥ २४॥
रथानन्ये नरश्रेष्ठं परिवव्रुः समन्ततः।

भारत! कुछ लोग घोड़ोंपर और कुछ लोग हाथियोंपर चढ़े थे। दूसरे लोग रथोंपर आरूढ़ हो सब ओरसे नरश्रेष्ठ दुर्योधनको घेरे हुए थे॥ २४½॥

आत्तशस्त्राश्च सुहृदो रक्षणार्थं महीपतेः॥ २५॥
प्रादुर्बभूवुः सहिताः शक्रस्येवामरा दिवि।

राजा दुर्योधनकी रक्षाके लिये समस्त सुहृद् अस्त्र-शस्त्र लेकर उसी प्रकार उसके साथ हो गये थे, जैसे स्वर्गमें देवता इन्द्रकी रक्षाके लिये उनके साथ रहते हैं॥ २५½॥

स पूज्यमानः कुरुभिः कौरवाणां महाबलः॥ २६॥
प्रययौ सदनं राजा गाङ्गेयस्य यशस्विनः।
अन्वीयमानः सततं सोदरैः परिवारितः॥ २७॥

इस प्रकार कौरवोंसे पूजित हो महाबली कौरवराज दुर्योधन यशस्वी भीष्मके शिविरमें गया। उसके भाई उसे घेरकर निरन्तर उसीके साथ-साथ रहे॥ २६-२७॥

दक्षिणं दक्षिणः काले सम्भृत्य स्वभुजं तदा।
हस्तिहस्तोपमं शैक्षं सर्वशत्रुनिबर्हणम्॥ २८॥
प्रगृह्णन्नञ्जलीन् नृणामुद्यतान् सर्वतो दिशः।
शुश्राव मधुरा वाचो नानादेशनिवासिनाम्॥ २९॥

उदार स्वभाववाले राजा दुर्योधनने उस समय सम्पूर्ण शत्रुओंका संहार करनेमें समर्थ, हाथीकी सूँड़के समान विशाल तथा अस्त्र-प्रहारकी शिक्षामें निपुणताको प्राप्त हुई अपनी दाहिनी भुजाको ऊपर उठाकर सम्पूर्ण दिशाओंमें उठी हुई विभिन्न देशके निवासी मनुष्योंकी प्रणामांजलियोंको स्वीकार करते हुए उनकी मधुर बातें सुनीं॥ २८-२९॥

संस्तूयमानः सूतैश्च मागधैश्च महायशाः।
पूजयानश्च तान् सर्वान् सर्वलोकेश्वरेश्वरः॥ ३०॥
(एवं स प्रययौ राजा सर्वसैन्यसमावृतः।)

सम्पूर्ण जगत्का अधीश्वर महायशस्वी राजा दुर्योधन सम्पूर्ण सेनाओंसे घिरकर सूतों और मागधोंके मुखसे अपनी स्तुति सुनता और सब लोगोंका समादर करता हुआ (भीष्मके शिविरकी ओर) आगे बढ़ता गया॥ ३०॥

प्रदीपैः काञ्चनैस्तत्र गन्धतैलावसेचितैः।
परिवव्रुर्महाराजं प्रज्वलद्भिः समन्ततः॥ ३१॥

सुगन्धित तेलसे भरे हुए सोनेके जलते दीपक लिये बहुत-से सेवक महाराज दुर्योधनको सब ओरसे घेरकर चल रहे थे॥ ३१॥

स तैः परिवृतो राजा प्रदीपैः काञ्चनैर्ज्वलन्।
शुशुभे चन्द्रमा युक्तो दीप्तैरिव महाग्रहैः॥ ३२॥

उन सुवर्णमय प्रदीपोंसे घिरकर प्रकाशित होनेवाला राजा दुर्योधन दीप्तिमान् महाग्रहोंसे संयुक्त चन्द्रमाके समान शोभा पा रहा था॥ ३२॥

काञ्चनोष्णीषिणस्तत्र वेत्रझर्झरपाणयः।
प्रोत्सारयन्तः शनकैस्तं जनं सर्वतो दिशम्॥ ३३॥

सुनहरी पगड़ी धारण करके हाथोंमें बेंत और झर्झर लिये बहुतेरे सिपाही धीरे-धीरे सब ओरसे लोगोंकी भीड़को हटाते हुए चल रहे थे॥ ३३॥

सम्प्राप्य तु ततो राजा भीष्मस्य सदनं शुभम्।
अवतीर्य हयाच्चापि भीष्मं प्राप्य जनेश्वरः॥ ३४॥
अभिवाद्य ततो भीष्मं निषण्णः परमासने।
काञ्चने सर्वतोभद्रे स्पर्द्धास्तरणसंवृते॥ ३५॥

तत्पश्चात् राजा दुर्योधन भीष्मके सुन्दर निवास-स्थानके निकट पहुँचकर घोड़ेसे उतर पड़ा और

भीष्मजीके पास जाकर उन्हें प्रणाम करके बहुमूल्य बिछौनोंसे युक्त सर्वतोभद्र नामक सर्वोत्तम स्वर्णमय सिंहासनपर बैठ गया॥ ३४-३५॥

उवाच प्राञ्जलिर्भीष्मं बाष्पकण्ठोऽश्रुलोचनः।
त्वां वयं हि समाश्रित्य संयुगे शत्रुसूदन॥ ३६॥
उत्सहेम रणे जेतुं सेन्द्रानपि सुरासुरान्।
किमु पाण्डुसुतान् वीरान् ससुहृद्गणबान्धवान्॥ ३७॥
तस्मादर्हसि गाङ्गेय कृपां कर्तुं मयि प्रभो।
जहि पाण्डुसुतान् वीरान् महेन्द्र इव दानवान्॥ ३८॥

इसके बाद नेत्रोंमें आँसू भरकर हाथ जोड़े हुए गद्गद कण्ठसे वह भीष्मसे इस प्रकार बोला—'शत्रुसूदन! हमलोग आपका आश्रय लेकर युद्धके मैदानमें इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताओं तथा असुरोंको भी जीतनेका उत्साह रखते हैं; फिर मित्रों और बान्धवोंसहित वीर पाण्डवोंको जीतना कौन बड़ी बात है। अतः प्रभो! गंगानन्दन! आपको मुझपर कृपा करनी चाहिये। जैसे देवराज इन्द्र दानवोंका संहार करते हैं, उसी प्रकार आप वीर पाण्डवोंको मार डालिये॥ ३६—३८॥

अहं सर्वान् महाराज निहनिष्यामि सोमकान्।
पञ्चालान् केकयैः सार्धं करूषांश्चेति भारत॥ ३९॥
त्वद्वचः सत्यमेवास्तु जहि पार्थान् समागतान्।
सोमकांश्च महेष्वासान् सत्यवाग् भव भारत॥ ४०॥

'महाराज! भरतनन्दन! मैं केकयोंसहित सम्पूर्ण सोमकों, पांचालों और करूषोंको मार डालूँगा—आपकी यह बात सत्य हो। भारत! आप युद्धमें सामने आये हुए कुन्तीपुत्रों और महाधनुर्धर सोमकोंका वध कीजिये और ऐसा करके अपने वचनको सत्य कीजिये॥ ३९-४०॥

दयया यदि वा राजन् द्वेष्यभावान्मम प्रभो।
मन्दभाग्यतया वापि मम रक्षसि पाण्डवान्॥ ४१॥
अनुजानीहि समरे कर्णमाहवशोभिनम्।
स जेष्यति रणे पार्थान् ससुहृद्गणबान्धवान्॥ ४२॥

'शक्तिशाली राजन्! यदि पाण्डवोंके प्रति दयाभाव अथवा मेरे दुर्भाग्यवश मेरे प्रति द्वेषभाव रखनेके कारण आप पाण्डवोंकी रक्षा करते हैं तो समरभूमिमें शोभा पानेवाले कर्णको युद्धके लिये आज्ञा दे दीजिये। वह सुहृदों और बान्धवोंसहित कुन्तीपुत्रोंको अवश्य जीत लेगा'॥ ४१-४२॥

स एवमुक्त्वा नृपतिः पुत्रो दुर्योधनस्तव।
नोवाच वचनं किञ्चिद् भीष्मं सत्यपराक्रमम्॥ ४३॥

सत्यपराक्रमी भीष्मसे ऐसा कहकर आपका पुत्र राजा दुर्योधन और कुछ नहीं बोला॥ ४३॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि भीष्मं प्रति दुर्योधनवाक्ये सप्तनवतितमोऽध्यायः॥ ९७॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें भीष्मके प्रति दुर्योधनका वचनविषयक सत्तानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९७॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठके २½ श्लोक मिलाकर कुल ४५½ श्लोक हैं।]

अष्टनवतितमोऽध्यायः

भीष्मका दुर्योधनको अर्जुनका पराक्रम बताना और भयंकर युद्धके लिये प्रतिज्ञा करना तथा प्रातःकाल दुर्योधनके द्वारा भीष्मकी रक्षाकी व्यवस्था

संजय उवाच

वाक् शल्यैस्तव पुत्रेण सोऽतिविद्धो महामनाः।
दुःखेन महताऽऽविष्टो नोवाचाप्रियमण्वपि॥ १॥

संजय कहते हैं—महाराज! आपके पुत्रद्वारा वाग्बाणोंसे अत्यन्त विद्ध होकर महामना भीष्मको महान् दुःख हुआ; तथापि उन्होंने उससे कोई किंचिन्मात्र भी अप्रिय वचन नहीं कहा॥ १॥

स ध्यात्वा सुचिरं कालं दुःखरोषसमन्वितः।
श्वसमानो यथा नागः प्रणुन्नो वाक्शलाकया॥ २॥

वे दुःख और रोषसे युक्त होकर दीर्घकालतक कुछ सोचते हुए लंबी साँस खींचते रहे। वाणीरूपी अंकुशसे पीड़ित होकर वे हाथीके समान व्यथाका अनुभव करने लगे॥ २॥

उद्वृत्य चक्षुषी कोपान्निर्दहन्निव भारत।
सदेवासुरगन्धर्वं लोकं लोकविदां वरः॥ ३॥

भारत! फिर क्रोधसे दोनों आँखें चढ़ाकर लोकवेत्ताओंमें श्रेष्ठ भीष्म इस प्रकार देखने लगे, मानो देवताओं, असुरों और गन्धर्वोंसहित सम्पूर्ण लोकोंको दग्ध कर डालेंगे॥

अब्रवीत् तव पुत्रं स सामपूर्वमिदं वचः।
किं त्वं दुर्योधनैवं मां वाक्शल्यैरपकृन्तसि॥ ४॥

घटमानं यथाशक्ति कुर्वाणं च तव प्रियम्।
जुह्वानं समरे प्राणांस्तव वै प्रियकाम्यया॥ ५॥

फिर आपके पुत्रको सान्त्वना देते हुए वे उससे इस प्रकार बोले—'बेटा दुर्योधन! तुम इस प्रकार वाग्बाणोंसे मुझे क्यों छेद रहे हो? मैं तो यथाशक्ति शत्रुओंपर विजय पानेकी चेष्टा करता हूँ और तुम्हारे प्रिय साधनमें लगा हुआ हूँ। इतना ही नहीं, तुम्हारा प्रिय करनेकी इच्छासे मैं समराग्निमें अपने प्राणोंको होम देनेके लिये भी तैयार हूँ॥ ४-५॥

यदा तु पाण्डवः शूरः खाण्डवेऽग्निमतर्पयत्।
पराजित्य रणे शक्रं पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ ६॥

'परंतु तुम्हें याद होगा, जब शूरवीर पाण्डुनन्दन अर्जुनने युद्धमें देवराज इन्द्रको परास्त करके खाण्डव-वनमें अग्निको तृप्त किया था, वही उनकी अजेयताका पूरा प्रमाण है॥ ६॥

यदा च त्वां महाबाहो गन्धर्वैर्हृतमोजसा।
अमोचयत् पाण्डुसुतः पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ ७॥

'महाबाहो! जब गन्धर्वलोग तुम्हें बलपूर्वक पकड़ ले गये थे, उस समय भी पाण्डुपुत्र अर्जुनने ही तुम्हें छुड़ाया था। उनके अनन्त पराक्रमको समझनेके लिये यह दृष्टान्त पर्याप्त होगा॥ ७॥

द्रवमाणेषु शूरेषु सोदरेषु तव प्रभो।
सूतपुत्रे च राधेये पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ ८॥

'प्रभो! उस अवसरपर तुम्हारे ये शूरवीर भाई और राधानन्दन सूतपुत्र कर्ण तो मैदान छोड़कर भाग गये थे। यह अर्जुनकी अद्भुत शक्तिका पर्याप्त उदाहरण है॥ ८॥

यच्च नः सहितान् सर्वान् विराटनगरे तदा।
एक एव समुद्यातः पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ ९॥

'उन दिनों विराटनगरमें हम सब लोग एक साथ युद्धके लिये डटे हुए थे, परंतु अर्जुनने अकेले ही हमलोगोंपर आक्रमण किया। यह उनकी अपरिमित शक्तिका पर्याप्त उदाहरण है॥ ९॥

द्रोणं च युधि संरब्धं मां च निर्जित्य संयुगे।
वासांसि स समादत्त पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ १०॥

'अर्जुनने क्रोधमें भरे हुए द्रोणाचार्यको तथा मुझे भी युद्धमें परास्त करके सबके वस्त्र छीन लिये थे। यह उनकी अजेयताका पर्याप्त प्रमाण है॥ १०॥

तथा द्रौणिं महेष्वासं शारद्वतमथापि च।
गोग्रहे जितवान् पूर्वं पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ ११॥

'पूर्वकालमें उसी गोग्रहके अवसरपर पाण्डु-कुमारने महाधनुर्धर अश्वत्थामा तथा कृपाचार्यको भी परास्त कर दिया था। यह दृष्टान्त उन्हें समझनेके लिये पर्याप्त है॥ ११॥

विजित्य च यदा कर्णं सदा पुरुषमानिनम्।
उत्तरायै ददौ वस्त्रं पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ १२॥

'उन दिनों सदा अपने पुरुषार्थका अभिमान रखनेवाले कर्णको भी जीतकर अर्जुनने उसके वस्त्र छीनकर उत्तराको अर्पित किये थे। यह दृष्टान्त पर्याप्त होगा॥ १२॥

निवातकवचान् युद्धे वासवेनापि दुर्जयान्।
जितवान् समरे पार्थः पर्याप्तं तन्निदर्शनम्॥ १३॥

'जिन्हें परास्त करना इन्द्रके लिये भी कठिन था, उन निवातकवचोंको अर्जुनने युद्धमें परास्त कर दिया था। उनकी अलौकिक शक्तिको समझनेके लिये यह दृष्टान्त पर्याप्त होगा॥ १३॥

को हि शक्तो रणे जेतुं पाण्डवं रभसं तदा।
यस्य गोप्ता जगद्गोप्ता शङ्खचक्रगदाधरः॥ १४॥
वासुदेवोऽनन्तशक्तिः सृष्टिसंहारकारकः।
सर्वेश्वरो देवदेवः परमात्मा सनातनः॥ १५॥

'विश्वरक्षक, शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले अनन्तशक्ति, सृष्टि और संहारके एकमात्र कर्ता देवाधिदेव सनातन परमात्मा सर्वेश्वर भगवान् वासुदेव जिनकी रक्षा करनेवाले हैं, उन वेगशाली वीर पाण्डुपुत्र अर्जुनको युद्धके मैदानमें कौन जीत सकता है॥ १४-१५॥

उक्तोऽसि बहुशो राजन् नारदाद्यैर्महर्षिभिः।
त्वं तु मोहान्न जानीषे वाच्यावाच्यं सुयोधन॥ १६॥

'राजन्! सुयोधन! यह बात नारद आदि महर्षियोंने तुमसे कई बार कही है, परंतु तुम मोहवश कहने और न कहनेयोग्य बातको समझते ही नहीं हो॥ १६॥

मुमूर्षुर्हि नरः सर्वान् वृक्षान् पश्यति काञ्चनान्।
तथा त्वमपि गान्धारे विपरीतानि पश्यसि॥ १७॥

'गान्धारीनन्दन! जैसे मरणासन्न मनुष्य सभी वृक्षोंको सुनहरे रंगका देखता है, उसी प्रकार तुम भी सब कुछ विपरीत ही देख रहे हो॥ १७॥

स्वयं वैरं महत् कृत्वा पाण्डवैः सह सृंजयैः।
युद्ध्यस्व तानद्य रणे पश्यामः पुरुषो भव॥ १८॥
(अशक्याः पाण्डवा जेतुं देवैरपि सवासवैः।)

'तुमने स्वयं ही पाण्डवों तथा सृंजयोंके साथ महान् वैर ठाना है। अतः अब तुम्हीं युद्ध करो। हम सब लोग देखते हैं। तुम स्वयं पुरुषत्वका परिचय दो। पाण्डवोंको तो इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवता भी नहीं जीत सकते॥ १८॥

अहं तु सोमकान् सर्वान् पञ्चालांश्च समागतान्।
निहनिष्ये नरव्याघ्र वर्जयित्वा शिखण्डिनम्॥ १९॥

'किंतु पुरुषसिंह! मैं केवल शिखण्डीको छोड़कर युद्धमें आये हुए समस्त सोमकों और पांचालोंको भी मार डालूँगा॥ १९॥

तैर्वाहं निहतः संख्ये गमिष्ये यमसादनम्।
तान् वा निहत्य समरे प्रीतिं दास्याम्यहं तव॥ २०॥

'या तो उन्हींके हाथों युद्धमें मारा जाकर मैं यमलोकका रास्ता लूँगा अथवा उन्हींको समरांगणमें मारकर मैं तुम्हें हर्ष प्रदान करूँगा॥ २०॥

पूर्वं हि स्त्री समुत्पन्ना शिखण्डी राजवेश्मनि।
वरदानात् पुमाञ्जातः सैषा वै स्त्री शिखण्डिनी॥ २१॥

'शिखण्डी पहले राजभवनमें स्त्रीके रूपमें उत्पन्न हुआ था; फिर वरदानसे पुरुष हो गया, अतः मेरी दृष्टिमें तो यह स्त्रीरूपा शिखण्डिनी ही है॥ २१॥

तमहं न हनिष्यामि प्राणत्यागेऽपि भारत।
यासौ प्राङ्निर्मिता धात्रा सैषा वै स्त्री शिखण्डिनी॥ २२॥

'भारत! मेरे प्राणोंपर संकट आ जाय तो भी मैं उसे नहीं मारूँगा। जिसे विधाताने पहले स्त्री बनाया था, वह शिखण्डिनी आज भी मेरी दृष्टिमें स्त्री ही है॥ २२॥

सुखं स्वपिहि गान्धारे श्वोऽपि कर्ता महारणम्।
यं जनाः कथयिष्यन्ति यावत् स्थास्यति मेदिनी॥ २३॥

'गान्धारीनन्दन! अब तुम सुखसे जाकर सो रहो। कल मैं बड़ा भीषण युद्ध करूँगा, जिसकी चर्चा लोग तबतक करते रहेंगे, जबतक कि यह पृथ्वी बनी रहेगी'॥

एवमुक्तस्तव सुतो निर्जगाम जनेश्वर।
अभिवाद्य गुरुं मूर्ध्ना प्रययौ स्वं निवेशनम्॥ २४॥

जनेश्वर! भीष्मके ऐसा कहनेपर आपका पुत्र दुर्योधन अपने उन गुरुजनके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रणाम करनेके पश्चात् अपने शिविरको चला गया॥ २४॥

आगम्य तु ततो राजा विसृज्य च महाजनम्।
प्रविवेश ततस्तूर्णं क्षयं शत्रुक्षयङ्करः॥ २५॥

वहाँ आकर शत्रुओंका विनाश करनेवाले राजा दुर्योधनने लोगोंके उस महान् समुदायको तुरंत विदा कर दिया और स्वयं शिविरके भीतर प्रवेश किया॥ २५॥

प्रविष्टः स निशां तां च गमयामास पार्थिवः।
प्रभातायां च शर्वर्यां प्रातरुत्थाय तान् नृपः॥ २६॥
राज्ञः समाज्ञापयत सेनां योजयतेति ह।
अद्य भीष्मो रणे क्रुद्धो निहनिष्यति सोमकान्॥ २७॥

भूपाल! वहाँ जाकर राजाने सुखसे रात बितायी और सबेरा होनेपर उसने प्रातःकाल उठकर राजाओंको यह आज्ञा दी—'राजसिंहो! तुम सब लोग सेनाको युद्धके लिये तैयार करो, आज पितामह भीष्म रणभूमिमें कुपित होकर सोमकोंका संहार करेंगे'॥ २६-२७॥

दुर्योधनस्य तच्छ्रुत्वा रात्रौ विलपितं बहु।
मन्यमानः स तं राजन् प्रत्यादेशमिवात्मनः॥ २८॥

राजन्! रातमें दुर्योधनके अनेक प्रकारके विलापको सुनकर भीष्मने यह समझ लिया कि अब दुर्योधन मुझे युद्धसे हटाना चाहता है॥ २८॥

निर्वेदं परमं गत्वा विनिन्द्य परवश्यताम्।
दीर्घं दध्यौ शान्तनवो योद्धुकामोऽर्जुनं रणे॥ २९॥

इससे उनके मनमें बड़ा खेद हुआ। भीष्मने पराधीनताकी भूरि-भूरि निन्दा करके रणभूमिमें अर्जुनके साथ युद्ध करनेका संकल्प लेकर दीर्घकालतक विचार किया॥ २९॥

इङ्गितेन तु तज्ज्ञात्वा गाङ्गेयेन विचिन्तितम्।
दुर्योधनो महाराज दुःशासनमचोदयत्॥ ३०॥

महाराज! गंगानन्दन भीष्मने क्या सोचा है? इस बातको संकेतसे समझकर दुर्योधनने दुःशासनसे कहा—॥ ३०॥

दुःशासन रथास्तूर्णं युज्यन्तां भीष्मरक्षिणः।
द्वाविंशतिमनीकानि सर्वाण्येवाभिचोदय॥ ३१॥

'दुःशासन! तुम शीघ्र ही भीष्मकी रक्षा करनेवाले रथोंको जोतकर तैयार कराओ। अपने पास कुल बाईस सेनाएँ हैं। उन सबको भीष्मकी रक्षामें ही नियुक्त कर दो॥ ३१॥

इदं हि समनुप्राप्तं वर्षपूगाभिचिन्तितम्।
पाण्डवानां ससैन्यानां वधो राज्यस्य चागमः॥ ३२॥

'आज वह अवसर प्राप्त हुआ है, जिसके लिये हम बहुत वर्षोंसे विचार करते आ रहे हैं। आज सेनासहित समस्त पाण्डवोंका वध तथा राज्यका लाभ होगा॥ ३२॥

तत्र कार्यतमं मन्ये भीष्मस्यैवाभिरक्षणम्।
स नो गुप्तः सहायः स्याद्धन्यात् पार्थांश्च संयुगे॥ ३३॥

'इस विषयमें मैं भीष्मकी रक्षाको ही अपना प्रधान कर्तव्य समझता हूँ। वे सुरक्षित रहनेपर हमारे सहायक होंगे और संग्रामभूमिमें कुन्तीकुमारोंका वध कर सकेंगे॥ ३३॥

अब्रवीद्धि विशुद्धात्मा नाहं हन्यां शिखण्डिनम्।
स्त्रीपूर्वको ह्यसौ राजंस्तस्माद् वर्ज्यो मया रणे॥ ३४॥

'विशुद्ध अन्तःकरणवाले महात्मा भीष्मने मुझसे कहा है कि 'राजन्! मैं शिखण्डीको नहीं मार सकता; क्योंकि वह पहले स्त्रीरूपमें उत्पन्न हुआ था और इसीलिये

युद्धमें मुझे उसका परित्याग कर देना है॥ ३४॥

लोकस्तद् वेद यदहं पितुः प्रियचिकीर्षया।
राज्यं स्फीतं महाबाहो स्त्रियश्च त्यक्तवान् पुरा॥ ३५॥

'महाबाहो! सारा संसार यह जानता है कि मैंने पूर्वकालमें पिताका प्रिय करनेकी इच्छासे समृद्धिशाली राज्य तथा स्त्रियोंका परित्याग कर दिया था॥ ३५॥

नैवं चाहं स्त्रियं जातु न स्त्रीपूर्वं कथंचन।
हन्यां युधि नरश्रेष्ठ सत्यमेतद् ब्रवीमि ते॥ ३६॥

'नरश्रेष्ठ! मैं कभी किसी स्त्रीको अथवा जो पहले स्त्री रहा हो, उस पुरुषको भी किसी प्रकार युद्धमें मार नहीं सकता; यह मैं तुमसे सत्य कहता हूँ॥ ३६॥

अयं स्त्रीपूर्वको राजञ्छिखण्डी यदि ते श्रुतः।
उद्योगे कथितं यत्तत् तथा जाता शिखण्डिनी॥ ३७॥
कन्या भूत्वा पुमाञ्जातः स च मां योधयिष्यति।
तस्याहं प्रमुखे बाणान् न मुञ्चेयं कथंचन॥ ३८॥

'राजन्! तुमने भी सुना होगा, यह शिखण्डी पहले स्त्रीरूपमें पैदा हुआ था। यह बात मैंने तुमसे युद्धकी तैयारीके समय बता दी थी। इस प्रकार कन्यारूपमें उत्पन्न हुई शिखण्डिनी पहले स्त्री होकर अब पुरुष हो गयी है। वह पुरुष बना हुआ शिखण्डी यदि मुझसे युद्ध करेगा तो मैं उसके ऊपर किसी प्रकार भी बाण नहीं चलाऊँगा॥ ३७-३८॥

युद्धे हि क्षत्रियांस्तात पाण्डवानां जयैषिणः।
सर्वानन्यान् हनिष्यामि सम्प्राप्तान् रणमूर्धनि॥ ३९॥

'तात! पाण्डवपक्षके दूसरे जो-जो विजयाभिलाषी क्षत्रिय युद्धके मुहानेपर मेरे सामने आयेंगे, उन सबका मैं वध करूँगा'॥ ३९॥

एवं मां भरतश्रेष्ठ गाङ्गेयः प्राह शास्त्रवित्।
तत्र सर्वात्मना मन्ये गाङ्गेयस्यैव पालनम्॥ ४०॥

'भरतश्रेष्ठ दुःशासन! शास्त्रोंके ज्ञाता गंगानन्दन भीष्मने इस प्रकार मुझसे कहा है। अतः युद्धभूमिमें सब प्रकारसे भीष्मकी रक्षाको ही मैं अपना मुख्य कर्तव्य मानता हूँ॥ ४०॥

अरक्ष्यमाणं हि वृको हन्यात् सिंहं महाहवे।
मा वृकेणेव गाङ्गेयं घातयेम शिखण्डिना॥ ४१॥

'यदि महायुद्धमें सिंहकी रक्षा नहीं की जाय तो उसे एक भेड़िया मार सकता है, परंतु हम भेड़ियेके सदृश शिखण्डीके हाथसे सिंहके समान भीष्मका वध नहीं होने देंगे॥ ४१॥

मातुलः शकुनिः शल्यः कृपो द्रोणो विविंशतिः।
यत्ता रक्षन्तु गाङ्गेयं तस्मिन् गुप्ते ध्रुवो जयः॥ ४२॥

'(अतः उनकी रक्षाके लिये सारी आवश्यक व्यवस्था करो।) मामा शकुनि, शल्य, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य और विविंशति—ये सब लोग सावधान होकर गंगानन्दन भीष्मकी रक्षा करें। उनके सुरक्षित रहनेपर हमारी विजय निश्चित है'॥ ४२॥

एतच्छ्रुत्वा तु ते सर्वे दुर्योधनवचस्तदा।
सर्वतो रथवंशेन गाङ्गेयं पर्यवारयन्॥ ४३॥

उस समय दुर्योधनकी यह बात सुनकर उन सब वीरोंने रथकी विशाल सेनाद्वारा गंगानन्दन भीष्मको सब ओरसे घेर लिया॥ ४३॥

पुत्राश्च तव गाङ्गेयं परिवार्य ययुर्मुदा।
कम्पयन्तो भुवं द्यां च क्षोभयन्तश्च पाण्डवान्॥ ४४॥

आपके सब पुत्र भी भीष्मको चारों ओरसे घेरकर प्रसन्नतापूर्वक चले। वे उस समय भूलोक और स्वर्गलोकको भी कँपाते हुए पाण्डवोंके मनमें क्षोभ उत्पन्न कर रहे थे॥ ४४॥

ते रथैः सुसम्प्रयुक्तैर्दन्तिभिश्च महारथाः।
परिवार्य रणे भीष्मं दंशिताः समवस्थिताः॥ ४५॥

वे समस्त कौरव महारथी सुशिक्षित रथों और हाथियोंसे भीष्मको घेरकर कवच आदिसे सुसज्जित हो युद्धके लिये खड़े हो गये॥ ४५॥

यथा देवासुरे युद्धे त्रिदशा वज्रधारिणम्।
सर्वे ते स्म व्यतिष्ठन्त रक्षन्तस्तं महारथम्॥ ४६॥

जिस प्रकार देवासुर-संग्रामके समय देवताओंने वज्रधारी इन्द्रकी रक्षा की थी, उसी प्रकार वे सब कौरव योद्धा महारथी भीष्मकी रक्षा करने लगे॥ ४६॥

ततो दुर्योधनो राजा पुनर्भ्रातरमब्रवीत्।
सव्यं चक्रं युधामन्युरुत्तमौजाश्च दक्षिणम्॥ ४७॥
गोप्तारावर्जुनस्यैतावर्जुनोऽपि शिखण्डिनः।
रक्ष्यमाणः स पार्थेन तथास्माभिर्विवर्जितः॥ ४८॥
यथा भीष्मं न नो हन्याद् दुःशासन तथा कुरु।

तब राजा दुर्योधनने अपने भाईसे पुनः इस प्रकार कहा—'दुःशासन! अर्जुनके रथके बायें पहियेकी रक्षा युधामन्यु और दाहिने पहियेकी रक्षा उत्तमौजा करते हैं। इस प्रकार अर्जुनके ये दो रक्षक हैं और अर्जुन भी शिखण्डीकी रक्षा करते हैं। अर्जुनसे सुरक्षित और हमलोगोंसे उपेक्षित होकर शिखण्डी हमारे भीष्मको जिस प्रकार मार न सके, ऐसी व्यवस्था करो'॥ ४७-४८½॥

भ्रातुस्तद् वचनं श्रुत्वा पुत्रो दुःशासनस्तव॥ ४९॥
भीष्मं प्रमुखतः कृत्वा प्रययौ सह सेनया।

बड़े भाईकी यह बात सुनकर आपका पुत्र दुःशासन भीष्मको आगे करके सेनाके साथ युद्धके मैदानमें गया॥ ४९½ ॥

भीष्मं तु रथवंशेन दृष्ट्वा समभिसंवृतम्॥ ५०॥
अर्जुनो रथिनां श्रेष्ठो धृष्टद्युम्नमुवाच ह।

भीष्मको रथोंके समूहसे घिरा हुआ देख रथियोंमें श्रेष्ठ अर्जुनने धृष्टद्युम्नसे कहा—॥ ५०½ ॥

शिखण्डिनं नरव्याघ्रं भीष्मस्य प्रमुखे नृप।
स्थापयस्वाद्य पाञ्चाल्य तस्य गोप्ताहमित्युत॥ ५१॥

'नरेश्वर! पांचालराजकुमार! आज तुम पुरुषसिंह शिखण्डीको भीष्मके सामने उपस्थित करो। मैं उसकी रक्षा करूँगा'॥ ५१॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि भीष्मदुर्योधनसंवादे अष्टनवतितमोऽध्यायः॥ ९८॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें भीष्म-दुर्योधनसंवादविषयक अट्ठानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९८॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका ½ श्लोक मिलाकर कुल ५१½ श्लोक हैं।]

एकोनशततमोऽध्यायः

नवें दिनके युद्धके लिये उभयपक्षकी सेनाओंकी व्यूह-रचना और उनके घमासान युद्धका आरम्भ तथा विनाशसूचक उत्पातोंका वर्णन

संजय उवाच

ततः शान्तनवो भीष्मो निर्ययौ सह सेनया।
व्यूहं चाव्यूहत महत् सर्वतोभद्रमात्मनः॥ १॥

संजय कहते हैं—महाराज! तदनन्तर शान्तनुनन्दन भीष्म सेनाके साथ शिविरसे बाहर निकले। उन्होंने अपनी सेनाको सर्वतोभद्र नामक महान् व्यूहके रूपमें संगठित किया॥ १॥

कृपश्च कृतवर्मा च शैब्यश्चैव महारथः।
शकुनिः सैन्धवश्चैव काम्बोजश्च सुदक्षिणः॥ २॥
भीष्मेण सहिताः सर्वे पुत्रैश्च तव भारत।
अग्रतः सर्वसैन्यानां व्यूहस्य प्रमुखे स्थिताः॥ ३॥

भारत! कृपाचार्य, कृतवर्मा, महारथी शैब्य, शकुनि, सिन्धुराज जयद्रथ तथा काम्बोजराज सुदक्षिण—ये सब नरेश भीष्म तथा आपके पुत्रोंके साथ सम्पूर्ण सेनाके आगे तथा व्यूहके प्रमुख भागमें खड़े हुए थे॥ २-३॥

द्रोणो भूरिश्रवाः शल्यो भगदत्तश्च मारिष।
दक्षिणं पक्षमाश्रित्य स्थिता व्यूहस्य दंशिताः॥ ४॥

आर्य! द्रोणाचार्य, भूरिश्रवा, शल्य तथा भगदत्त—ये कवच बाँधकर व्यूहके दाहिने पक्षका आश्रय लेकर खड़े थे॥ ४॥

अश्वत्थामा सोमदत्तश्चावन्त्यौ च महारथौ।
महत्या सेनया युक्ता वामं पक्षमपालयन्॥ ५॥

अश्वत्थामा, सोमदत्त तथा अवन्तीके दोनों राजकुमार महारथी विन्द और अनुविन्द—ये विशाल सेनाके साथ व्यूहके वाम पक्षका संरक्षण कर रहे थे॥

दुर्योधनो महाराज त्रिगर्तैः सर्वतो वृतः।
व्यूहमध्ये स्थितो राजन् पाण्डवान् प्रति भारत॥ ६॥

महाराज! भरतवंशी नरेश! त्रिगर्तदेशीय सैनिकोंके द्वारा सब ओरसे घिरा हुआ दुर्योधन पाण्डवोंका सामना करनेके लिये व्यूहके मध्यभागमें खड़ा हुआ॥ ६॥

अलम्बुषो रथश्रेष्ठः श्रुतायुश्च महारथः।
पृष्ठतः सर्वसैन्यानां स्थितौ व्यूहस्य दंशितौ॥ ७॥

रथियोंमें श्रेष्ठ अलम्बुष और महारथी श्रुतायु—ये दोनों कवच धारण करके सम्पूर्ण सेनाओं तथा व्यूहके पृष्ठभागमें खड़े थे॥ ७॥

एवं च तं तदा व्यूहं कृत्वा भारत तावकाः।
संनद्धाः समदृश्यन्त प्रतपन्त इवाग्नयः॥ ८॥

भारत! इस प्रकार व्यूहरचना करके उस समय आपके पुत्र कवच आदिसे सुसज्जित हो प्रज्वलित अग्नियोंके समान दृष्टिगोचर हो रहे थे॥ ८॥

ततो युधिष्ठिरो राजा भीमसेनश्च पाण्डवः।
नकुलः सहदेवश्च माद्रीपुत्रावुभावपि॥ ९॥
अग्रतः सर्वसैन्यानां स्थिता व्यूहस्य दंशिताः।

उधर राजा युधिष्ठिर, पाण्डुकुमार भीमसेन, माद्रीके दोनों पुत्र नकुल और सहदेव सब सेनाओं तथा व्यूहके अग्र भागमें कवच बाँधकर खड़े हुए॥ ९½ ॥

धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्च महारथः॥ १०॥
स्थिताः सैन्येन महता परानीकविनाशनाः।

धृष्टद्युम्न, राजा विराट और महारथी सात्यकि—ये शत्रुसेनाका विनाश करनेवाले वीर भी विशाल सेनाके

साथ व्यूहमें यथास्थान स्थित थे॥ १०½ ॥

शिखण्डी विजयश्चैव राक्षसश्च घटोत्कचः॥ ११॥
चेकितानो महाबाहुः कुन्तिभोजश्च वीर्यवान्।
स्थिता रणे महाराज महत्या सेनया वृताः॥ १२॥

महाराज! शिखण्डी, अर्जुन, राक्षस घटोत्कच, महाबाहु चेकितान तथा पराक्रमी कुन्तिभोज—ये विशाल सेनासे घिरे हुए वीर युद्धभूमिमें यथायोग्य स्थानपर खड़े थे॥ ११-१२॥

अभिमन्युर्महेष्वासो द्रुपदश्च महाबलः।
युयुधानो महेष्वासो युधामन्युश्च वीर्यवान्॥ १३॥
केकया भ्रातरश्चैव स्थिता युद्धाय दंशिताः।

महाधनुर्धर अभिमन्यु, महाबली द्रुपद, विशाल धनुष धारण करनेवाले युयुधान, पराक्रमी युधामन्यु और पाँचों भाई केकयराजकुमार—ये कवच धारण करके युद्धके लिये तैयार खड़े थे॥ १३½ ॥

एवं तेऽपि महाव्यूहं प्रतिव्यूह्य सुदुर्जयम्॥ १४॥
पाण्डवाः समरे शूराः स्थिता युद्धाय दंशिताः।

इस प्रकार शूरवीर पाण्डव भी समरांगणमें अत्यन्त दुर्जय महाव्यूहकी रचना करके कवच बाँध युद्धके लिये तैयार थे॥ १४½ ॥

तावकास्तु रणे यत्ताः सहसेना नराधिपाः॥ १५॥
अभ्युद्ययू रणे पार्थान् भीष्मं कृत्वाग्रतो नृप।
तथैव पाण्डवा राजन् भीमसेनपुरोगमाः॥ १६॥

राजन्! आपकी सेनाके नरेश अपनी-अपनी सेनाओंके साथ युद्धके लिये उद्यत हो भीष्मको आगे करके पाण्डवोंपर चढ़ आये। नरेश्वर! उसी प्रकार भीमसेन आदि पाण्डवोंने भी आपकी सेनापर आक्रमण किया॥ १५-१६॥

भीष्मं योद्धुमभीप्सन्तः संग्रामे विजयैषिणः।
क्ष्वेडाः किलकिलाः शङ्खान् क्रकचान् गोविषाणिकाः॥ १७॥
भेरीमृदङ्गपणवान् नादयन्तश्च पुष्करान्।
पाण्डवा अभ्यवर्तन्त नदन्तो भैरवान् रवान्॥ १८॥

संग्राममें भीष्मके साथ युद्धकी इच्छा रखनेवाले विजयाभिलाषी पाण्डव सिंहनाद, किल-किल शब्द, शंखध्वनि, क्रकच, गोशृंग, भेरी, मृदंग, पणव तथा पुष्कर आदि बाजोंको बजाते तथा भैरव-गर्जना करते हुए कौरव-सेनापर चढ़ आये॥ १७-१८॥

भेरीमृदङ्गशङ्खानां दुन्दुभीनां च निःस्वनैः।
उत्कृष्टसिंहनादैश्च वल्गितैश्च पृथग्विधैः॥ १९॥
वयं प्रतिनदन्तस्तानगच्छाम त्वरान्विताः।
सहसैवाभिसंक्रुद्धास्तदाऽऽसीत् तुमुलं महत्॥ २०॥

भेरी, मृदंग, शंख और दुन्दुभियोंकी ध्वनि एवं उच्चस्वरसे सिंहनाद करते तथा अनेक प्रकारसे अपनी शेखी बघारते हुए हमलोगोंने भी बड़ी उतावलीके साथ अत्यन्त क्रुद्ध हो सहसा उनपर आक्रमण किया और उनकी गर्जनाका उत्तर हम भी अपनी गर्जनाद्वारा ही देने लगे। उस समय उभय पक्षके सैनिकोंमें महान् युद्ध होने लगा॥ १९-२०॥

ततोऽन्योन्यं प्रधावन्तः सम्प्रहारं प्रचक्रिरे।
ततः शब्देन महता प्रचकम्पे वसुन्धरा॥ २१॥

दोनों पक्षके योद्धा एक-दूसरेपर धावा करते हुए अस्त्र-शस्त्रोंका प्रहार करने लगे। उस समय जो महान् कोलाहल हुआ, उससे सारी पृथ्वी काँपने लगी॥ २१॥

पक्षिणश्च महाघोरं व्याहरन्तो विबभ्रमुः।
सप्रभश्चोदितः सूर्यो निष्प्रभः समपद्यत॥ २२॥

पक्षी अत्यन्त घोर शब्द करते हुए आकाशमें चक्कर काटने लगे। सूर्य यद्यपि तेजस्वी रूपमें उदित हुआ था, तथापि उस समय निस्तेज हो गया॥ २२॥

ववुश्च वातास्तुमुलाः शंसन्तः सुमहद् भयम्।
घोराश्च घोरनिर्ह्रादाः शिवास्तत्र ववाशिरे॥ २३॥

महान् भयकी सूचना देनेवाली भयंकर वायु बड़े वेगसे बहने लगी। घोर वज्रपातके-से भयानक शब्द सुनायी देने लगे। सियारिनें अशुभ बोली बोलने लगीं॥ २३॥

वेदयन्त्यो महाराज महद् वैशसमागतम्।
दिशः प्रज्वलिता राजन् पांसुवर्षं पपात च॥ २४॥
रुधिरेण समुन्मिश्रमस्थिवर्षं तथैव च।
रुदतां वाहनानां च नेत्रेभ्यः प्रापतज्जलम्॥ २५॥

महाराज! वे गीदड़ियाँ सिरपर आये हुए विकट विनाशकी सूचना दे रही थीं। राजन्! दिशाएँ जलती प्रतीत होने लगीं। सब ओर धूलकी वर्षा होने लगी। रक्तमिश्रित हड्डियाँ बरसने लगीं। रोते हुए वाहनोंके नेत्रोंसे आँसू गिरने लगे॥ २४-२५॥

सुस्रुवुश्च शकृन्मूत्रं प्रध्यायन्तो विशाम्पते।
अन्तर्हिता महानादाः श्रूयन्ते भरतर्षभ॥ २६॥
रक्षसां पुरुषादानां नदतां भैरवान् रवान्।

प्रजानाथ! वे सारे वाहन भारी चिन्तामें पड़कर मल-मूत्र करने लगे। भरतश्रेष्ठ! भयंकर गर्जना करनेवाले नरभक्षी राक्षसोंके महान् शब्द सुनायी पड़ते थे; परंतु उनके बोलनेवाले अदृश्य थे॥ २६½ ॥

सम्पतन्तश्च दृश्यन्ते गोमायुबलवायसाः॥ २७॥
श्वानश्च विविधैर्नादैर्वाशन्तस्तत्र मारिष।

चारों ओरसे गीदड़ और बलशाली कौए वहाँ टूटे पड़ते थे। आर्य! वहाँ कुत्ते भी नाना प्रकारकी आवाजमें भूँकते देखे जाते थे॥ २७½ ॥

ज्वलिताश्च महोल्का वै समाहत्य दिवाकरम्।
निपेतुः सहसा भूमौ वेदयन्त्यो महद् भयम्॥ २८॥

बड़ी-बड़ी प्रज्वलित उल्काएँ सूर्यदेवसे टकराकर महान् भयकी सूचना देती हुई सहसा पृथ्वीपर गिर रही थीं॥ २८॥

महान्त्यनीकानि महासमुच्छ्रये
ततस्तयोः पाण्डवधार्तराष्ट्र्योः।
चकम्पिरे शङ्खमृदङ्गनिःस्वनैः
प्रकम्पितानीव वनानि वायुना॥ २९॥

उस महान् संग्राममें पाण्डव तथा कौरवपक्षकी विशाल सेनाएँ शंख और मृदंगकी ध्वनियोंसे उसी प्रकार काँप रही थीं, जैसे वायुके वेगसे समूचा वनप्रान्त हिलने लगता है। उस अमंगलजनक मुहूर्तमें नरेशों, हाथियों और अश्वोंसे परिपूर्ण हो परस्पर आक्रमण करती हुई उभय पक्षकी उन विशाल सेनाओंका भयंकर शब्द वायुसे विक्षुब्ध हुए समुद्रोंकी गर्जनाके समान जान पड़ता था॥ २९-३०॥

नरेन्द्रनागाश्वसमाकुलाना-
मभ्यायतीनामशिवे मुहूर्ते।
बभूव घोषस्तुमुलश्चमूनां
वातोद्धुतानामिव सागराणाम्॥ ३०॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि परस्परव्यूहरचनायामुत्पातदर्शने एकोनशततमोऽध्यायः॥ ९९॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें परस्पर व्यूह-रचनाके पश्चात् उत्पातदर्शनविषयक निन्यानबेवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ९९॥

शततमोऽध्यायः

द्रौपदीके पाँचों पुत्रों और अभिमन्युका राक्षस अलम्बुषके साथ घोर युद्ध एवं अभिमन्युके द्वारा नष्ट होती हुई कौरव-सेनाका युद्धभूमिसे पलायन

संजय उवाच

अभिमन्यू रथोदारः पिशङ्गैस्तुरगोत्तमैः।
अभिदुद्राव तेजस्वी दुर्योधनबलं महत्॥ १॥

संजय कहते हैं—राजन्! रथियोंमें श्रेष्ठ तेजस्वी अभिमन्यु पिंगल वर्णवाले श्रेष्ठ घोड़ोंसे जुते हुए रथद्वारा दुर्योधनकी विशाल सेनापर टूट पड़ा॥ १॥

विकिरञ्शरवर्षाणि वारिधारा इवाम्बुदः।
न शेकुः समरे क्रुद्धं सौभद्रमरिसूदनम्॥ २॥
(क्रोडरूपं हरिमिव प्रविशन्तं महार्णवम्।)
शस्त्रौघिणं गाहमानं सेनासागरमक्षयम्।
निवारयितुमप्याजौ त्वदीयाः कुरुनन्दन॥ ३॥

जैसे बादल जलकी धारा बरसाता है, उसी प्रकार वह बाणोंकी वृष्टि कर रहा था। जैसे वाराहरूपधारी भगवान् विष्णुने महासागरमें प्रवेश किया था, उसी प्रकार शत्रुसूदन सुभद्राकुमार समरमें कुपित हो शस्त्रोंके प्रवाहसे युक्त कौरवोंके अक्षय सैन्यसमुद्रमें प्रवेश कर रहा था। कुरुनन्दन! उस समय आपके सैनिक उसे युद्धमें रोक न सके॥ २-३॥

तेन मुक्ता रणे राजञ्शराः शत्रुनिबर्हणाः।
क्षत्रियाननयञ्शूरान् प्रेतराजनिवेशनम्॥ ४॥

राजन्! रणक्षेत्रमें अभिमन्युके छोड़े हुए शत्रुनाशक बाणोंने बहुत-से शूरवीर क्षत्रियोंको यमराजके लोकमें पहुँचा दिया॥ ४॥

यमदण्डोपमान् घोराञ्ज्वलिताशीविषोपमान्।
सौभद्रः समरे क्रुद्धः प्रेषयामाससायकान्॥ ५॥

सुभद्राकुमार समरांगणमें क्रुद्ध होकर यमदण्डके समान घोर तथा प्रज्वलित मुखवाले विषधर सर्पोंके समान भयंकर सायकोंका प्रहार कर रहा था॥ ५॥

सरथान् रथिनस्तूर्णं हयांश्चैव ससादिनः।
गजारोहांश्च सगजान् दारयामास फाल्गुनिः॥ ६॥

अर्जुनकुमारने रथोंसहित रथियों, सवारोंसहित घोड़ों और हाथियोंसहित गजारोहियोंको तुरंत ही विदीर्ण कर डाला॥ ६॥

तस्य तत् कुर्वतः कर्म महत् संख्ये महीभृतः।
पूजयांचक्रिरे हृष्टाः प्रशशंसुश्च फाल्गुनिम्॥ ७॥

युद्धमें ऐसा महान् पराक्रम करते हुए अभिमन्यु और उसके कर्मकी सभी राजाओंने प्रसन्न होकर भूरि-भूरि प्रशंसा की॥ ७॥

तान्यनीकानि सौभद्रो द्रावयामास भारत।
तूलराशीनिवाकाशे मारुतः सर्वतो दिशम्॥ ८॥

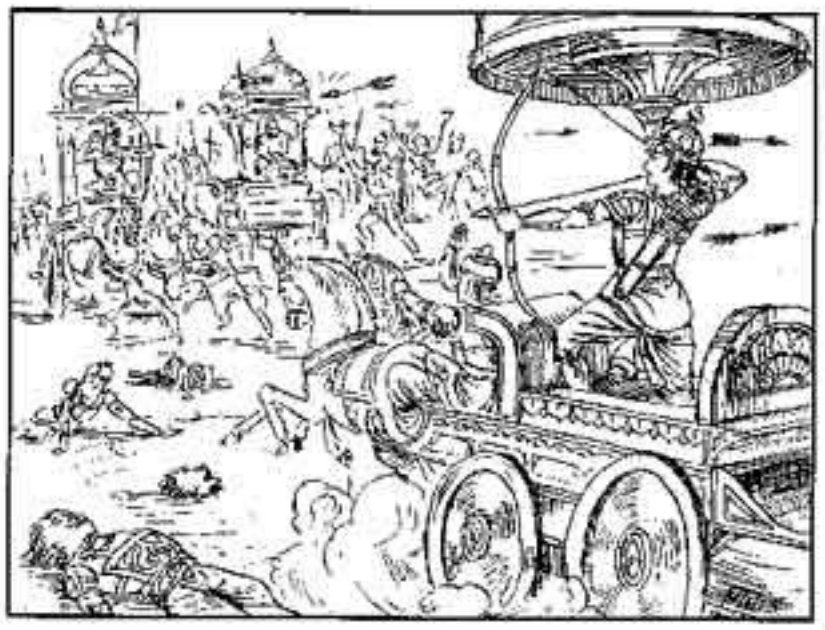

भारत! जैसे हवा रूईके ढेरको आकाशमें उड़ा देती है, उसी प्रकार सुभद्राकुमारने सम्पूर्ण सेनाओंको चारों दिशाओंमें भगा दिया॥ ८॥

तेन विद्राव्यमाणानि तव सैन्यानि भारत।
त्रातारं नाध्यगच्छन्त पङ्के मग्ना इव द्विपाः॥ ९॥

भरतनन्दन! अभिमन्युके द्वारा खदेड़ी जाती हुई आपकी सेनाएँ कीचड़में फँसे हुए हाथियोंके समान किसीको अपना रक्षक न पा सकीं॥ ९॥

विद्राव्य सर्वसैन्यानि तावकानि नरोत्तम।
अभिमन्युः स्थितो राजन् विधूमोऽग्निरिव ज्वलन्॥ १०॥

नरश्रेष्ठ! आपकी सम्पूर्ण सेनाओंको खदेड़कर अभिमन्यु धूमरहित अग्निकी भाँति प्रकाशित हो रहा था॥ १०॥

न चैनं तावका राजन् विषेहुररिघातिनम्।
प्रदीप्तं पावकं यद्वत् पतङ्गाः कालचोदिताः॥ ११॥

राजन्! आपके सैनिक शत्रुघाती अभिमन्युका वेग नहीं सह सके। जैसे कालप्रेरित फतिंगे प्रज्वलित अग्निकी आँच नहीं सह पाते (उसीमें झुलसकर मर जाते हैं), वही दशा आपके सैनिकोंकी थी॥ ११॥

प्रहरन् सर्वशत्रुभ्यः पाण्डवानां महारथः।
अदृश्यत महेष्वासः सवज्र इव वासवः॥ १२॥

सम्पूर्ण शत्रुओंपर प्रहार करता हुआ पाण्डव-महारथी महाधनुर्धर अभिमन्यु वज्रधारी इन्द्रके समान दृष्टिगोचर हो रहा था॥ १२॥

हेमपृष्ठं धनुश्चास्य ददृशे विचरद् दिशः।
तोयदेषु यथा राजन् राजमाना शतह्रदा॥ १३॥

राजन्! अभिमन्युके धनुषका पृष्ठभाग सुवर्णसे जटित था, वह सम्पूर्ण दिशाओंमें विचरण करता हुआ बादलोंमें चमकनेवाली बिजलीके समान सुशोभित होता था॥ १३॥

शराश्च निशिताः पीता निश्चरन्ति स्म संयुगे।
वनात् फुल्लद्रुमाद् राजन् भ्रमराणामिव व्रजाः॥ १४॥

युद्धके मैदानमें उसके धनुषसे तीखे और चमचमाते बाण इस प्रकार छूटते थे, मानो विकसित वृक्षावलियोंसे भरे हुए वनप्रान्तसे भ्रमरोंके समूह निकल रहे हों॥ १४॥

तथैव चरतस्तस्य सौभद्रस्य महात्मनः।
रथेन काञ्चनाङ्गेन ददृशुर्नान्तरं जनाः॥ १५॥

महामना सुभद्राकुमार अभिमन्यु सुवर्णमय रथके द्वारा पूर्ववत् रणभूमिमें विचरता रहा; लोगोंने उसकी गतिमें कोई अन्तर नहीं देखा॥ १५॥

मोहयित्वा कृपं द्रोणं द्रौणिं च सबृहद्बलम्।
सैन्धवं च महेष्वासो व्यचरल्लघु सुष्ठु च॥ १६॥

महाधनुर्धर अभिमन्यु कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, बृहद्बल और सिन्धुराज जयद्रथ—सबको मोहित करके सुन्दर और शीघ्र गतिसे सब ओर विचरता रहा॥ १६॥

मण्डलीकृतमेवास्य धनुः पश्याम भारत।
सूर्यमण्डलसंकाशं दहतस्तव वाहिनीम्॥ १७॥

भारत! आपकी सेनाको भस्म करते हुए उस अभिमन्युके धनुषको हम सदा सूर्यमण्डलके सदृश मण्डलाकार हुआ ही देखते थे॥ १७॥

तं दृष्ट्वा क्षत्रियाः शूराः प्रतपन्तं तरस्विनम्।
द्विफाल्गुनमिमं लोकं मेनिरे तस्य कर्मभिः॥ १८॥

सबको संताप देते हुए उस वेगशाली वीरको देखकर समस्त शूरवीर क्षत्रिय उसके कर्मोंद्वारा यह मानने लगे कि इस लोकमें दो अर्जुन हो गये हैं॥ १८॥

तेनार्दिता महाराज भारती सा महाचमूः।
व्यभ्रमत् तत्र तत्रैव योषिन्मदवशादिव॥ १९॥

महाराज! अभिमन्युसे पीड़ित हुई भरतवंशियोंकी वह विशाल सेना मदोन्मत्त युवतीकी भाँति वहीं चक्कर काट रही थी॥ १९॥

द्रावयित्वा महासैन्यं कम्पयित्वा महारथान्।
नन्दयामास सुहृदो मयं जित्वेव वासवः॥ २०॥

मयासुरपर विजय पानेवाले इन्द्रकी भाँति अभिमन्युने उस विशाल सेनाको भगाकर, महारथियोंको कँपाकर अपने सुहृदोंको आनन्दित किया॥ २०॥

तेन विद्राव्यमाणानि तव सैन्यानि संयुगे।
चक्रुरार्तस्वनं घोरं पर्जन्यनिनदोपमम्॥ २१॥

उसके द्वारा युद्धमें खदेड़े हुए आपके सैनिक मेघोंकी गर्जनाके समान घोर आर्तनाद करने लगे॥ २१॥

तं श्रुत्वा निनदं घोरं तव सैन्यस्य भारत।
मारुतोद्धूतवेगस्य सागरस्येव पर्वणि॥ २२॥
दुर्योधनस्तदा राजन्नार्ष्यशृङ्गिमभाषत।
एष कार्ष्णिर्महाबाहो द्वितीय इव फाल्गुनः॥ २३॥

भरतवंशी नरेश! पूर्णिमाके दिन वायुके थपेड़ोंसे उद्वेलित हुए समुद्रकी गर्जनाके समान आपकी सेनाका वह भयंकर चीत्कार सुनकर उस समय दुर्योधनने राक्षस ऋष्यशृंगपुत्र अलम्बुषसे इस प्रकार कहा—'महाबाहो! यह अर्जुनका पुत्र द्वितीय अर्जुनके समान पराक्रमी है॥ २२-२३॥

चमूं द्रावयते क्रोधाद् वृत्रो देवचमूमिव।
तस्य चान्यन्न पश्यामि संयुगे भेषजं महत्॥ २४॥
ऋते त्वां राक्षसश्रेष्ठं सर्वविद्यासु पारगम्।

'जैसे वृत्रासुर देवताओंकी सेनाको मार भगाता था, उसी प्रकार वह भी क्रोधपूर्वक मेरी सेनाको खदेड़ रहा है। मैं युद्धस्थलमें सम्पूर्ण विद्याओंके पारंगत तथा राक्षसोंमें सर्वश्रेष्ठ तुम-जैसे वीरको छोड़कर दूसरे किसीको ऐसा नहीं देखता, जो उस रोगकी सबसे उत्तम दवा हो सके॥ २४½॥

स गत्वा त्वरितं वीरं जहि सौभद्रमाहवे॥ २५॥
वयं पार्थं हनिष्यामो भीष्मद्रोणपुरोगमाः।

'अतः तुम तुरंत जाकर युद्धके मैदानमें वीर सुभद्राकुमारका वध करो और हमलोग भीष्म तथा द्रोणाचार्यको आगे करके अर्जुनको मार डालेंगे'॥ २५½॥

स एवमुक्तो बलवान् राक्षसेन्द्रः प्रतापवान्॥ २६॥
प्रययौ समरे तूर्णं तव पुत्रस्य शासनात्।
नर्दमानो महानादं प्रावृषीव बलाहकः॥ २७॥

आपके पुत्र दुर्योधनके ऐसा कहनेपर उसकी आज्ञासे बलवान् एवं प्रतापी राक्षसराज अलम्बुष तुरंत ही वर्षाकालके मेघकी भाँति जोर-जोरसे गर्जना करता हुआ समरभूमिमें गया॥ २६-२७॥

तस्य शब्देन महता पाण्डवानां बलं महत्।
प्राचलत् सर्वतो राजन् वातोद्धूत इवार्णवः॥ २८॥

राजन्! उसके महान् गर्जनसे वायुसे विक्षुब्ध हुए समुद्रके समान पाण्डवोंकी विशाल सेनामें सब ओर हलचल मच गयी॥ २८॥

बहवश्च महाराज तस्य नादेन भीषिताः।
प्रियान् प्राणान् परित्यज्य निपेतुर्धरणीतले॥ २९॥

महाराज! उसके सिंहनादसे भयभीत हो बहुत-से सैनिक अपने प्यारे प्राणोंको त्यागकर पृथ्वीपर गिर पड़े॥

कार्ष्णिश्चापि मुदा युक्तः प्रगृह्य सशरं धनुः।
नृत्यन्निव रथोपस्थे तद् रक्षः समुपाद्रवत्॥ ३०॥

अभिमन्यु भी हर्ष और उत्साहमें भरकर हाथमें धनुष-बाण लिये रथकी बैठकमें नृत्य-सा करता हुआ उस राक्षसकी ओर दौड़ा॥ ३०॥

ततः स राक्षसः क्रुद्धः सम्प्राप्यैवार्जुनिं रणे।
नातिदूरे स्थितां तस्य द्रावयामास वै चमूम्॥ ३१॥

तत्पश्चात् क्रोधमें भरा हुआ वह राक्षस युद्धमें अभिमन्युके समीप पहुँचकर पास ही खड़ी हुई उसकी सेनाको भगाने लगा॥ ३१॥

तां वध्यमानां च तथा पाण्डवानां महाचमूम्।
प्रत्युद्ययौ रणे रक्षो देवसेनां यथा बलः॥ ३२॥

इस प्रकार पीड़ित हुई पाण्डवोंकी विशाल वाहिनीपर उस राक्षसने युद्धमें उसी प्रकार धावा किया, जैसे बल नामक दैत्यने देवसेनापर आक्रमण किया था॥ ३२॥

विमर्दः सुमहानासीत् तस्य सैन्यस्य मारिष।
रक्षसा घोररूपेण वध्यमानस्य संयुगे॥ ३३॥

आर्य! युद्धस्थलमें भयंकर राक्षसके द्वारा मारी जाती हुई उस सेनाका महान् संहार होने लगा॥ ३३॥

ततः शरसहस्रैस्तां पाण्डवानां महाचमूम्।
व्यद्रावयद् रणे रक्षो दर्शयन् स्वपराक्रमम्॥ ३४॥

उस समय राक्षसने अपना पराक्रम दिखाते हुए रणक्षेत्रमें सहस्रों बाणोंद्वारा पाण्डवोंकी उस विशाल सेनाको खदेड़ना आरम्भ किया॥ ३४॥

सा वध्यमाना च तथा पाण्डवानामनीकिनी।
रक्षसा घोररूपेण प्रदुद्राव रणे भयात्॥ ३५॥

उस घोर राक्षसके द्वारा उस प्रकार मारी जाती हुई वह पाण्डवसेना भयके मारे रणभूमिसे भाग चली॥ ३५॥

प्रमृद्य च रणे सेनां
पद्मिनीं वारणो यथा।
ततोऽभिदुद्राव रणे
द्रौपदेयान् महाबलान्॥ ३६॥

जैसे हाथी कमलमण्डित सरोवरको मथ डालता है, उसी प्रकार रणभूमिमें पाण्डवसेनाको रौंदकर अलम्बुषने महाबली द्रौपदीपुत्रोंपर धावा किया॥ ३६॥

ते तु क्रुद्धा महेष्वासा द्रौपदेयाः प्रहारिणः।
राक्षसं दुद्रुवुः संख्ये ग्रहाः पञ्च रविं यथा॥ ३७॥

द्रौपदीके पाँचों पुत्र महान् धनुर्धर तथा प्रहार करनेमें कुशल थे। उन्होंने संग्रामभूमिमें कुपित हो उस राक्षसपर उसी प्रकार धावा किया, मानो पाँच ग्रह

सूर्यदेवपर आक्रमण कर रहे हों॥ ३७॥

वीर्यवद्भिस्ततस्तैस्तु पीडितो राक्षसोत्तमः।
यथा युगक्षये घोरे चन्द्रमाः पञ्चभिर्ग्रहैः॥ ३८॥

उस समय उन पराक्रमी द्रौपदीपुत्रोंद्वारा वह श्रेष्ठ राक्षस उसी प्रकार पीड़ित होने लगा, जैसे भयानक प्रलयकाल आनेपर चन्द्रमा पाँच ग्रहोंद्वारा पीड़ित होते हैं॥

प्रतिविन्ध्यस्ततो रक्षो बिभेद निशितैः शरैः।
सर्वपारशवैस्तूर्णैरकुण्ठाग्रैर्महाबलः॥ ३९॥

तत्पश्चात् महाबली प्रतिविन्ध्यने पूर्णतः लोहेके बने हुए अप्रतिहत धारवाले शीघ्रगामी तीखे बाणोंद्वारा उस राक्षसको विदीर्ण कर डाला॥ ३९॥

स तैर्भिन्नतनुत्राणः शुशुभे राक्षसोत्तमः।
मरीचिभिरिवार्कस्य संस्यूतो जलदो महान्॥ ४०॥

वे बाण उसके कवचको छेदकर शरीरमें धँस गये। उनके द्वारा राक्षसराज अलम्बुषकी वैसी ही शोभा हुई, मानो महान् मेघ सूर्यकी किरणोंसे ओतप्रोत हो रहा हो॥ ४०॥

विषक्तैः स शरैश्चापि तपनीयपरिच्छदैः।
आर्ष्यशृङ्गिर्बभौ राजन् दीप्तशृङ्ग इवाचलः॥ ४१॥

राजन्! शरीरमें धँसे हुए उन सुवर्णभूषित बाणोंद्वारा राक्षस अलम्बुष चमकीले शिखरोंवाले पर्वतकी भाँति सुशोभित हुआ॥ ४१॥

ततस्ते भ्रातरः पञ्च राक्षसेन्द्रं महाहवे।
विव्यधुर्निशितैर्बाणैस्तपनीयविभूषितैः॥ ४२॥

तदनन्तर उन पाँचों भाइयोंने उस महासमरमें सुवर्णभूषित तीक्ष्ण बाणोंद्वारा राक्षसराज अलम्बुषको क्षत-विक्षत कर दिया॥ ४२॥

स निर्भिन्नः शरैर्घोरैर्भुजगैः कोपितैरिव।
अलम्बुषो भृशं राजन् नागेन्द्र इव चुक्रुधे॥ ४३॥

राजन्! क्रोधमें भरे हुए सर्पोंके समान उन घोर सायकोंद्वारा अत्यन्त घायल हुआ अलम्बुष अंकुशविद्ध गजराजकी भाँति कुपित हो उठा॥ ४३॥

सोऽतिविद्धो महाराज मुहूर्तमथ मारिष।
प्रविवेश तमो दीर्घं पीडितस्तैर्महारथैः॥ ४४॥

महाराज! उन महारथियोंके बाणोंसे अत्यन्त आहत और पीड़ित हो अलम्बुष दो घड़ीतक भारी मोह (मूर्च्छा)-में डूबा रहा॥ ४४॥

प्रतिलभ्य ततः संज्ञां क्रोधेन द्विगुणीकृतः।
चिच्छेद सायकांस्तेषां ध्वजांश्चैव धनूंषि च॥ ४५॥

तदनन्तर होशमें आकर वह दूने क्रोधसे जल उठा। फिर उसने उनके सायकों, ध्वजों और धनुषोंके टुकड़े-टुकड़े कर डाले॥ ४५॥

एकैकं पञ्चभिर्बाणैराजघान स्मयन्निव।
अलम्बुषो रथोपस्थे नृत्यन्निव महारथः॥ ४६॥

इसके बाद रथकी बैठकमें नृत्य-सा करते हुए महारथी अलम्बुषने मुसकराते हुए उनमेंसे एक-एकको पाँच-पाँच बाणोंद्वारा घायल कर दिया॥ ४६॥

त्वरमाणः सुसंरब्धो हयांस्तेषां महात्मनाम्।
जघान राक्षसः क्रुद्धः सारथींश्च महाबलः॥ ४७॥

फिर अत्यन्त उतावलीके साथ रोषावेशमें भरे हुए उस महाबली राक्षसने कुपित हो उन महामनस्वी पाँचों भाइयोंके घोड़ों और सारथियोंको भी मार डाला॥ ४७॥

बिभेद च सुसंरब्धः पुनश्चैनान् सुसंशितैः।
शरैर्बहुविधाकारैः शतशोऽथ सहस्रशः॥ ४८॥

इसके बाद पुनः कुपित हो भाँति-भाँतिके सैकड़ों और हजारों तीखे बाणोंद्वारा उन सबको गहरी चोट पहुँचायी॥ ४८॥

विरथांश्च महेष्वासान् कृत्वा तत्र स राक्षसः।
अभिदुद्राव वेगेन हन्तुकामो निशाचरः॥ ४९॥

उन महाधनुर्धर वीरोंको रथहीन करके युद्धमें उन्हें मार डालनेकी इच्छासे निशाचर अलम्बुषने बड़े वेगसे उनपर धावा किया॥ ४९॥

तानर्दितान् रणे तेन राक्षसेन दुरात्मना।
दृष्ट्वार्जुनसुतः संख्ये राक्षसं समुपाद्रवत्॥ ५०॥

उन पाँचों भाइयोंको रणक्षेत्रमें दुरात्मा राक्षसके द्वारा अत्यन्त पीड़ित देख अर्जुनकुमार अभिमन्युने पुनः उसके ऊपर आक्रमण किया॥ ५०॥

तयोः समभवद् युद्धं वृत्रवासवयोरिव।
ददृशुस्तावकाः सर्वे पाण्डवाश्च महारथाः॥ ५१॥

फिर उन दोनोंमें वृत्रासुर और इन्द्रके समान भयंकर युद्ध होने लगा। आपके और पाण्डवपक्षके सभी महारथी उस युद्धको देखने लगे॥ ५१॥

तौ समेतौ महायुद्धे क्रोधदीप्तौ परस्परम्।
महाबलौ महाराज क्रोधसंरक्तलोचनौ॥ ५२॥
परस्परमवेक्षेतां कालानलसमौ युधि।
तयोः समागमो घोरो बभूव कटुकोदयः॥ ५३॥
यथा देवासुरे युद्धे शक्रशम्बरयोः पुरा॥ ५४॥

महाराज! उस महायुद्धमें क्रोधसे उद्दीप्त हो आँखें लाल-लाल करके एक-दूसरेसे भिड़े हुए वे दोनों महाबली वीर युद्धमें काल और अग्निके समान परस्पर

देखने लगे। उनका वह घोर संग्राम अत्यन्त कटु परिणामको प्रकट करनेवाला था। पूर्वकालमें देवासुर-संग्रामके अवसरपर इन्द्र और शम्बरासुरमें जैसा भयंकर युद्ध हुआ था, वैसा ही उनमें भी हुआ॥५२—५४॥

इति श्रीमहाभारते भीष्मपर्वणि भीष्मवधपर्वणि अलम्बुषाभिमन्युसमागमे शततमोऽध्यायः॥ १०० ॥

इस प्रकार श्रीमहाभारत भीष्मपर्वके अन्तर्गत भीष्मवधपर्वमें अलम्बुष और अभिमन्युका संग्रामविषयक सौवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ १०० ॥

[दाक्षिणात्य अधिक पाठका $\frac{1}{2}$ श्लोक मिलाकर कुल ५४$\frac{1}{2}$ श्लोक हैं।]

एकाधिकशततमोऽध्यायः

अभिमन्युके द्वारा अलम्बुषकी पराजय, अर्जुनके साथ भीष्मका तथा कृपाचार्य, अश्वत्थामा और द्रोणाचार्यके साथ सात्यकिका युद्ध

धृतराष्ट्र उवाच

आर्जुनिं समरे शूरं विनिघ्नन्तं महारथान्।
अलम्बुषः कथं युद्धे प्रत्ययुध्यत संजय॥ १॥
आर्ष्यशृङ्गिं कथं चैव सौभद्रः परवीरहा।
तन्ममाचक्ष्व तत्त्वेन यथावृत्तं स्म संयुगे॥ २॥

धृतराष्ट्रने पूछा—संजय! समरमें बड़े-बड़े महारथियोंका संहार करते हुए शूरवीर अर्जुनकुमार अभिमन्युके साथ राक्षस अलम्बुषने किस प्रकार युद्ध किया? इसी प्रकार शत्रुवीरोंका हनन करनेवाले सुभद्रा-कुमारने राक्षस अलम्बुषके साथ कैसे युद्ध किया? युद्धस्थलमें उन दोनोंसे सम्बन्ध रखनेवाला जो भी वृत्तान्त हो, वह मुझे ठीक-ठीक बताओ॥१-२॥

धनंजयश्च किं चक्रे मम सैन्येषु संयुगे।
भीमो वा रथिनां श्रेष्ठो राक्षसो वा घटोत्कचः॥ ३॥
नकुलः सहदेवो वा सात्यकिर्वा महारथः।
एतदाचक्ष्व मे सत्यं कुशलो ह्यसि संजय॥ ४॥

उस युद्धके मैदानमें अर्जुनने मेरी सेनाओंके साथ क्या किया? रथियोंमें श्रेष्ठ भीमसेन अथवा राक्षस घटोत्कच या नकुल-सहदेव एवं महारथी सात्यकिने क्या किया? संजय! यह सब मुझे यथार्थरूपसे बताओ; क्योंकि तुम इन बातोंके बतानेमें कुशल हो॥३-४॥

संजय उवाच

हन्त तेऽहं प्रवक्ष्यामि संग्रामं लोमहर्षणम्।
यथाभूद् राक्षसेन्द्रस्य सौभद्रस्य च मारिष॥ ५॥
अर्जुनश्च यथा संख्ये भीमसेनश्च पाण्डवः।
नकुलः सहदेवश्च रणे चक्रुः पराक्रमम्॥ ६॥
तथैव तावकाः सर्वे भीष्मद्रोणपुरःसराः।
अद्भुतानि विचित्राणि चक्रुः कर्माण्यभीतवत्॥ ७॥

संजयने कहा—आर्य! मैं बड़े दुःखके साथ उस रोमांचकारी संग्रामका वर्णन करूँगा, जो राक्षसराज अलम्बुष और सुभद्राकुमार अभिमन्युमें हुआ था तथा पाण्डुपुत्र अर्जुन, भीमसेन, नकुल और सहदेवने युद्धमें किस प्रकार पराक्रम किया और उसी प्रकार भीष्म, द्रोण आदि आपके सभी योद्धाओंने निर्भीक-से होकर अद्भुत और विचित्र कर्म किये—यह सब भी मुझसे सुनिये॥५—७॥

अलम्बुषस्तु समरे अभिमन्युं महारथम्।
विनद्य सुमहानादं तर्जयित्वा मुहुर्मुहुः॥ ८॥
अभिदुद्राव वेगेन तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रवीत्।

अलम्बुषने समरभूमिमें महारथी अभिमन्युको जोर-जोरसे गर्जना करके बारंबार डाँट बतायी और 'खड़ा रह, खड़ा रह' ऐसा कहकर बड़े वेगसे उसपर धावा किया॥ $8\frac{1}{2}$॥

अभिमन्युश्च वेगेन सिंहवद् विनदन् मुहुः॥ ९॥
आर्ष्यशृङ्गिं महेष्वासं पितुरत्यन्तवैरिणम्।

इसी प्रकार वीर अभिमन्युने भी बारंबार सिंहनाद करते हुए अपने पितृव्य भीमसेनके अत्यन्त वैरी महाधनुर्धर अलम्बुषपर वेगसे आक्रमण किया॥ $9\frac{1}{2}$॥

ततः समीयतुः संख्ये त्वरितौ नरराक्षसौ॥ १०॥
रथाभ्यां रथिनौ श्रेष्ठौ यथा वै देवदानवौ।

फिर तो वे मनुष्य तथा राक्षस दोनों वीर तुरंत ही युद्धस्थलमें एक-दूसरेसे भिड़ गये। दोनों ही रथियोंमें श्रेष्ठ थे, अतः देवता और दानवकी भाँति रथोंद्वारा एक-दूसरेका सामना करने लगे॥ $10\frac{1}{2}$॥

मायावी राक्षसश्रेष्ठो दिव्यास्त्रश्चैव फाल्गुनिः॥ ११॥

राक्षसश्रेष्ठ अलम्बुष मायावी था और अर्जुनकुमार अभिमन्युको दिव्यास्त्रोंका ज्ञान था॥११॥

ततः कार्ष्णिर्महाराज निशितैः सायकैस्त्रिभिः।
आर्ष्यशृङ्गिं रणे विद्ध्वा पुनर्विव्याध पञ्चभिः॥ १२॥

महाराज! तदनन्तर अर्जुनपुत्र अभिमन्युने तीन तीखे सायकोंसे रणक्षेत्रमें अलम्बुषको बींधकर पुनः पाँच बाणोंसे घायल कर दिया॥ १२॥

अलम्बुषोऽपि संक्रुद्धः कार्ष्णिं नवभिराशुगैः।
हृदि विव्याध वेगेन तोत्रैरिव महाद्विपम्॥ १३॥

तब क्रोधमें भरे हुए अलम्बुषने भी नौ शीघ्रगामी बाणोंद्वारा अर्जुनपुत्र अभिमन्युकी छातीमें उसी प्रकार वेगपूर्वक प्रहार किया, जैसे अंकुशद्वारा गजराजपर प्रहार किया जाता है॥ १३॥

ततः शरसहस्रेण क्षिप्रकारी निशाचरः।
अर्जुनस्य सुतं संख्ये पीडयामास भारत॥ १४॥

भारत! तत्पश्चात् शीघ्रतापूर्वक सारे कार्य करनेवाले निशाचरने एक हजार बाण मारकर युद्धस्थलमें अर्जुनके पुत्रको पीड़ित कर दिया॥ १४॥

अभिमन्युस्ततः क्रुद्धो नवभिर्नतपर्वभिः।
बिभेद निशितैर्बाणै राक्षसेन्द्रं महोरसि॥ १५॥

इससे क्रुद्ध होकर अभिमन्युने राक्षसराज अलम्बुषकी चौड़ी छातीमें झुकी हुई गाँठवाले नौ पैने बाण मारे॥ १५॥

ते तस्य विविशुस्तूर्णं कायं निर्भिद्य मर्मसु।
स तैर्विभिन्नसर्वाङ्गः शुशुभे राक्षसोत्तमः॥ १६॥
पुष्पितैः किंशुकै राजन् संस्तीर्ण इव पर्वतः।

वे बाण राक्षसके शरीरको विदीर्ण करके उसके मर्मस्थानोंमें धँस गये। राजन्! उन बाणोंसे सम्पूर्ण अंगोंके क्षत-विक्षत हो जानेपर राक्षसराज अलम्बुष खिले हुए पलाशके वृक्षोंसे आच्छादित पर्वतकी भाँति सुशोभित होने लगा॥ १६½॥

संधारयाणश्च शरान् हेमपुङ्खान् महाबलः॥ १७॥
विबभौ राक्षसश्रेष्ठः सज्वाल इव पर्वतः।

सुवर्णमय पंखसे युक्त उन बाणोंको अपने अंगोंमें धारण किये महाबली राक्षसश्रेष्ठ अलम्बुष अग्निकी ज्वालाओंसे युक्त पर्वतकी भाँति शोभा पा रहा था॥ १७½॥

ततः क्रुद्धो महाराज आर्ष्यशृङ्गिरमर्षणः॥ १८॥
महेन्द्रप्रतिमं कार्ष्णिं छादयामास पत्रिभिः।

महाराज! तब अमर्षशील अलम्बुषने कुपित होकर देवराज इन्द्रके समान पराक्रमी अर्जुनकुमारको पंखवाले बाणोंसे आच्छादित कर दिया॥ १८½॥

तेन ते विशिखा मुक्ता यमदण्डोपमाः शिताः॥ १९॥
अभिमन्युं विनिर्भिद्य प्राविशन्त धरातलम्।

उसके द्वारा छोड़े हुए यमदण्डके समान भयंकर एवं तीखे बाण अभिमन्युके शरीरको छेदकर धरतीमें समा गये॥ १९½॥

तथैवार्जुनिना मुक्ताः शराः कनकभूषणाः॥ २०॥
अलम्बुषं विनिर्भिद्य प्राविशन्त धरातलम्।

उसी प्रकार अभिमन्युके छोड़े हुए सुवर्णभूषित बाण भी अलम्बुषको विदीर्ण करके पृथ्वीमें समा गये॥

सौभद्रस्तु रणे रक्षः शरैः संनतपर्वभिः॥ २१॥
चक्रे विमुखमासाद्य मयं शक्र इवाहवे।

जैसे इन्द्र युद्धस्थलमें मयासुरको विमुख कर देते हैं, उसी प्रकार सुभद्राकुमार अभिमन्युने रणक्षेत्रमें झुकी हुई गाँठवाले बाणोंद्वारा मारकर उस राक्षसको युद्धसे विमुख कर दिया॥ २१½॥

विमुखं च ततो रक्षो वध्यमानं रणेऽरिणा॥ २२॥
प्रादुश्चक्रे महामायां तामसीं परतापनाम्।

फिर समरांगणमें शत्रुसे पीड़ित एवं विमुख हुए राक्षसने शत्रुओंको तपानेवाली अपनी (अन्धकारमयी) तामसी महामाया प्रकट की॥ २२½॥

ततस्ते तमसा सर्वे वृताश्चासन् महीपते॥ २३॥
नाभिमन्युमपश्यन्त नैव स्वान् न परान् रणे।

महीपते! तब वे समस्त पाण्डव सैनिक अन्धकारसे आच्छादित हो गये। अतः न तो रणक्षेत्रमें अभिमन्युको देख पाते थे और न अपने तथा शत्रुपक्षके सैनिकोंको ही॥

अभिमन्युश्च तद् दृष्ट्वा घोररूपं महत्तमः॥ २४॥
प्रादुश्चक्रेऽस्त्रमत्युग्रं भास्करं कुरुनन्दनः।
ततः प्रकाशमभवज्जगत् सर्वं महीपते॥ २५॥

यह भयंकर एवं महान् अन्धकार देखकर कुरु-कुलको आनन्दित करनेवाले अभिमन्युने अत्यन्त उग्र भास्करास्त्रको प्रकट किया। राजन्! इससे सम्पूर्ण जगत्में प्रकाश छा गया॥ २४-२५॥

तां चाभिजघ्निवान् मायां राक्षसस्य दुरात्मनः।
संक्रुद्धश्च महावीर्यो राक्षसेन्द्रं नरोत्तमः॥ २६॥
छादयामास समरे शरैः संनतपर्वभिः।

इस प्रकार महापराक्रमी नरश्रेष्ठ अभिमन्युने उस दुरात्मा राक्षसकी मायाको नष्ट कर दिया और अत्यन्त कुपित हो झुकी हुई गाँठवाले बाणोंद्वारा उसे समरभूमिमें आच्छादित कर दिया॥ २६½॥

बह्वीस्तथान्या मायाश्च प्रयुक्तास्तेन रक्षसा॥ २७॥
सर्वास्त्रविदमेयात्मा वारयामास फाल्गुनिः।

उस राक्षसने और भी बहुत-सी जिन-जिन मायाओंका प्रयोग किया, उन सबको सम्पूर्ण अस्त्रोंके ज्ञाता अनन्त आत्मबलसे सम्पन्न अभिमन्युने नष्ट कर दिया॥ २७½॥

हतमायं ततो रक्षो वध्यमानं च सायकैः॥ २८॥
रथं तत्रैव संत्यज्य प्राद्रवन्महतो भयात्।